डॉ. रवीन्द्र नाथ सिंह

सम्मतियाँ

लेखक का यह कार्य—"कम्ब-रामायण और रामचरितमानस के नारी-पात्र : एक तुलनात्मक अध्ययन" मानवीय चरित्र के अन्तर्पक्ष का उद्घाटन करता है। चरित्रों के अनुसंधान में जो विविधता लेखक के द्वारा उद्घाटित हुई है, साहित्य-जगत् में उसका आदर होना चाहिए। मैं लेखक को उसकी अन्तर्दृष्टि के लिए बधाई देता हूँ। उत्तर-दक्षिण के बीच भावनात्मक एकता एवं सांस्कृतिक सौहार्द की दिशा में इस ग्रंथ का विशेष महत्त्व होगा।

'साकेत' **डॉ० रामकुमार वर्मा**
४, प्रयाग स्ट्रीट, इलाहाबाद

महाकवि कम्बन की अमर कृति "कम्ब-रामायण" और गोस्वामी तुलसीदास की युगान्तरकारी रचना "रामचरितमानस" के नारी-पात्रों के सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक एवं हार्दिकतापूर्ण विवेचन का यह प्रयास स्वयं में ही एक उपलब्धि है। जिस पूर्वाग्रहरहित आत्मीयता एवं अंतर्दृष्टि से यह अध्ययन प्रस्तुत किया गया है, उससे इस प्रायद्वीप के दो साधकों की सांस्कृतिक गरिमा का गवेषणापूर्ण आकलन तो मिल ही जाता है, साथ ही तमिल जैसी प्राचीनतम भाषा के प्रति राष्ट्रभाषा हिन्दी के विनम्र सद्भाव और सौहार्द का स्वरूप भी परिलक्षित किया जा सकता है जिसके लिए प्रतिभाशील शोधार्थी निश्चय ही साधुवाद के पात्र हैं।

'समर्पण' **शिवमंगल सिंह 'सुमन'**
उदयन मार्ग (लिंक रोड), उज्जैन

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस के नारी-पात्रों के तुलनात्मक अध्ययन से लेखक ने वस्तुतः रामकथा के शोध को ही आगे नहीं बढ़ाया है, वरन् दो महान् कवियों द्वारा सृष्ट नारी-पात्रों को आमने-सामने रखकर, दो प्रदेशों में प्रतिष्ठा-प्राप्त नारी-सम्बन्धी मान्यताओं को भी उजागर किया है। दोनों रामायणों के कुछ तुलनात्मक अध्ययन पहले निकले हैं, पर एक सीमित विषय (नारी-पात्रों) का यह प्रथम अध्ययन है। इस सीमित किन्तु महत्त्वपूर्ण विषय के गंभीर अध्ययन के रूप में डॉ० रवीन्द्रनाथ सिंह का अध्ययन प्रशंसनीय है।

प्रो० एवं अध्यक्ष—हिन्दी विभाग, **एस० एन० गणेशन**
मद्रास विश्वविद्यालय, मद्रास

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस के नारी पात्र
एक तुलनात्मक अध्ययन

डॉ० रवीन्द्र नाथ सिंह

प्रकाशकीय

आधुनिक भारतीय भाषाओं के अध्ययन में तुलनात्मकता का असाधारण महत्त्व रहा है। उसके द्वारा एक नये युग का सूत्रपात हुआ है जिसमें लिपिभेद, प्रदेश-भेद और भाषाभेद के ऊपर उठकर देश की सांस्कृतिक एकता और साहित्यिक समृद्धि का नये रूप में दर्शन एवं आकलन हुआ है। उत्तर भारत में हिन्दी साहित्य का जैसा केन्द्रीय महत्त्व है, वैसा ही दक्षिण में तमिल साहित्य को मिला है। वस्तुतः तमिल की प्राचीनता और सांस्कृतिक समृद्धि किसी प्रकार संस्कृत और भाषा-साहित्य से कम नहीं है। जितना परिवर्तन भाषा और संस्कृत में उतर भारत में दिखाई देता है, उतना परिवर्तन दक्षिण भारत में प्रतीत नहीं होता, क्योंकि विदेशी आक्रमणों से दक्षिण भारत उतना आक्रान्त नहीं हुआ। इसलिए उत्तर और दक्षिण की तुलनात्मक स्थिति के लिए यह उचित ही हुआ कि तमिल की कम्ब रामायण और हिन्दी के गौरव-ग्रन्थ-रामचरितमानस की तुलना की गयी, विशेषतः नारी पात्रों को केन्द्र में रखकर।

आज के युग में नारी को नयी गरिमा प्राप्त हो रही है। मध्ययुगीन मान्यताओं से विद्रोह करके नारी की छवि नये रूप में उभारी जा रही है। जिन काव्य-ग्रन्थों द्वारा नारी-विषयक संवेदनाओं, परम्परित भावनाओं तथा पौराणिक कल्पनाओं का जीवन्त निरूपण हुआ है, उनके शोधात्मक अनुशीलन से पूरे देश की सांस्कृतिक चेतना को गति मिलेगी, इसमें कोई सन्देह नहीं।

डॉ० सिंह ने प्रो० बी० एस० रंगनाथन के निर्देशन में यह कार्य पूरी निष्ठा से हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय में आरम्भ किया जहाँ दोनों में गुरु-शिष्य सम्बन्ध स्थापित हुआ और आजीवन प्रगाढ़ होता गया। विभागाध्यक्ष के के नाते मैं स्वयं उस काल में दोनों से घनिष्ठ रूप में परिचित रहा। दक्षिण-यात्रा में मैं अवकाश-प्राप्त प्रोफेसर रंगनाथन के आवास पर भी गया। वे संस्कृत साहित्य के असाधारण विद्वान् थे और नैष्ठिक वैष्णव के रूप में उनकी छवि आज भी मेरे आगे सजीव दिखाई देती है। दुर्भाग्य से वे दक्षिण जाकर रोगग्रस्त होकर दिवंगत हो गये। किन्तु डॉ० रवीन्द्रनाथ सिंह का शोधकार्य पहले ही पूरा हो चुका था। आज वह होते तो उन्हें अतीव सुख होता। हिन्दुस्तानी एकेडेमी इसे प्रकाशित करने में अपना गौरव अनुभव करती है क्योंकि उत्तर और दक्षिण भारत की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक एकता में यह प्रकाशन निश्चय ही सहायक सिद्ध होगा। कम्ब-रामायण और रामचरितमानस की तुलना इस शोधकार्य से पूर्ण भी हुई है।

मद्रास के हिन्दी विभागाध्यक्ष प्रो० शंकर राजु नायुडू ने अपने लेखों एवं भाषणों में तुलनात्मक दृष्टि इस प्रकार अपनायी कि काव्य की मार्मिकता में उत्तर-दक्षिण का भेद तिरोहित हो गया। 'कम्बर और तुलसी' नामक लेख में उन्होंने लिखा है : राम-सीता के पूर्व राम का सुष्ठ चित्रण प्रथमतः 'कम्ब-रामायण' में ही प्राप्त होता है। 'कम्बन' के लिए 'कम्बर' शब्द भी प्रयुक्त होता रहा है। उनकी यह भी मान्यता है कि कम्बर का तुलसी पर यथेष्ट प्रभाव पड़ा है और कम्ब-रामायण तुलसी-कृत रामचरितमानस के आधार-ग्रन्थों मे से एक है। तुलसी और कम्बर के जीवन में अनेक प्रकार के साम्य निर्दिष्ट किये गये हैं जो उनके विकास-क्रम तथा संघर्षशील उपलब्धि को रेखांकित करते हैं; किन्तु अन्तर भी है, जैसे तुलसी को प्राकृत जन से सम्बद्ध काव्य प्रेरक नहीं था, किन्तु कम्बर ने अनेक राजदरबारों में राजाश्रय ग्रहण किया। रामचरितमानस: तुलनात्मक अध्ययन' नामक चतुष्शती की समिति द्वारा प्रकाशित ग्रन्थ में भारतवर्ष की समस्त मान्य भाषाओं से तुलनात्मक राष्ट्रीय अध्ययन किया गया है। रामचरितमानस और कम्ब-रामायण पर डॉ० रामेश्वरदयालु अग्रवाल ने विस्तृत लेख प्रस्तुत किया है जिसमें तुलसी और कम्बर दोनों की काव्य-प्रतिभा और रामभक्ति का व्यापक अनुशीलन किया गया है। सीता, तारा आदि नारी चरित्रों का भी मार्मिक निरूपण किया गया है। डॉ० सिंह ने अपने शोधकार्य को नारी-चरित्रों तक सीमित रखकर जैसा सूक्ष्म और विशद कार्य किया है, वह विशेष आशंसा का पात्र है।

मैं इस प्रकाशन को हिन्दुस्तानी एकेडेमी की उस योजना का सूत्रपात मानता हूँ जिसके अन्तर्गत हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के मूल ग्रन्थों के अनुवाद का प्रकाशन अभीष्ट है। इसके द्वारा तुलनात्मक अध्ययन की व्यापक नयी दिशाओं का उद्घाटन होगा। महामहिम उपराष्ट्रपति डॉ० शंकरदयाल शर्मा ने इसकी आवश्यकता पर उस समय विशेष बल दिया था जब उनके आवास पर हिन्दुस्तानी एकेडेमी ने राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के जन्म-दिवस को 'कवि-दिवस' के रूप में आयोजित किया था। उनका जन्म-दिवस उत्तर भारत ही नहीं, दक्षिण में भी मनाया गया और तमिलनाडु ने ही यह पहल की। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त उसी रामकाव्य-परम्परा के प्रमाण हैं जो वाल्मीकि, कम्बन और तुलसी में परिलक्षित होती है। देश की अस्मिता को पहचानने के लिए इस प्रकार का तुलनात्मक अध्ययन और प्रकाशन निश्चय ही स्वागत-योग्य सिद्ध होगा।

जगदीश गुप्त
सचिव

अस्मदीयम्

विश्व-वाङ्मय में भारतीय साहित्य एवं संस्कृति की अपनी जिन विशेषताओं के कारण अद्यावधि मूर्धाभिषिक्त स्थान प्राप्त करने का महनीय गौरव प्राप्त रहा है, उनमें भारतीय धर्म, दर्शन एवं उदात्त मानवीय मूल्यों का विशेष महत्त्व है। भारतीय साहित्य में इन सबका निरूपण प्रायः महापुरुषों की चरितात्मक कथा के पुष्पन, पल्लवन एवं उपबृंहण के माध्यम से होता रहा है, जिनमें मर्यादा-पुरुषोत्तम दाशरथि राम और लीला-पुरुषोत्तम वासुदेव कृष्ण की कथाएँ उत्तर वैदिक युग में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। राम भारतीय साहित्य एवं संस्कृति के यदि अथ-विन्दु हैं, तो वासुदेव कृष्ण उसके इति-विन्दु। यदि राम मर्यादा-पुरुषोत्तम हैं, तो कृष्ण लीला-पुरुषोत्तम। यदि प्रथम का आधार आदर्श है, तो द्वितीय का आधार व्यवहार; यदि प्रथम सिद्धान्त है, तो द्वितीय प्रयोग। यही कारण है कि मर्यादा एवं लीला, आदर्श एवं व्यवहार, सिद्धान्त एवं प्रयोग का युगपत समावेश होने के कारण भारतीय साहित्य विश्व-साहित्य में अपना प्रतिद्वन्दी नहीं रखता।

यद्यपि राम-कथा की त्रैलोक्यपाविनी देवापगा के कतिपय सीकर तो वैदिक हिमगिरि के विशाल अटवी में यत्र-तत्र अनुसंधित्सु को प्राप्त हो सकते हैं, किन्तु इसकी अविकल धारा राम-कथा के अमर गायक आदिकवि वाल्मीकि के रामायण-रूपी गंगोत्री से ही फूटती है, जो व्यास, कालिदास, भवभूति आदि संस्कृत-साहित्य की उर्वर वसुमती से होती हुई संस्कृतेतर पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, तमिळ, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, गुजराती, मराठी, बँगला, असमी आदि सभी भारतीय भाषाओं में तो अपनी उत्ताल तरंगों के साथ तरंगायित होती ही रही है। इसके अतिरिक्त बँगलादेश, नेपाल, बर्मा, कम्बोडिया, इण्डोनेशिया, सूरीनाम, मारीशस आदि भारतेतर देशों में भी न केवल राम-कथा साहित्य-धरातल पर उपलब्ध एवं प्रतिष्ठित रही है, अपितु वहाँ की साहित्यिक धरा को रचनात्मक दृष्टि से कृतार्थ करती हुई तत्तद्देशवासियों के मानस-पटल को परिप्लावित करती हुई उनके आचरण को भी राम के चरित्र से अनुप्राणित करती रही है।

राम-कथा को विश्व-साहित्य के धरातल पर प्रतिष्ठापित करके सर्वाधिक लोकप्रिय बनाने में भारतीय साहित्य के जिन अमर महाकवियों ने महनीय योगदान किया है, उनमें संस्कृतेतर तमिळ के कविपुरोधा महाकवि कम्बन तथा हिन्दी के सर्वाधिक लोकप्रिय, तत्त्वदर्शी, महामनीषी, लोकनायक, महाकवि तुलसीदास का

स्थान अप्रतिम है । यदि कम्बन समूचे दक्षिण भारत में प्रथित राम-कथा का प्रतिनिधित्व करते हैं, तो महामना तुलसीदास ने उत्तर भारत के लोक-मानस में परिव्याप्त कलिमलहारिणी राम-कथा-मंदाकिनी का प्रतिनिधित्व करती हुई अपनी अन्तःनीरा सरस्वती से उसे जो उदात्त, ललित, मोहक लोकप्रियता प्रदान की है, वह राम-कथा-मर्मज्ञ किसी भी कृती-सुधी से छिपा नहीं है । वस्तुतः भारतीय साहित्य एवं संस्कृति में जो कुछ उदात्त एवं शोभन है, ललित एवं मोहन है, आदर्श एवं व्यवहार्य है, सत्य एवं सुन्दर है तथाच परमशिवत्व से मंडित लोकमंगल का मूल है, वह सब कुछ कम्बन के कम्ब-रामायण एवं तुलसीदास के रामचरितमानस में एकसाथ अभिराम से अभिरामतर किंवा अभिरामतम रूप में उपन्यस्त हैं ।

प्रस्तुत ग्रन्थ से जहाँ एक ओर साहित्यिक दृष्टि से तमिळ एवं हिन्दी के भाषा एवं साहित्य को एक-दूसरे से विधिवत् सुपरिचित होकर सह-अस्तित्व के धरातल पर विकसित होने के लिए आत्मबल मिलेगा, वहीं दूसरी ओर सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से परस्पर एक-दूसरे की परम्पराओं, रीति-रिवाजों, आचारों-व्यवहारों, सांस्कृतिक मूल्यों आदि को भी यथावत् समझने का एक प्रामाणिक दस्तावेज मिलेगा। कहना न होगा कि इस ग्रन्थ से उत्तर-दक्षिण तथा पूर्व-पश्चिम में रागात्मक, भावनात्मक एवं पार्थिव सम्बन्धों में सुदृढ़ता आयेगी, जो भारतवर्ष की भावनात्मक एकता, अखण्डता, भाषायी सौहार्द को अक्षुण्ण तथा प्रबलतर बनाये रखने में अप्रतिम भूमिका का निर्वाह करेगा ।

प्रस्तुत ग्रंथ के लेखन एवं प्रकाशन में अद्यावधि जिन वरेण्य सारस्वत शुभैषियों का अविराम साहाय्य उपलब्ध हुआ है, उनमें स्मृतिशेष गो लोक-वासी प्रातर्वंद्य भारतीय समीक्षा-मनीषा के मानक प्रतिमान, संस्कृत-तमिल-हिन्दी तेलुगु-मलयालम-अंग्रेज़ी-षड्भाषा-षडानन, मूर्धाभिषिक्त साहित्यानुरागी, परमतत्त्वदर्शी दार्शनिक प्रो० वि० एस० रंगनाथन के शिष्य-वात्सल्य का हृदयेन कितना आभारी एवं ऋणी हूँ, इसे व्यक्त करने के लिए मेरे पास शब्द ही नहीं—'भावत जाय किंतु नहिं बरनी ।'

इनके अतिरिक्त परम श्रद्धेय पद्मभूषण डॉ० रामकुमार वर्मा, गुरुवर्य डॉ० जगदीश गुप्त, निवर्तमान अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, आदरणीय डॉ० शिवमंगल सिंह 'सुमन', प्रो० योगेन्द्रप्रताप सिंह, हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, डॉ० हरिशंकर मिश्र, प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, श्री हरिशंकर द्विवेदी 'अज्ञान', सम्पादक, 'अनुगमन', इलाहाबाद, डॉ० शेषनारायण त्रिपाठी, प्रयाग के प्रति हार्दिक आभार एवं सारस्वती कृतज्ञता ज्ञापन करना न केवल नैतिक धर्म समझता हूँ, अपितु यह मेरे सौभाग्य का एक महत्त्वपूर्ण अध्याय भी है, जिन्होंने मेरे अभिनव विकास का द्वार खोला है ।

दाक्षिणात्य मनीषियों में परम श्रद्धा-भाजन गुरुवर्य प्रो० पि० के० बालसुब्रह्मण्यन, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, मद्रास क्रिश्चियन कॉलेज, मद्रास, प्रो० एस० एन० गणेशन, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, मद्रास विश्वविद्यालय, डॉ० रवीन्द्र कुमार जैन, भूतपूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास, प्रो० एन० सुन्दरम् (अवकाश-प्राप्त), हिन्दी विभाग, प्रेसीडेंसी कॉलेज, मद्रास, डॉ० शशि मुदिराज, रीडर, हिन्दी विभाग, केन्द्रीय विश्वविद्यालय, हैदराबाद, डॉ० जयप्रताप मल्ल, भूतपूर्व वरिष्ठ प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, द० भा० हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास आदि विद्वज्जनों के प्रति श्रद्धा-सुमन अर्पित करने में मुझको अपार गौरव का अनुभव हो रहा है।

अथच हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद के अध्यक्ष डॉ० रामकुमार वर्मा, सचिव डॉ० जगदीश गुप्त एवं सहायक सचिव डॉ० रामजी पाण्डेय तथा माधो प्रिन्टर्स के व्यवस्थापक श्री राहुल सहाय बिसारिया, इलाहाबाद को प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन में रुचि लेने के लिए मैं हार्दिक आभार प्रकट करते हुए अपरिमित आत्मतोष का भी अनुभव कर रहा हूँ।

ज्येष्ठ पूर्णिमा
19-6-1989
प्रयाग

विनयानवत
रवीन्द्र नाथ सिंह

संकेत-सूची

मानस	—	रामचरितमानस
तुलसी	—	तुलसीदास
सं०	—	सम्पादक
प्रका०	—	प्रकाशक
प्र० सं०	—	प्रकाशन संस्करण
अनु०	—	अनुवादक
वा० रा०	—	वाल्मीकि रामायण
विनय०	—	विनयपत्रिका

विषयानुक्रमणिका

अध्याय : प्रथम

कम्बन और तुलसीदास : व्यक्तित्व और कृतित्व

कम्बन

व्यक्तित्व

हिन्दी साहित्य के तुलसीदास की तरह, तमिळ साहित्य के कम्बन, तमिळ-काव्य-गगन के देदीप्यमान नक्षत्र हैं। उत्तर भारत के रामकथा-साहित्य में श्रद्धा एवं लोकप्रियता के उत्तुंग शिखर पर तुलसीदास आसीन हैं, दक्षिण भारत में ऐसा ही सम्माननीय स्थान कम्बन का है।

"कवि तो बहुत हुए हैं, किन्तु ऐसे समर्थ कवि कम ही हुए हैं जिन्हें भाषा तथा राष्ट्र की समग्र सांस्कृतिक चेतना को अभिव्यक्ति देने की कला पर पूर्ण अधिकार प्राप्त होता है। कम्बन ऐसे ही तमिळ भाषा तथा राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना को मूर्त रूप देने वाले एक महान् कवि हैं। आज बीसवीं शताब्दी में भी तमिळ-साहित्य और तमिळनाडु में जो सर्वाधिक लोकप्रियता कम्बन या उनके महाकाव्य "कम्ब-रामायण" को प्राप्त है, वह उनके महनीय व्यक्तित्व का ही परिणाम है। कम्बन के व्यक्तित्व का मोहक जादू आज भी प्रत्येक तमिळभाषी के सिर पर चढ़कर बोलता है। कम्बन का स्थान तमिळ-साहित्य में अत्यन्त आदरणीय एवं महत्त्वपूर्ण है। कम्बन तमिळ-साहित्य में "कवि-चक्रवर्ती" के नाम से प्रसिद्ध हैं।"[1]

प्राय: यह परिपाटी रही है कि बहुधा प्राचीन भारतीय कविकोविद, महात्मा-महापुरुष अपने ग्रन्थों में आत्म-परिचय नहीं देते थे। आत्मोल्लेख के अभाव में उनके जीवन की घटनाओं की प्रामाणिकता आज भी विवाद का विषय है। यह विडम्बना कम्बन के सम्बन्ध में भी है जिसका प्रमुख कारण यह प्रतीत होता है कि प्राचीन महापुरुष-महात्मा अपने ऐहिक जीवन का परिचय अप्रकट ही रखना चाहते थे। कम्बन एक भक्त कवि थे; भक्त होने के कारण अपने आराध्यदेव के सम्मुख, वह अपना व्यक्तित्व प्रकाशित करना नहीं चाहते थे। वह स्वयं इसको शालीनता-मर्यादा के प्रतिकूल समझते थे। यही कारण है कि उनकी सर्वमान्य प्रामाणिक जीवनी आज तक अज्ञात है—और आज भी अनुसन्धान का विषय बनी हुई है।

---

१. दक्षिण भारत (त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका), दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास द्वारा प्रकाशित, जनवरी-मार्च, १९८६ अंक में प्रकाशित अनुसन्धाता का एक लेख; पृष्ठ ४३-४४।

कम्बन कब उत्पन्न हुए, इस विषय पर विद्वानों में मतैक्य नहीं है। यद्यपि उनके समय, जन्म-स्थान, कुल-गोत्र आदि के विषय में तमिळ विद्वानों में गम्भीर मतभेद है, तथापि तमिळभाषी कवियों में कम्बन शीर्षस्थ हैं—इस पर रंचमात्र भी सन्देह नहीं है। प्राचीन-अर्वाचीन सभी आलोचक उन्हें निश्चितरूपेण तमिळ भाषा-साहित्य का श्रेष्ठतम कवि मानते हैं।

अन्तःसाक्ष्य और बहिःसाक्ष्य के आधार पर आलोच्य कवि के जीवन-वृत्त की रूपरेखा इस प्रकार बनती है—

काल-निर्धारण

कम्बन का जन्म-काल सुनिश्चितरूपेण ज्ञात नहीं है। इस सन्दर्भ में विद्वानों में अत्यधिक मतभेद है। कुछ विद्वान् उन्हें ईस्वी नवीं शताब्दी का मानते हैं[1] जिसको वे प्रभावशाली ढंग से सिद्ध करते हैं।

एक अन्य मत के अनुसार "ग्यारहवीं शताब्दी में, चोलराजा द्वितीय कुळोत्तुंगन के समय में कम्बन ने रामायण के अमर काव्य की रचना की।"[2] कुछ विद्वानों के मत में कम्बन बारहवीं शती में विद्यमान थे।[3] इस प्रकार कम्बन के जन्म-काल के सम्बन्ध में विद्वानों में मतैक्य का अभाव है। उनका जन्म-काल नवीं, ग्यारहवीं एवं बारहवीं शताब्दी में विद्वानों द्वारा अपने-अपने ढंग से सिद्ध किया जाता है, किन्तु इनमें अपेक्षाकृत प्रामाणिक समय बारहवीं शताब्दी प्रतीत होता है।[4] प्रो० टी० पी० मीनाक्षिसुन्दरम्, तमिळ-विभागाध्यक्ष (भूतपूर्व), अन्नामळै विश्वविद्यालय, भी उक्त काल को प्रामाणिक मानते हैं जो सर्वापेक्षा समीचीन प्रतीत होता है।

कम्बन के जन्म-काल का पता नहीं, किन्तु उन्होंने अपने महाकाव्य की रचना ११७८ ई० में आरम्भ की।[5] उस समय वह चालीस वर्ष से कम आयु के नहीं रहे

---

१. कम्बन, एस० महाराजन, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, पृष्ठ ११।
२. तमिळ और उसका साहित्य, पूर्ण सोमसुन्दरम्, राजकमल प्रकाशन लि०, बम्बई, पृष्ठ ७०।
३. तमिळ साहित्य, दक्षिण भारत हि० प्र० सभा मद्रास द्वारा प्रकाशित, द्वितीय सं० १९६५, पृष्ठ १४१।
४. कम्ब-रामायण, भाग-एक, अनुवादक न० वी० राजगोपालन्, बिहार-राष्ट्र-भाषा-परिषद्, पटना : भूमिका, पृष्ठ च।
५. कम्ब-रामायण और रामचरितमानस, डॉ० रामेश्वरदयालु अग्रवाल, पृष्ठ ८४।

होंगे, क्योंकि आलोच्य ग्रन्थ जैसी प्रौढ़तम महाकाव्यकृति के प्रणयनहेतु आवश्यक बौद्धिक परिपक्वता, मर्मज्ञता एवं विद्वत्ता इससे कम आयु में सम्भव नहीं प्रतीत होती। फलतः कम्बन का जन्म ११३८ ई० के लगभग मानना असंगत न होगा।

अवसान-तिथि

कम्बन की अवसान-तिथि भी दुर्भाग्यवश निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है। इस सन्दर्भ में विभिन्न विद्वानों के विविध विचारों का अवलोकन करने पर यही समय अधिक तर्कसम्मत प्रतीत होता है जिसके अनुसार आलोच्य कवि की मृत्यु ११९७ ई० में मानी गयी है। इस मत का समर्थन श्री० का० सुब्रह्मण्य पिळ्ळै के पूर्वोद्धृत मत से भी होता है। डॉ० रामेश्वरदयालु अग्रवाल को भी यही तिथि मान्य है।[1]

जन्म-स्थान

आलोच्य कवि का जन्म तमिळनाडु के तंजौर जिले में तिरुवेण्णैनळ्ळूर नामक ग्राम में हुआ था। तंजौर जनपद में यह गाँव मायवरम् स्टेशन से छह मील दूर स्थित है। कम्बन तंजौर जिले में तिरुवेण्णैनळ्ळूर ग्राम के निवासी थे और शडयप्प-वळ्ळर नामक एक जमींदार उनका महान् प्रशंसक और संरक्षक था। कम्बन की प्रतिभा को पल्लवित-पुष्पित होने के लिए इस महापुरुष ने इनको उपयुक्त वातावरण प्रदान किया। तमिळ-साहित्य इसके लिए इस महापुरुष का भी ऋणी है।[2]

माता-पिता और वंश

कम्बन के माता-पिता के विषय में कोई सर्वमान्य प्रमाण नहीं मिलते।[3] कुछ विद्वानों के अनुसार कम्बन के पिता का नाम आदित्यन था जो कि तिरुवेण्णैनळ्ळूर के समीपस्थ मूवळूर नामक ग्राम के निवासी थे, किन्तु मातृनाम ज्ञात नहीं है।[4]

कम्बन के वंश-सम्बन्ध में भी निश्चितरूपेण कुछ भी ज्ञात नहीं है। कुछ विद्वान् उन्हें उवच्चन् (तमिळनाडु की एक ब्राह्मणतेर जाति, जो अधिकतर काली-

---

१. कम्ब-रामायण और रामचरितमानस—डॉ० रामेश्वरदयालु अग्रवाल, पृष्ठ ९२।
२. दक्षिण भारत (साहित्यिक पत्रिका), त्रैमासिक, जनवरी-मार्च १९८६ अंक, अनुसन्धाता का एक लेख, पृष्ठ ४५।
३. दक्षिण भारत, (साहित्यिक त्रैमासिक पत्रिका), अनुसन्धाता का एक लेख, पृष्ठ ४५।
४. कम्ब-रामायण और रामचरितमानस, डॉ० रामेश्वरदयालु अग्रवाल, पृष्ठ ८४।

मन्दिर में पुजारी का कार्य करती है।) और कुछ विद्वान् बेळाळर् (खेतिहर या कृषिजीवी वर्ग) मानते हैं। जन्म से कुछ ही क्षण बाद इस महाकवि को माता-पिता की सुखद स्नेहिल छाया से भाग्य ने वंचित कर दिया। फलतः पालन-पोषण तिरुवेण्णैनळ्ळूर के एक निःसंतान उवच्चन्-दम्पति द्वारा सम्पन्न हुआ।

जगवीर पाण्डियनार् नामक एक तमिळ विद्वान् ने कम्बन के जीवनवृत्त का उल्लेख इस प्रकार किया है—

कम्बन पेरुमान् वीरवर्मन् नामक एक छोटे भू-स्वामी के पुत्र थे। वीरवर्मन् को उनके शत्रुओं ने षड्यन्त्र रचकर मार डाला। उनकी पत्नी अम्बिका उस समय पूर्ण गर्भिणी थीं। उन्होंने वहाँ से रात्रि के समय निकलकर पलायन किया। वह अगले दिन रात्रि के समय तिरुवैण्णैनळ्ळूर नामक गाँव के काली-मन्दिर के सम्मुख पहुँचीं। वहीं पर उनको प्रसव-वेदना हुई और उन्होंने एक पुत्र-रत्न को जन्म दिया। वहाँ से येनकेन-प्रकारेण उठकर पुत्र को काली देवी के सम्मुख रखकर, थोड़ी दूर जाकर उन्होंने प्राण त्याग दिये। प्रातःकाल उस काली-मन्दिर के निःसन्तान पुजारी ने बच्चे को देखा और उस शिशु को देवी का प्रसाद समझकर अपनी पत्नी को दिया। पुजारी का नाम **"आदित्यन"** था और वह **"उवच्चन्"** जाति का था। इस प्रकार कम्बन का पालन-पोषण उसी उवच्चन्-दम्पति ने किया।[1]

नाम तथा गुरु

तमिळ आचार्यों का मानना है कि यह नाम (कम्बन) उनके माता-पिता द्वारा प्रदत्त है। इस सम्बन्ध में कुछ विद्वानों की यह भी धारणा है कि उनके माता-पिता द्वारा प्रदत्त नाम किन्हीं विशेष कारणों से प्रचलन में नहीं आया। इस महाकवि के नाम के सम्बन्ध में अत्यन्त रोचक किंवदन्तियाँ हैं—दक्षिण भारत में यह एक परम्परा-सी है कि बच्चों का नामकरण अधिकांशतः भगवान् के नाम पर किया जाता है। भगवान् नृसिंह का अवतार खम्बा से हुआ था। इसलिए उनको (भगवान नृसिंह को) "खम्बम्" या कम्बम्[2] कहा जाता है। उनके उपासक होने के कारण इस कवि का नामकरण भी "कम्बम् से आविर्भूत" नृसिंह भगवान् के नाम पर "कम्बम्" का पुंलिंग एकवचन "**कम्बन**" हुआ। इस सम्बन्ध में तमिळ आचार्यों का यह भी मत है कि वह अपने घर में सर्वदा एक "कम्बम्" (खम्बा) के समीप बैठकर लिखते-पढ़ते रहते थे। इससे उनका नाम "कम्बन्" पड़ा। इसी कवि ने बाद में रामायणम् या कम्ब-रामायण के रचयिता के रूप में अप्रतिम ख्याति अर्जित की। इनके गुरु के सम्बन्ध में कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होता है।

१. कम्बन् कळै निळै, खण्ड एक, पृष्ठ ३३।
२. तमिळ में "ख" को भी "क" ही कहा जाता है।

कृतित्व

दक्षिण भारत में चार प्रमुख भाषाएँ—तमिळ, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम हैं। द्रविड़ भाषा-परिवार की भाषाओं (तमिळ, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम) में तमिळ सबसे प्राचीन भाषा है जिसका साहित्य अत्यन्त समृद्ध है। दक्षिण भारत की इन भाषाओं में तमिळ का स्थान विशेष महत्त्वपूर्ण है। इस परिवार की भाषाओं में तमिळ ही एकमात्र ऐसी भाषा है जो बिना संस्कृत शब्दों की सहायता से पूर्ण अभिव्यंजना की क्षमता रखती है। तमिल ही एकमात्र ऐसी भाषा है जिसका व्याकरण विश्व की किसी भी अन्य भाषा पर आधारित नहीं है। इसमें सूक्ष्म से सूक्ष्म भावों—विचारों को व्यक्त करने वाले शब्द विद्यमान हैं। कुछ विद्वान् इसे प्राचीन वैदिक संस्कृत की तरह प्राचीन मानते हैं। कम्बन इसी अति प्राचीन भाषा के एक महान् कवि हैं।

रचनाएँ

कम्बन की रचनाओं के नाम अग्रलिखित हैं—

१. शठकोपरन्तादि

२. एरेळुपदु

३. सरस्वतीअन्तादि

४. शिळैएळुपदु

५. रामावतारम् या रामायणम् कम्ब-रामायण

१. शठकोपरन्तादि

रामानुज सम्प्रदाय के एक अति प्रख्यात आचार्य एवं मूर्धन्य विद्वान् शठकोपर थे। ये रामानुज सम्प्रदाय के प्रवर्तक थे। उन्हें अयोनिज भी कहा जाता है। उनके सम्बन्ध में एक किम्वदन्ती है कि यह तिरुनेळ्ळवेळि जनपदस्थ तिरुक्कुरुकुंडि ग्राम में एक इमली के वृक्ष पर रहते थे। श्री शठकोपर स्वामी एक हजार पद्यों से संयुक्त "सामवेद-सार" ग्रन्थ माना जाता है। शठकोपर स्वामी ने "तिरुवाय्मोळि" ग्रन्थ में अपने को प्रेमिका एवं भगवान् को प्रेमी के रूप में वर्णन किया है। इस ग्रन्थ में शठकोपर स्वामी ने एक ओर विरहिणी नायिका के हृदय का सुन्दर, सजीव तथा मनोवैज्ञानिक वर्णन किया है, तो दूसरी ओर लौकिक प्रेम के माध्यम से पारलौकिक प्रेम का सुन्दर चित्रण किया है। इसमें रामानुज-वेदान्त-दर्शन के तत्त्व सुन्दर रूप में मिलते हैं। वह एक वैष्णव विद्वान् एवं आचार्य थे। अतः कम्बन ने इनके प्रति श्रद्धा व्यक्त करते हुए यह ग्रन्थ उन्हीं की प्रशंसा में लिखा है।

तमिळ भाषा के लघु-काव्य को छियानबे (९६) प्रकारों में विभक्त किया गया है—इन छियानबे प्रकारों में एक प्रकार "अन्तादि" भी है।

"अन्तादि" का अर्थ होता है—एक पद का अन्त जिस शब्द अथवा अक्षर से हो, अगले पद का आरम्भ उसी अन्त के शब्द या अक्षर से होना चाहिए। कम्बन की यह रचना इसी कोटि में आती है। कम्बन ने इस रचना के माध्यम से शठकोपर स्वामी के प्रति अपनी श्रद्धा एवं भक्ति अर्पित की है। उन्हीं के नाम पर कवि ने अपनी इस रचना का नामकरण "शठकोपरन्तादि" किया है।

२. एरेळुपदु

एर् का अर्थ है हल, तथा एळुपदु का अर्थ है सत्तर। अर्थात् हल के सम्बन्ध में सत्तर पद्यों वाला छोटा खण्डकाव्य। ऐसा भी कहा जाता है कि कम्बन एक कृषक-परिवार के थे। अतः इन सत्तर पदों वाली अपनी इस रचना में कवि ने हल से सम्बन्धित अर्थात् कृषक, कृषिकार्य एवं कृषि का वर्णन किया है।

३. सरस्वतीअन्तादि

प्रस्तुत रचना में कवि ने सरस्वती जी की महिमा का वर्णन किया है जिसमें एक पद्य के अंतिम अक्षर से अगला पद्य प्रारम्भ होता है। कवि ने इसमें अपनी प्रतिभा के लिए सरस्वती जी से प्रार्थना की है।

४. शिळैएळुपदु

कम्बन की चौथी रचना है—शिळैएळुपदु।

उपर्युक्त रचनाएँ कम्बन-प्रणीत हैं। कम्ब-रामायण के रचनाकार कम्बन ही हैं—इस विषय पर किसी को सन्देह नहीं है, किन्तु 'सरस्वतीअन्तादि', 'शिळैएळुपदु', 'एरेळपदु', 'शठकोपरअन्तादि' के लेखक कम्बन ही हैं—इस विषय पर विद्वानों में गम्भीर मतभेद है। कम्ब-रामायण की भाषा-शैली, उपमा, उपमान, सुन्दर चित्रण एवं काव्य-सौन्दर्य से तुलना करने पर इन ग्रन्थों का स्तर निम्न सिद्ध होता है। अतः इनके लेखक कम्बन ही हैं, इसमें सन्देह भी होता है।

५. रामायणम् या रामावतारम् (कम्ब-रामायण)

तुलसीदास का रामचरितमानस हिन्दी साहित्य का सर्वोत्कृष्ट महाकाव्य है, इसी प्रकार कम्बन के महाकाव्य—'कम्ब-रामायण' का भी तमिळ साहित्य की राम-काव्यधारा में कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं है। उत्तर भारत में सामान्य झोंपड़ी से लेकर गगनचुम्बी अट्टालिकाओं तक तुलसीदास तथा उनके महाकाव्य 'रामचरितमानस'

को श्रद्धा तथा आदर प्राप्त है, यही स्थिति दक्षिण भारत में कम्बन तथा उनके महाकाव्य—'कम्ब-रामायण' की है।

कम्बन को रामचरित से असीम प्यार था। इसलिए उन्होंने 'रामायणम्' या उनके कथनानुसार 'रामावतारम्' की रचना प्रारम्भ की और उन्होंने इस कृति में राम के अयोध्या लौटने और राज्याभिषेक तक की कथावस्तु ग्रहण की। उत्तरकाण्डम् के बारे में कहा जाता है कि या तो यह ओट्टक्कूत्तनार का लिखा हुआ है या फिर कम प्रसिद्ध कवि वाणिदासन या वाणियन तादन का।[1]

'रामावतारम् या कम्ब-रामायण' तमिळ साहित्य का सर्वोत्कृष्ट एवं वृहद् ग्रन्थ है। तमिळ, हिन्दी, अंग्रेजी आदि के अच्छे विद्वान् श्री वी० वी० एस० अय्यर ने लिखा है—'यह कम्ब-रामायण विश्व-साहित्य में उत्तम कृति है इलियट, पैरडाइज-लास्ट और महाभारत से ही नहीं, वरन् मूल काव्य वाल्मीकि-रामायण की तुलना में भी यह अधिक सुन्दर है। यह केवल आदरातिरेक से कही हुई उक्ति नहीं है, वरन् अनेक वर्षों तक किये गये गहन अध्ययन से धीरे-धीरे पुष्ट हुआ विचार है।"[2]

महान् काव्य-मर्मज्ञ एवं बहुभाषाविद् स्वर्गीय श्री व० वे० सुब्रह्मण्य अय्यर ने कम्बन और वाल्मीकि की रचनाओं का तुलनात्मक विवेचन अत्यन्त गवेषणापूर्वक करके यह सिद्ध किया है कि कई प्रसंगों में कम्बन, वाल्मीकि से कहीं आगे बढ़ गये हैं।[3]

कम्ब-रामायण छह काण्डों बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड अरण्यकाण्ड, किष्किन्धा-काण्ड, सुन्दरकाण्ड और युद्धकाण्ड में विभक्त है। यदि बालकाण्ड में हमें कलात्मक दृष्टि से ध्वनि-सौन्दर्य एवं वर्णन-चातुर्य प्राप्त होता है, तो अन्य काण्डों में भी ये विशेषताएँ पायी जाती हैं, परन्तु कवि मानव-हृदय के उद्गार, उल्लास, तड़पन, व्यथा-क्रन्दन के चित्रांकन के प्रति सचेष्ट है। कवि की प्रतिभा विकसित होकर प्रौढ़ से प्रौढ़तर होती गयी है।

कम्ब-रामायण कम्बन के जीवन भर के परिश्रम का सुफल है। यह महाकाव्य अपनी प्रबन्धात्मकता, मार्मिक प्रसंग-विधान, सांस्कृतिक गरिमा-गुरुता, सरस सम्वादों की सुन्दर योजना, गम्भीर भाव-प्रवाह, सरस घटना-संघटन, आलंकारिकता,

---

१. चोलवंश, के० ए० नीलकण्ठ शास्त्री, प्रकाशन वर्ष १९७९, पृष्ठ ५२०।

२. 'भारतीय साहित्य दर्शन—तमिळ साहित्य', दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास, द्वि सं० १९६५, पृष्ठ १४२।

३. तमिळ और उसका साहित्य, पूर्ण सोमसुन्दरम्, पृष्ठ ७२।

उन्नत कलात्मकता आदि से सम्पन्न होने के कारण कम्बन की अमर कृति है। इस प्रकार काव्य-कला और सौन्दर्य-कला की दृष्टि से भी आलोच्य ग्रन्थ तमिळ साहित्य का श्रेष्ठतम महाकाव्य है। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण यह महाकृति विश्व-साहित्य की अमूल्य निधि है।

वाल्मीकि, व्यास, कालिदास और तुलसीदास की कविता-सदृश कम्बन की कविता भी शक्तिशाली और महनीय चरित्रों की सृष्टि करने में सर्वथा सफल है। सुकुमारता के साथ सुशीलता का, मानसिक मृदुता के साथ विपुल वैराग्य का, सौन्दर्य के साथ धर्म का—ऐसा मणिकांचन योग विश्व-साहित्य में विरल है। आलोच्य ग्रन्थ काव्य सृष्टि, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और कल्पना के आनन्दों के ताने-बाने से निर्मित है जिसमें कवि ने भावात्मक, बौद्धिक, रसात्मक आदर्श के अत्यन्त मनोज्ञ सुमन प्रफुल्लित किए हैं। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण इस महाकाव्य को दक्षिण में झोंपड़ी से लेकर नभचुम्बी अट्टालिकाओं तक श्रद्धा एवं आदर प्राप्त है।[१]

'आलोच्य ग्रन्थ' में कम्बन की प्रतिभा ने भक्ति, दर्शन, धर्म और नीति की भावधारा में अपने को समन्ततः परिलुप्त कर मानव-चरित्र के उस रूप पर प्रकाश डाला है जिसके दर्शन मात्र से लोक में शिवत्व की सम्भावना की जा सकती है। इसमें कम्बन कवि और उपदेशक दोनों ही रूपों में विद्यमान हैं। इस महाकाव्य में जहाँ एक ओर मंगलकारी अनुभूतियों का समावेश है, तो दूसरी ओर जनमानस को दिव्य और पावन भावभूमि पर पहुँचाकर रसावबोध कराने की अद्भुत क्षमता भी विद्यमान है। इसमें कवि ने दक्षिण भारत की चिन्तन-दृष्टि आचरण, सौन्दर्यवाद और धार्मिक प्रवृत्तियों को मूर्त रूप दिया है।[२]

कम्ब-रामायण तमिळ साहित्य का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है।[३] कम्बन ने अपने पूर्ववर्ती कवियों की रचना-शैली, शिल्प-विधान आदि को निःसंकोच अपनाया है, यद्यपि इनके महाकाव्य की कथावस्तु वाल्मीकि-रामायण पर आधारित है। यही नहीं, घटनाओं और प्रसंगों का क्रम भी वाल्मीकि-रामायण का ही है, तथापि वाल्मीकि-रामायण की नींव पर कम्बन ने जो काव्य-मन्दिर निर्मित किया है, उसकी अधिकांश शिल्पकारिता उनकी मौलिक है। इस काव्य-मन्दिर का सम्पूर्ण विभित्तिफलक विविध प्रकार के रंग-बिरंगे चित्रों तथा मूर्तियों से अलंकृत है। कम्बन की तूलिका

---

१. दक्षिण भारत, त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका (४२), जनवरी-मार्च १९८६, द० भा० हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास से प्रकाशित (अनुसंधाता का ही लेख), पृष्ठ ४७।
२. उपर्युक्त, पृष्ठ ४८।
३. चोलवंश, के० ए० नीलकंठ शास्त्री, प्र० संस्करण १९७६, पृष्ठ ५१९।

ने इन चित्रों में जिन दिव्य-अनुपम रंगों का प्रयोग किया है, उसकी प्रमुख विशेषता है कि वे कभी धूमिल नहीं पड़ते, प्रत्येक चित्रमूर्ति के अंग-प्रत्यंग को कुशल शिल्पी कम्बन ने इस प्रकार के ढाँचे में ढाला है कि 'जहाँ जाइ मन तहंइ लोभाई' की उक्ति यहीं पर चरितार्थ होती है। परिस्थितियों के प्रस्तुतीकरण, घटनाओं के चित्रण, पात्रों के सम्वाद तथा उनकी मनोभावनाओं की अभिव्यक्ति इत्यादि में सैकड़ों परिवर्तन कवि की मौलिकता के प्रमाण हैं। ये परिवर्तन वाल्मीकि से सर्वथा भिन्न हैं। इसी प्रकार ताड़का-कथा, सीता-राम-विवाह, शूर्पणखा-प्रसंग, परशुराम-प्रसंग, सीता-हरण-विधि, बालि-वध, इन्द्रजीत-वध, राम-रावण-युद्ध इत्यादि प्रसंग अपनी विशिष्टतम सुन्दरता के कारण अत्यन्त आकर्षक एवं रोचक हैं। प्रत्येक में प्रचुर नाटकीयता है। घटना का आरम्भ, पल्लवन और समापन एक सुनिश्चित क्रम से होता है—ये दृष्टान्त कम्बन की मौलिकता सिद्ध करते हैं। अतः कम्ब-रामायण को वाल्मीकि-रामायण का छायानुवाद कहना या मानना तर्कसंगत प्रतीत नहीं होता।[1]

कम्बन की कम्ब-रामायण दश हजार पाँच सौ (१०,५००) वृत्त-कविताओं (छन्दों) से निर्मित है। विद्वानों के मतानुसार इनमें से लगभग दो हजार वृत्त क्षेपक हैं। इनको अगर छोड़ दिया जाय, तो शेष आठ हजार पाँच सौ कविताओं में गंगा-का-सा प्रवाह पाया जाता है।[2] कुछ विद्वानों के अनुसार 'रामायणम्' के कुछ पद्यों की भाषा-शैली एवं साहित्यिक स्तर अन्य पद्यों की भाषा-शैली एवं साहित्यिक स्तर जैसा नहीं है। इसी आधार पर कुछ विद्वान् लगभग दो हजार पद्यों को क्षेपक मानते हैं। इन विद्वानों के मत के प्रतिकूल **श्री टी० के० चिदम्बरनाथ मुदलियार** तो मात्र दो हजार पद्यों को ही कम्बन-प्रणीत मानते हैं, शेष आठ हजार पाँच सौ पद्यों को वह क्षेपक मानते हैं, किन्तु इनके मत का समर्थन नहीं के बराबर है। 'रामायणम्' के आठ हजार पाँच सौ पद्यों को क्षेपक मानना तर्कसंगत नहीं प्रतीत होता, क्योंकि इसमें कुछ ही पद्य सामान्य स्तर के प्रतीत होते हैं जिनकी संख्या दो हजार तक मानी जा सकती है, अन्यथा शेष पद्यों का स्तर भाषा-शैली एवं सौन्दर्य निःसन्देह उच्चकोटि का है। अतः दो हजार से अधिक पद्यों को क्षेपक मानना तर्कसम्मत नहीं प्रतीत होता।

तमिळ साहित्य का प्रारम्भ संघ-साहित्य से होता है। अधिकांशतः संघ-साहित्य आशीरियप्पा छन्द में लिखा गया है। तिरुत्तक्कदेवर नामक एक जैन कवि ने कम्बन के पूर्व वृत्त छन्द में 'जीवक चिन्तामणि' नामक महाकाव्य लिखा है। यह

---

१. दक्षिण भारत, हि० प्र० स०, मद्रास, अंक ४२, पृष्ठ ४७।
२. तमिळ और उसका साहित्य, पूर्ण सोमसुन्दरम्, पृष्ठ ७२।

वृत्त छन्दों में लिखा गया प्रथम महाकाव्य है जो तमिळ के 'पंच महाकाव्यों' में एक है। कम्बन का 'रामायणम्' भी वृत्त छन्दों में लिखा गया है। बहुत सम्भव है कि कम्बन को वृत्त छन्दों में काव्य-प्रणयन की प्रेरणा इसी 'जीवक चिन्तामणि' से मिली हो।

कम्बन के भी एक समसामयिक तमिळ भाषा के विद्वान् तथा शैव भक्त और कवि शेक्किलार थे। वह एक राजा के यहाँ मंत्री थे। जैनियों द्वारा हिन्दू धर्म का विनाश देखकर इस महापुरुष ने हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए 'पेरियपुराणम्' की रचना की। इसमें उन्होंने चौंसठ शैव सन्तों के चरित्र का वर्णन किया है। यह महाकाव्य भी वृत्त छन्दों में निबद्ध है। शैव इस महाकाव्य को कम्बन पूर्व लिखा हुआ मानते हैं। अगर उसको सच मान लिया जाय, तो कम्बन को इस महाकाव्य से कुछ न कुछ प्रेरणा अवश्य मिली होगी जिसके आधार पर उन्होंने कम्ब-रामायण की रचना वृत्त छन्दों में की, किन्तु वैष्णव आचार्यों का मत है कि कम्ब-रामायण 'पेरियपुराणम्' से पूर्व काल की रचना है।

कम्ब-रामायण का तमिळ जनता की का यानुभूति पर अति गहन प्रभाव है। कम्बन-काल से अद्यतन विद्वानों की एक लम्बी शृंखला है जो कि प्रवचनों, गोष्ठियों, समारोहों एवं मेलों के द्वारा जन सामान्य को, इस कथा के माध्यम से भाव-विभोर करती रही है। केरल, कर्नाटक और आन्ध्र प्रदेश स्थित समीपवर्ती क्षेत्रों के शिलालेख यह बतलाते हैं कि 'रामावतारम्' का प्रचार-प्रसार उन क्षेत्रों के लोगों में भी था जिनकी मातृभाषा तमिळ नहीं थी। इस संदर्भ में इन दो प्रसंगों का उल्लेख प्रासंगिक प्रतीत होता है—

कम्ब रामायण तमिळनाडु में ही नहीं, अपितु मलयालम भाषी राज्य केरल में भी लोकप्रिय रहा है। वहाँ पर आज से अर्द्धशती पूर्व विविध प्रकार के धार्मिक आयोजनों, समारोहों, शुभ अवसरों पर कम्ब-रामायण का पाठ-प्रवचन होता रहा है। इसके लिए तमिळ एवं मलयालम, दोनों भाषाओं के किसी आचार्य को बुलाकर यह कार्य सम्पन्न होता था। ये आचार्य तमिल भाषा में लिपिबद्ध कम्ब-रामायण के पद्यों को पढ़कर उसकी व्याख्या मलयालम भाषा में करके, मलयालम भाषी जन-समुदाय को इससे आनन्दित कराते रहे। तमिळ भाषा के अतिरिक्त अन्य भाषा-भाषी राज्यों में भी, अपने धार्मिक ग्रन्थों सदृश इसकी कथा सुनने की उत्कंठा तथा उसके प्रति आदर से, कम्ब-रामायण की जनप्रियता ही सिद्ध होती है।

तमिळनाडु के तंजौर जिले के तिरुप्पनन्ताळ नामक गाँव में एक अति-प्राचीन तथा बहुत ही प्रसिद्ध शैव मठ है। काशी (वाराणसी) के केदारघाट पर इस मठ की एक बहुत ही प्राचीन शाखा 'कुमार स्वामी मठ' है। इस मठ का अति

प्राचीन नियम है जो आज प्रथा-सदृश है····यहाँ पर नियमित रूप से प्रतिदिन सायं-काल कम्ब-रामायण की कथा हिन्दी में कही जाती है। किम्वदन्ती है कि तुलसीदास भी इस प्रवचन को सुनने आते थे। इस आधार पर कुछ विद्वान् तुलसीदास को कम्बन से प्रभावित मानते हैं, किन्तु इसकी प्रामाणिकता संदिग्ध है। केरल में कम्ब-रामायण की कथा सुश्रूषु जनों द्वारा तमिळ आचार्यों का बुलाया जाना तथा काशी में विशाल श्रोता समुदाय के समक्ष इसका प्रवचन होना निर्विवाद सत्य है, इससे इस महाकाव्य की महनीयता एवं लोकप्रियता सिद्ध होती है।

आलोच्य ग्रन्थ का रचना-काल

कम्बन के जीवन-काल के सम्बन्ध में अत्यधिक मतभेद है, किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह ओट्टक्कूत्तनार और शेक्किलार के कनिष्ठ समकालीन थे या उनके जीवन-काल के ठीक बाद उनका जीवन-काल शुरू हुआ।[१]

'मरुत्तुमळैप्पळलम्', ५८; कम्बन की जन्म-तिथि के सम्बन्ध में दो परम्परागत छन्द हैं, इनमें से एक में उनकी जन्म-तिथि शक ८०७ और दूसरे में शक ११०० दी गयी है। इसमें पूर्व तिथि एक अप्रमाणिक दन्तकथा पर आधारित है कि 'रामायणम्' का प्रकाशन श्रीरंगम् मन्दिर में नाथमुनि की अध्यक्षता में हुआ था।[२] किन्तु इस तथ्य का उल्लेख न तो 'दिव्यसूरिचरित' में किया गया है, न ही 'गुरुपरम्परा' में। आर० राघव अय्यंगर का मत है कि उनकी जन्म-तिथि शक ८०७ नहीं है, अपितु वस्तुतः यह १०७ है जिसमें से हजार का अंक एक छूट गया है, अर्थात् यह ११०७ है।[३] और ऐसा मान लेने पर दोनों छन्दों का अर्थ सही हो जाता है। एस० वैयापुरि ने इसे स्वीकार कर लिया है।[४] वह कहते हैं कि यह कविता ११८५ में कुलोत्तुंग तृतीय के शासन-काल में प्रकाशित की गयी थी।[५]

कम्बन के जन्म-काल का पता नहीं, किन्तु उन्होंने अपने महाकाव्य की रचना ११७८ ई० में आरम्भ की।[६] विद्वानों के बहुमत द्वारा कम्ब-रामायण का यही रचनाकाल माना जाता है। अनुसन्धाता को भी यही तिथि अधिक युक्तियुक्त प्रतीत होती है। उस समय वह चालीस वर्ष से कम आयु के नहीं रहे होंगे,

---

१. चोलवंश, के० ए० नीलकंठ शास्त्री, पृष्ठ ५२०।
२. शेन तमिळ, XXV, पृष्ठ ३०८-९।
३. शेन तमिळ, III, पृष्ठ १७६।
४. तमिळच्-चुडमणिगळ, पृष्ठ १३०।
५. चोल वंश, के० ए० नीलकंठ शास्त्री, पृष्ठ ५३४-३५।
६. कम्ब-रामायण और रामचरितमानस, डॉ० रामेश्वरदयालु अग्रवाल, पृष्ठ ८४।

क्योंकि आलोच्य ग्रन्थ जैसे महाकाव्य की रचना हेतु आवश्यक बौद्धिक परिपक्वता, मर्मज्ञता एवं विद्वता इससे कम आयु में सम्भव नहीं। फलतः कम्बन का जन्म ११३८ ई० के लगभग मानना असंगत न होगा।

आधार-ग्रन्थ

कम्ब-रामायण का मूल आधार वाल्मीकि रामायण ही है; यह कवि के स्वोक्ति-कथन से भी सिद्ध होता है—

> தேவ பாடையி னிக்கதை செய்தவர்
> மூவ ரானவர் தம்முளு முந்திய
> நாவி னானுரை யின்படி நான்றமிழ்ப்
> பாவி னாலிது வுணர்த்திய பண்பரோ.

अर्थात् देववाणी (संस्कृत) में जिन तीन महापुरुषों (वाल्मीकि, वसिष्ठ और बोधायन) ने रामायण की रचना की है, उनमें प्रथम कवि वाग्मी (वाल्मीकि) महर्षि की रचना के अनुसार ही मैंने तमिळ-पद्यों में यह रामायण महाग्रन्थ लिखा है।[१]

कम्बन के रामायणम् (कम्ब-रामायणम्) का मूलाधार वाल्मीकि रामायण ही है, तथापि कम्बन ने कुछ स्थलों पर; घटनाओं का प्रस्तुतीकरण वाल्मीकि-रामायण से भिन्न रूपों में किया है। सम्भव है कि इन तीन महापुरुषों में दो अन्य महापुरुषों की रचनाएँ कम्बन के रामायणम् की भिन्न घटनाओं के प्रस्तुतीकरण का आधार हों, किन्तु यह पूर्णरूप से विश्वासपूर्वक नहीं कहा जा सकता। वाल्मीकि-रामायण का कुछ वर्णन तमिळ संस्कृति एवं मान्यताओं के प्रतिकूल (रावण द्वारा सीता के केशों सहित मस्तक को पकड़ना तथा दाहिना हाथ उनकी जाँघों के नीचे लगाकर उठाना,[२] पूर्वोक्त रूप से गोद में उठाकर रथ पर बिठाना,[३] रावण द्वारा

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, पायिरम्, श्लोक सं० १०।
२. वा० रा० ३/४९/१७।
३. वा० रा० ३/४९/२०।

सीता को गोद में लिए पृथ्वी पर गिर पड़ना,[1] सीता को गोद में ही ले जाना,[2] विवाह के पूर्व ही कम्बन द्वारा सीता-राम के प्रेम का वर्णन आदि अनेक प्रसंग वाल्मीकि-रामायण से भिन्न) हैं। कम्बन ने तमिळ जनता की मान्यताओं के अनुसार परिवर्तन करके रामकथा को प्रस्तुत किया है। कथा को अधिक जनप्रिय बनाना तथा वह जनता के लिए रुचिकर भी हो; कथा-परिवर्तन के मूल में कवि का यही दृष्टिकोण प्रतीत होता है।

आलोच्य ग्रन्थ के प्रणयन में कवि का लक्ष्य

प्रत्येक कार्य में व्यक्ति का कुछ न कुछ लक्ष्य अवश्य होता है। अपने लक्ष्य विशेष को दृष्टि में रखकर ही व्यक्ति किसी कार्य का शुभारम्भ करता है। सामान्य पुरुष के कार्य में उसका लक्ष्य स्वार्थयुक्त होता है, किन्तु महापुरुषों एवं महाकवियों का लक्ष्य इस प्रकार का नहीं होता। उनका लक्ष्य स्वार्थ की गन्ध से भी रहित होता है। वे प्रत्येक कार्य निष्काम भाव से लोक-कल्याणार्थ करते हैं; यद्यपि इससे उनके यशादि अन्य काव्य-प्रयोजनों की भी सिद्धि हो जाती है। काव्य-प्रयोजन निम्न है—

'काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षयते।
सद्यः परिनिर्वृत्तये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे।'[3]

वाल्मीकि-रामायण रामकथा का मूल उद्गम (उपजीव्य) है। इस महाकाव्य के प्रणयन में महाकवि वाल्मीकि का क्या लक्ष्य था? किस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु कवि ने महाकाव्य की रचना की?—सम्भवतः वाल्मीकि के मन में एक ऐसे आदर्श समाज की कल्पना थी जिस समाज के सभी मनुष्य सत्त्वगुण-सम्पन्न आदर्श चरित्र वाले थे। इस चिंतन के फलस्वरूप कवि के मन में ये सोलह मंगलकारी आदर्श गुण आये—

'कोन्वस्मिन् साम्प्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान्।
धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढव्रतः॥
चारित्रेण च को युक्तः सर्वभूतेषु को हितः।
विद्वान् कः कः समर्थश्च कश्चैक प्रियदर्शनः॥

---

१. वा० रा० ३/५१/१९।
२. वा० रा० ३/५१/२२।
३. काव्यप्रकाश, मम्मटाचार्य, सम्पादक डॉ० नरेन्द्र, प्रथम उल्लास, श्लोक २, पृष्ठ १०।

आत्मवान् को जितक्रोधोद्युतिमान् कोऽनसूयकः ।
कस्य बिभ्यति देवाश्च जातरोषस्य संयुगे ।।"[1]

महर्षि वाल्मीकि ने लोक-कल्याण की भावना से प्रेरित होकर उपर्युक्त प्रकार के सर्वगुण-सम्पन्न आदर्श चरित्र वाले मनुष्यों से युक्त एक आदर्श समाज की कल्पना की। इस प्रकार के आदर्श चरित्र वाले लोगों द्वारा वह सम्पूर्ण विश्व को मंगलमय देखना चाहते थे। सम्भवतः इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर वाल्मीकि ने आदि काव्य—रामायण की रचना की।

कम्बन एक श्रीवैष्णव भक्त कवि थे। वैष्णव सर्वहितकारी होते हैं। कम्बन भी आदिकवि की भाँति जनकल्याण के इच्छुक थे। वह अपनी इस इच्छा की पूर्ति व्याख्यान तथा प्रवचन द्वारा भी कर सकते थे, किन्तु वह काव्य-सदृश स्थायी प्रभाव वाला नहीं होता, साथ ही साथ काव्य-सृजन द्वारा विभिन्न अन्य उद्देश्यों की पूर्ति भी सहज रूप में हो जाती है। अतः उन्होंने 'रामायणम्' की रचना की।

किसी भी काव्य-रचना में कवि का लक्ष्य दो प्रकार से ज्ञात होता है – प्रथम कवि की स्वोक्ति कथन से; द्वितीय उस काव्य-ग्रन्थ का अध्ययन करके। 'रामायण' के प्रणयन में कवि का लक्ष्य हमें इन दोनों प्रकारों से ज्ञात होता है।

अपने महाकाव्य की पीठिका में कम्बन ने अपने महाकाव्य-प्रणयन का लक्ष्य इस प्रकार से व्यक्त किया है—

शिऱ्कु णत्तर् तेरिवरु नन्निलै,
अेऱ्कु णर्त्तरि देण्णिय मूनरन्ऴ्
मुऱ्कु णत्तव रेमुद लोरवर्
नऱ्कु णक्कड लाडुद नन्ऱरो ।[2]

अर्थात्, बड़े-बड़े आत्मज्ञानी भी उस परमात्मा के पूर्ण स्वरूप को नहीं जान सकते; उस परमात्मा (तत्त्व) को समझना मेरे जैसे (मन्दबुद्धि) व्यक्ति के लिए असम्भव है; फिर भी शास्त्रों में प्रतिपादित त्रिगुणों (सत्त्व, रज और तम) में— जिनका प्रतिरूप बनकर वह परमात्मा त्रिमूर्ति के रूप में प्रकट हुआ, उसमें से प्रथम गुण के स्वरूप (विष्णु) भगवान् के कल्याणकारक गुणों के सागर में गोते लगाना ही उत्तम है।

---

१. वा० रा० बालकाण्ड, प्रथम सर्ग, श्लोक २-४।
२. कम्ब-रामायण, पायिरम्, श्लोक सं० २।
३. कम्ब-रामायण, पायिरम्, श्लोक सं० ६।

வையம் என்னை இகழவும், மாசு எனக்கு
எய்தவும் இது செப்புவது யாது எனின் —
பொய் இல் கேள்விப் புலமையினோர் புகல்
தெய்வ மாக் கவி மாட்சி தெரிக்கவே

अर्थात् (मेरी इस मूर्खता पर) संसार मेरा उपहास करेगा और इससे मेरा अपयश होगा, फिर भी मैं रामचरित का गान करने लगा हूँ, इसका प्रयोजन यही है कि सत्य ज्ञान तथा अलौकिक प्रतिभा से सम्पन्न (महर्षि वाल्मीकि) महर्षि के दिव्य काव्य की महिमा का और अधिक विस्तार हो।

इस प्रकार से कवि द्वारा अपने महाकाव्य के प्रणयन का लक्ष्य स्वतः स्पष्ट किया गया है—भगवान् के गुणों का स्वयं अनुभव करते हुए गुणगान करना, जिससे इस प्रपंच में सर्वत्र कल्याण हो तथा अलौकिक प्रतिभा-सम्पन्न वाल्मीकि की महिमा का विस्तार करना।

इसके अतिरिक्त सम्पूर्ण महाकाव्य के अध्ययन से भी महाकवि के काव्य-प्रणयन के कुछ अन्य लक्ष्य सम्मुख आते हैं—गुरुजनों, माता-पिता, भाई-बहन, पति-पत्नी, राजा-प्रजा आदि के प्रति एक आदर्श व्यक्ति के क्या कर्तव्य होते हैं ? एक आदर्श मनुष्य का उसके आश्रितों के प्रति क्या-क्या कर्तव्य तथा दायित्व हैं ? इस आदर्श को कम्बन ने अपने महाकाव्य में कुशलतापूर्वक स्थापित किया है। इसमें अन्तिम आदर्श—आश्रितों के प्रति दायित्व एवं कर्तव्य की प्रतिष्ठापना कम्बन ने वाल्मीकि-सदृश ही अपने महाकाव्य में की है। इसी लक्ष्य के कारण तमिळनाडु में कम्ब-रामायण 'शरणागतिवेद' के नाम से भी जाना जाता है। सम्पूर्ण कम्ब-रामायण में यह (शरणागत) वर्णन मिलता है—बालकाण्ड में देवता राक्षसों से भीत होकर ब्रह्मा के पास जाते हैं, जहाँ वे उन्हें अभय प्रदान करते हैं, अयोध्याकाण्ड में राक्षसों से पीड़ित मुनि भगवान् राम की शरण में जाते हैं। किष्किन्धाकाण्ड में सुग्रीव राम की शरण में जाते हैं, तो सुन्दरकाण्ड में विभीषण की शरणागत तथा राम द्वारा उसको अभय प्रदान करने की घटना, तो जगत्-प्रसिद्ध है, इसके अनेक उदाहरण इसमें मिलते हैं।

वाल्मीकि-रामायण संस्कृत भाषा में होने के कारण, आम तमिळ जनता में इसका अधिक प्रचार नहीं हो सका था। ऐसा लगता है कि जन सामान्य में और अधिक लोकप्रिय बनाने हेतु कम्बन ने इस कथा को तमिळ भाषा में लिखा। कम्बन

इसके माध्यम से तमिळ संस्कृति-सभ्यता, मान्यताओं आदि को सम्पूर्ण विश्व के दृश्यपटल पर भी लाना चाहते थे।

जैन धर्मी वेद-विरोधी होने के कारण वेदों तथा वैदिक कर्मकाण्डों की निन्दा करते थे। इस कारण दक्षिण भारत की जनता जैनियों से ऊब चुकी थी, क्योंकि वे हिन्दू धर्म-सम्मत वैदिक देवताओं के न केवल विरोधी थे, अपितु विष्णु, विष्णु के अवतार—राम-कृष्ण के निन्दक भी थे। इस कारण हिन्दू जनता में वैदिक कर्मकाण्डों के माध्यम से उसमें श्रद्धा पैदा करने वाले ग्रन्थ की आवश्यकता थी। कम्बन के 'रामायणम्' से उनकी इस आवश्यकता तथा आकांक्षा की पूर्ति सहज रूप में हुई। इसी कारण दक्षिण भारत में यह ग्रंथ वाल्मीकि रामायण-सदृश अत्यन्त लोकप्रिय हुआ। भक्त कवि श्रीवैष्णव कम्बन द्वारा अपने महाकाव्य में लौकिक व्यक्तियों को काव्य का नायक न बनाकर भगवान् को अपने काव्य का नायक बनाने में; जैन धर्मियों के बढ़ते हुए प्रभाव से श्रीवैष्णव धर्म तथा हिन्दू धर्म एवं संस्कृति की रक्षा का भी लक्ष्य प्रतीत होता है।

तुलसीदास

व्यक्तित्व

तुलसीदास हिन्दी साहित्य के देदीप्यमान नक्षत्र हैं। हिन्दी साहित्य की रामकाव्यधारा में इनका स्थान अद्वितीय है। प्रायः परिपाटी सी रही है कि प्राचीन कवि, कोविद, महात्मा आदि अपने ग्रन्थों में आत्मोल्लेख नहीं करते थे। तुलसीदास भी इसके अपवाद नहीं हैं। यही कारण है कि आज तक इनका प्रामाणिक जीवन-परिचय, जो सर्वमान्य हो, ज्ञात नहीं है। अंतःसाक्ष्य तथा बहिःसाक्ष्य के आधार पर इनके जीवन-वृत्त की रूपरेखा इस प्रकार बनती है—

काल-निर्धारण

तुलसीदास की जन्म-तिथि के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। इनकी जन्म-तिथि आज तक विवाद का विषय बनी है, किन्तु वे किस समय में विद्यमान थे, यह विवाद का विषय नहीं है। 'शिवसिंह सरोज' में तुलसीदास का जन्म-सम्वत् १५८३ वि० के लगभग माना गया है। विल्सन ने अपने ग्रन्थ—'रिलिजस सेक्ट्स ऑफ दि हिन्दूज' में इनका जन्म-सम्वत् १६०० वि० माना है। 'गोसाईं-चरित' के अनुसार इनकी जन्म-तिथि सं० १५५४ वि० है। रामगुलाम द्विवेदी ने इनका जन्म-सम्वत् १५८६ वि० माना है। डॉ० जार्ज ग्रियर्सन और परशुराम चतुर्वेदी ने भी सम्वत् १५८९ वि० को ही तुलसीदास का जन्म-सम्वत् माना है। डॉ० माताप्रसाद गुप्त भी तुलसीदास का जन्म-सम्वत् १५८९ वि० मानते हैं। इस प्रकार तुलसीदास की जन्म-तिथि के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों द्वारा भिन्न-भिन्न तिथियाँ मानी जाती रही हैं, किन्तु विद्वानों के प्रबल बहुमत के अनुसार सं० १५८९ वि० की तिथि अधिक प्रचलित है। यह तिथि ज्योतिष की गणनानुसार भी ठीक आती है। अतः सम्वत् १५८९ वि० (सन् १५३२) को ही तुलसीदास का जन्म-सम्वत् स्वीकार करना अधिक युक्तियुक्त एवं तर्कसम्मत प्रतीत होता है।

अवसान-तिथि

सम्वत् १६८० वि० तुलसीदास की अवसान तिथि के रूप में अधिकांश विद्वानों द्वारा मान्य है—

> संवत सोरह सै असी, असी गंग के तीर।
> सावन सुक्ला सप्तमी, तुलसी तजेउ सरीर ॥

उपर्युक्त दोहे के आधार पर लोक परम्परा सं० १६८० वि० में श्रावण शुक्ला सप्तमी को तुलसीदास का निधन मानती है। यह दोहा कब और किसने बनाया ? इसमें कथित सम्वत् कहाँ तक प्रामाणिक है ? यह किसी को ज्ञात नहीं है।[१] तुलसीदास के स्नेही टोडर के वंशज श्रावण कृष्णा तृतीया को उनकी वर्षी मनाते रहे हैं। इसलिए सम्वत् १६८० की श्रावण कृष्णा तृतीया को तुलसीदास की निधन-तिथि मानी जा सकती है।[२] मुझको भी यही मत अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है।

जन्म-स्थान

तुलसीदास के जन्म-स्थान के सम्बन्ध में विद्वानों में मतैक्य का अभाव है, इनके जन्मस्थान से सम्बन्धित कई स्थान विवाद के केन्द्र में हैं, परन्तु प्रमुख विवाद राजापुर (जिला बाँदा), सोरों (जिला एटा) और सूकरखेत (जिला गोण्डा) के विषय में है। विद्वानों के प्रबल बहुमत सहित डॉ० माताप्रसाद गुप्त का भी अभिमत राजापुर (बाँदा) को ही तुलसीदास का जन्म-स्थान मानने के पक्ष में है। यही अधिक तर्कसम्मत भी प्रतीत होता है।

वंश

'दियो सुकुल जनम'[३] से ध्वनित होता है कि तुलसीदास श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न हुए थे। मिश्र बन्धुओं ने इन्हें कान्यकुब्ज ब्राह्मण माना है, तो आचार्य रामचन्द्र शुक्ल इन्हें सरयूपारीण ब्राह्मण मानते हैं। तुलसीदास का ब्राह्मण होना तो निर्विवाद है।[४] इनके गोत्रादि के सम्बन्ध में अवश्य कुछ ज्ञात नहीं है।[५] तुलसीदास ने कवितावली में अपने 'भले-कुल' और 'भले-समाज' में जन्म लेने का उल्लेख किया है।[६] इस प्रकार तुलसीदास का सत्कुल-प्रसूत होना स्वयंसिद्ध है।

माता-पिता

तुलसीदास के माता-पिता के नाम बताये जाते हैं, किन्तु उनकी प्रामाणिकता सर्वथा सन्दिग्ध है।[७] जनश्रुति के अनुसार तुलसीदास के पिता का नाम आत्माराम

---

१. तुलसीदास और उनकी कविता, पहला भाग—रामनरेश त्रिपाठी, पृष्ठ १३२।
२. हिन्दी साहित्य कोश, भाग दो—डॉ० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ २१८।
३. विनय-पत्रिका, तुलसीदास, १३५।
४. 'जायो कुल मंगल.........'—कवितावली-उत्तरकाण्ड, ७३।
५. हिन्दी साहित्य कोश, भाग दो, पृष्ठ २१८।
६. भलि भारत भूमि, भले कुल जन्मु समाजु सरीरु भले लहि कै,
—कवितावली,—उत्तरकाण्ड, ३३।
७. हिन्दी साहित्य कोश, भाग दो—डॉ० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ २१८।

था। माता का नाम हुलसी बताया जाता है जिसको सिद्ध करने के लिए मानस से अन्तःसाक्ष्य[१] और अब्दुर्रहीम खानखाना के एक प्रसिद्ध दोहे को बहिःसाक्ष्य[२] के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

बाल्यकाल

तुलसीदास का बाल्यकाल बहुत ही कष्टमय था। उन्हें अपने बाल्यकाल में नाना प्रकार के कष्टों का सामना करना पड़ा था। तुलसीदास के जन्म लेते ही माता का तथा कुछ समय पश्चात् पिता का भी देहान्त हो गया था।[३] माता-पिता की मृत्यु के कारण तुलसीदास का प्रारम्भिक जीवन बहुत ही कष्टप्रद था। कुत्ते के सामने पड़े हुए टुकड़े को देखकर उसके लिए भी तुलसीदास ललचते रहते थे।[४] क्षुधातृप्ति के लिए उन्हें जाति-कुजाति का ध्यान न देकर सबके यहाँ से प्राप्त टुकड़े खाने पड़े थे।[५] तुलसीदास ने अपनी इस अवस्था का बहुत ही करुण तथा हृदय-स्पर्शी चित्र अपने काव्य में उपस्थित किया है।[६] तुलसीदास की यह दशा कब तक थी, अज्ञात है। इसी अवस्था में वे संतों के सम्पर्क में आ गये तथा उनकी संगति में पहुँच गये। इस प्रकार न जाने किन-किन कष्टों के हिंडोले में झूलने के पश्चात् यह महाकवि किसी गुरु का सामीप्य पा सका था। तुलसी की तुलना में कम्बन इस दृष्टि से कुछ अधिक सौभाग्यशाली थे। उन्हें प्रारम्भ में ही 'उवच्चन्-दम्पति'[७] का आश्रय मिल गया। कुछ समय पश्चात् 'शडयप्पवळ्ळर' नामक ग्राम के एक जमींदार के यहाँ कम्बन को आश्रय मिल गया। यह कम्बन का महान् प्रशंसक तथा शुभेच्छु था। इस महापुरुष ने कम्बन की प्रतिभा को पल्लवित-पुष्पित करने के लिए उनको उपयुक्त वातावरण प्रदान किया।

---

१. 'रामहि प्रिय पावनि तुलसी सी।
तुलसिदास हित हियँ हुलसी सी॥' रामचरितमानस, १-३१-६

२. सुरतिय नरतिय नागतिय, अस चाहत सब कोय।
गोद लिए हुलसी फिरै, तुलसी सो सुत होय॥

३. (क) मातु पिता जग जाइ तज्यो—।
—कवितावली, उत्तरकाण्ड, ५७।
(ख) तनु जन्यो कुटिल कीट ज्यों—। विनय-पत्रिका (२७५)।

४. नीच, निरादरभाजन, कादर, कूकर-टूकन लागि ललाई।
—कवितावली, उत्तरकाण्ड (५७)

५. जाति के, सुजाति के, कुजाति के पेटागि बस
खाए टूक सबके. बिदित बात दुनीं सो॥ कवितावली, उत्तरकाण्ड, ७२।

६. कवितावली, उत्तरकाण्ड, ५७, ७२, और विनयपत्रिका २२७, २७५।

नाम तथा गुरु

तुलसीदास के बचपन का नाम रामबोला था ।[१] कदाचित् राम-राम कहकर भीख माँगने के कारण यह नाम पड़ा हो और लोग उन्हें 'रामबोला' तथा 'रामबोलवा' कहकर पुकारते रहे हों । प्रायः यह अज्ञात है कि कब और किसने बालक 'रामबोला' का नाम तुलसीदास रखा । रामबोला का यह नाम (तुलसीदास, उसके गुरु द्वारा प्रदत्त प्रतीत होता है ।

रामचरितमानस की 'गुरु-वन्दना' की पंक्तियों[२] से तुलसीदास के विद्या-गुरु का नाम 'नरहरि' या 'नरहरिदास' ध्वनित होता है । इस सोरठे से यह अर्थ निश्चित रूप में नहीं लिया जा सकता है ।[३] तुलसीदास के ही उल्लेख द्वारा यह ज्ञात होता है कि उनके गुरु रामभक्त अवश्य थे ।[४]

कृतित्व : रचनाएँ

तुलसीदास की रचनाओं के नाम अग्रलिखित हैं[५]—

१. रामचरितमानस
२. कवितावली-रामायण
३. गीतावली-रामायण
४. बरवै-रामायण
५. दोहावली-रामायण
६. छन्दावली-रामायण
७. कुण्डलिया-रामायण
८. छप्पै-रामायण
९. कड़खा-रामायण
१०. रोला-रामायण
११. झूलना-रामायण
१२. मंगल-रामायण
१३. वैराग्य-संदीपिनी
१४. रामलला-नहछू
१५. पार्वती-मङ्गल
१६. जानकी-मङ्गल
१७. रामाज्ञा-प्रश्न
१८. श्रीकृष्ण-गीतावली
१९. विनय-पत्रिका
२०. हनुमान-बाहुक
२१. संकट-मोचन
२२. हनुमान-चालीसा

---

१ विनय-पत्रिका—७६, कवितावली १०० ।

२. 'बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि ।'—रामचरितमानस, १-५ ।

३. डॉ० माताप्रसाद गुप्त, हिन्दी साहित्य कोश, भाग दो, पृ० २१८ ।

४. विनय-पत्रिका, १७३ ।

५. तुलसीदास और उनकी कविता, पहला भाग,—रामसनेही त्रिपाठी, पृ० ०२,०३ ।

२३. राम-शलाका
२४. तुलसी-सतसई या राम-सतसई
२५. कलिधर्माधर्म-निरूपण
२६. बारहमासी
२७. अंकावली
२८. ध्रुव-प्रश्नावली
२९. तुलसी की बानी
३०. ज्ञान को परिकरण
३१. गीता-भाषा
३२. सूर्यपुराण
३३. ज्ञान-दीपिका
३४. स्वयंवर
३५. रामगीता
३६. हनुमान-शिक्षा-मुक्तावली
३७. कृष्ण-चरित्र
३८. सगुनावली

उपर्युक्त सभी रचनाएँ तुलसीदास द्वारा लिखित कही जाती हैं। इनमें कौन-कौन-सी रचनाएँ तुलसीदास द्वारा नहीं लिखी गयी हैं? इसका निर्धारण करना अत्यन्त कठिन ही नहीं, अपितु असम्भव-सा है। तुलसीदास ने अपनी रचनाओं की स्वयं कोई सूची नहीं दी है तथा न तो किसी अकाट्य प्रमाण के आधार पर उनकी प्रामाणिक रचनाओं की ऐसी सूची ही बनायी जा सकती है जो सर्वमान्य हो। निम्नलिखित रचनाएँ विद्वानों के प्रबल बहुमत द्वारा तुलसीदास की मानी जाती हैं—

१. वैराग्य-संदीपिनी
२. रामाज्ञा प्रश्न और रामशलाका
३. गीतावली
४. दोहावली
५. तुलसी-सतसई
६. कवितावली
७. रामचरितमानस
८. पार्वती-मङ्गल
९. रामलला नहछू
१०. श्रीकृष्ण-गीतावली
११. बरवै रामायण
१२. विनय-पत्रिका

ये उपर्युक्त बारह रचनाएँ तुलसीदास की प्रामाणिक रचनाएँ मानी जाती हैं। इनमें भी निम्नलिखित रचनाएँ असन्दिग्ध रूप से तुलसीदास की हैं।[1]

१. रामचरितमानस
२. गीतावली
३. विनय-पत्रिका
४. कवितावली

आलोच्य ग्रन्थ का रचना-काल

तुलसीदास की समस्त रचनाओं में 'रामचरितमानस' का स्थान सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। तुलसीदास को जनप्रियता के उत्तुंग शिखर पर आसीन कराने का

---

१. हिन्दी साहित्य कोश, भाग दो, पृ० २१९।

सर्वाधिक श्रेय इसी ग्रन्थ को है। कम्ब रामायण का रचना-काल केवल अनुमान पर ही आधारित है, क्योंकि स्वयं कम्बन ने इसका कहीं पर भी उल्लेख नहीं किया है, किन्तु रामचरितमानस की स्थिति इससे भिन्न है। तुलसीदास ने रामचरितमानस का रचना-स्थल तथा रचना-काल दोनों का ही उल्लेख मानस में करके इस सम्बन्ध में विवाद के लिए अवसर ही नहीं दिया। कवि के ही शब्दों में रामचरित-मानस का रचना-स्थल—राम धामदा पुरी सुहावनि। लोक समस्त बिदित अति पावनि।[1] रामचरितमानस का रचना-काल स्वयं तुलसीदास के शब्दों में ही—

संबत सोरह सै इकतीसा। करउँ कथा हरि पद धरि सीसा।।
नौमी भौमबार मधुमासा। अवधपुरी यह चरित प्रकासा।।[2]

अर्थात् रामचरितमानस संवत् सोरह सौ इकतीस (सं० १६३१ वि० = सन् १५५४ ई०) वि० में चैत्र शुक्ल पक्ष की नवमी को, जो मंगलवार को पड़ी थी, अयोध्या में रामचरितमानस का प्रकाश हुआ, अर्थात् इसी तिथि को कवि ने राम-चरितमानस के प्रणयन का कार्य प्रारम्भ किया। यह तिथि गणना से भी शुद्ध है। इसके पूर्ण होने या समापन की तिथि अज्ञात है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार इस महाकाव्य को पूर्ण करने में कवि को दो वर्ष सात माह का समय लगा था।

आधार-ग्रन्थ

रामचरितमानस से स्पष्ट होता है कि तुलसीदास ने वेद, शास्त्र, पुराण, उपनिषद्, व्याकरण, काव्य, नाटक, ज्योतिष, संगीत के साथ संस्कृत साहित्य के प्रायः सभी विषयों के प्रसिद्ध ग्रन्थों का अध्ययन किया था। रामचरितमानस के आधार-ग्रन्थों का उल्लेख कवि ने स्वतः किया है—

नानापुराणनिगमागमसमतं यद्
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि।
स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा—
भाषानिबन्धमतिमञ्जुल मातनोति।।[3]

विविध कुसुमों से उनका मकरंद एकत्र कर मधुमक्षिका अद्वितीय गुणकारी मधु का निर्माण करती है। तुलसीदास ने भी मधुमक्षिका की भाँति "नाना पुराण" रूपी अनुपम पुष्पों के मकरंद को एकत्र कर ऐसे ही मधुर, आह्लादकारी-गुणकारी,

---

१. रामचरितमानस, १/३५/२।
२. उपर्युक्त १/३४/२,३।
३. रामचरितमानस, १/७।

सर्वहितकारी, मधु सदृश कालजयी रामचरितमानस की रचना की। यह महाकाव्य मधुवत् हिन्दू-समाज के लिए अनेक प्रकार से हितकारी सिद्ध हुआ। इसका प्रभाव तुलसीदास के समय से अद्यतन सम्पूर्ण हिन्दू समाज पर पूर्ववत् लाभकारी बना हुआ है।

इस अद्वितीय महाकाव्य—रामचरितमानस का अनुशीलन करने पर विदित होता है कि तुलसीदास ने इसकी रचना में निम्नलिखित ग्रन्थों से विशेष प्रभाव ग्रहण किया—वाल्मीकि रामायण, अध्यात्मरामायण, हनुमन्नाटक, प्रसन्नराघव, श्रीमद्भागवत्, शिवपुराण, वाराह पुराण, उत्तररामचरित, योगवाशिष्ठ, कुमार-सम्भव, भुसुंडिरामायण, चाणक्य-नीति, हितोपदेश, मेघदूत, कठोपनिषद् श्रीमद् भगवद्गीता, आदि। इन ग्रन्थों के अतिरिक्त तुलसीदास ने अपनी विलक्षण कल्पना शक्ति, अद्भुत् प्रतिभा से इसको अनेक कल्पित आख्याओं, घटनाओं तथा अभिनव प्रसंगों से अलंकृत करके सम्पूर्ण महाकाव्य को आद्योपान्त इस प्रकार से ललित, मुग्धकारी तथा मनोहारी बनाया है कि 'जहँ जाइ मन तहँइँ लोभाई' की उक्ति यहीं पर सर्वथा चरितार्थ होती है।

आलोच्य ग्रन्थ के प्रणयन में कवि का लक्ष्य

संसार के कवियों ने या तो साधु-महात्माओं के सिद्धासन पर आसीन होकर अपनी कठोर साधना या तीक्ष्ण अनुभूति तथा घोर धार्मिक कट्टरता या साम्प्रदायिक असहिष्णुता से भरे बिखरे हुए छन्द कहे हैं और अखण्ड ज्योति की कौंध में कुछ रहस्यमय धुँधली और अस्पष्ट रेखाएँ अंकित की हैं, अथवा लोकमर्मज्ञ की हैसियत से सांसारिक जीवन के तप्त या शीतल एकान्त के चित्र खींचे हैं जो धर्म और अध्यात्म से सर्वथा उदासीन दिखलाई पड़ते हैं। गोस्वामी जी ही एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने इन सभी के नानाविध भावों को एक सूत्र में गुम्फित करके अपना अनुपमेय साहित्यिक उपहार प्रदान किया है। उनका वह उपहार रामचरितमानस है।[1]

तुलसीदास को जनप्रियता के उत्तुंग शिखर पर आसीन कराने का श्रेय रामचरितमानस को ही है। उत्तर भारतवर्ष की आम जनता में यह ग्रन्थ "रामायण" या "तुलसीदास रामायण" के नाम से ही जाना जाता है। इससे इस ग्रन्थ की महनीयता प्रकट होती है। कवि ने रामकथा को "कलि कामद गाई"[2] कहा है और इसे "सजीवनि मूरि"[3] बतलाया है। इस अद्वितीय कथा—रामकथा

१. तुलसीदास और उनका युग—डॉ० राजपति दीक्षित, पृ० ४६२।

२. रामचरितमानस १/३१/४।

३. उपर्युक्त।

तथा इस अप्रतिम ग्रन्थ-रामचरितमानस की महनीयता पर कवि ने बालकाण्ड में स्वत: विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला है।[1]

तुलसीदास की रचनाओं में उनके जीवन, व्यक्तित्व और साधना का बहुत कुछ आ गया है। सम्भवत: उतना सब तो है ही जितना कवि देना चाहता था।[2] रामचरितमानस की रचना में अपने उद्देश्य को तुलसीदास ने स्वत: व्यक्त किया है—

स्वान्त:सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा—
भाषानिबन्धमतिमञ्जुलमातनोति।[3]

और

भाषाबद्ध करबि मैं सोई।
मोरें मन प्रबोध जेहिं होई।।[4]

उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि "मन प्रबोध" तथा "स्वान्त: सुखाय" तुलसीदास ने रामचरितमानस की रचना की, किन्तु इस प्रकार की अद्भुत-विविध विशेषताओं से परिपूर्ण काव्य-रचना के लिए इन विशेष परिस्थितियों एवं कारणों ने कवि को प्रेरित किया—

कवि अपनी निज कालीन परिस्थितियों से पूर्णत: प्रभावित होता है और उसकी रचना में उनका प्रभाव भी स्पष्ट झलकता है। रामचरितमानस के प्रणयन में तथा कवि के लक्ष्य निर्धारण में तत्कालीन राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक परिस्थितियों का महत्त्वपूर्ण प्रभाव तथा योगदान है। तुलसीदास-कालीन धार्मिक, सामाजिक आदि सभी परिस्थितियाँ, कम्बन-कालीन परिस्थितियों से अत्यधिक भिन्न थीं। तुलसीदास कालीन हिन्दू समाज म्लेच्छ शासकों के नाना अत्याचारों से त्रस्त था। शासन की बागडोर मुगल-शासकों के हाथ में होने के कारण, हिन्दू समाज उनके विविध अत्याचारों का शिकार था। समाज में सर्वत्र परस्पर वैषम्य एवं विभेद का ही ताण्डव-नर्तन हो रहा था। एक ओर हिन्दू-म्लेच्छ विद्वेष था, तो दूसरी ओर शैव वैष्णव तथा शाक्त मतावलम्बियों में परस्पर ईर्ष्या, द्वेष की खाँई गहरी होती जा रही थी। उत्तर में ही नहीं, दक्षिण भारत में भी वह परस्पर वैमनस्य तथा विद्वेष ने इतना उग्र रूप धारण कर लिया था कि काँचीपुरम् का—शिवकाँची तथा

१. रामचरितमानस १/३१-३१।
२. तुलसी : नवमूल्यांकन, डॉ० रामरतन भटनागर, पृष्ठ ३९।
३. रामचरितमानस १/७।
४. उपर्युक्त १/३१/१।

विष्णुकांची (बड़ी-छोटी) दो भागों में विभाजन हो गया। ब्राह्मण-शूद्र, शैव-वैष्णव, ऊँच-नीच आदि विविध पारस्परिक वैमनस्य से हिन्दू-समाज पूर्णतः विखंडित होकर पतन के कगार पर एक झटके की प्रतीक्षा कर रहा था। सबको एकता के सूत्र में पिरोकर विश्रृंखल हिन्दू को एकता के सूत्र में पिरोना, तत्कालीन समाज की एक नितान्त-अनिवार्य आवश्यकता थी। इस प्रकार की विकट-विषम परिस्थितियों में तुलसीदास ने अपने इस अप्रतिम महाकाव्य के माध्यम से समाज के उपर्युक्त उल्लिखित सभी क्षेत्रों में समन्वय की विराट् चेष्टा की। उन्होंने सगुण-निर्गुण, सज्जन-दुर्जन, ब्राह्मण-शूद्र, अद्वैतवाद-विशिष्टाद्वैतवाद, ज्ञान-भक्ति, नर-नारायण, राजा-प्रजा, भाषा-लोकभाषा, साध्वी-कामिनी, शैव-वैष्णव, वैष्णव-शाक्त, विष्णुत्व-शिवत्व, धर्म-राजनीति—आदि सभी क्षेत्रों में अपनी अद्वितीय समन्वयकारी विलक्षण प्रतिभा से सबमें समन्वय हेतु श्लाघनीय प्रयास किया। तुलसीदास का यह प्रयास तत्कालीन समाज की प्रमुख आवश्यकता थी। तुलसीदास का यह समन्वय उनका आत्मधर्म है और भाषा तथा काव्य की अप्रतिम शक्ति से उन्होंने इसे सबका आत्मधर्म बना दिया है।[1]

तुलसीदास की वर्णनशैली, जनसामान्य की एवं परिमार्जित भाषा और दार्शनिकता से परिप्लावित अध्यात्मपूर्ण वर्णन; उनके संस्कृत, हिन्दूदर्शन और धर्मशास्त्रों के गहनतम अध्ययन को प्रकट करता है। तुलसीदास ने रामकथा के विविध प्रसंगों के माध्यम से राजनीतिक, सामाजिक तथा पारिवारिक जीवन के उच्च आदर्शों को जनता के सम्मुख प्रस्तुत करके विश्रृंखल हिन्दू को केन्द्रित करके एक झण्डे के नीचे लाने का स्तुत्य प्रयास किया। उन्होंने जीवन और जगत् के सभी क्षेत्रों में समन्वय स्थापित करने हेतु तत्कालीन समाज में व्याप्त वैषम्य, विद्वेष, पापाचारों-अनाचारों की कटु शब्दों में निन्दा करते हुए पारस्परिक प्रेम-सौहार्द्र, साम्य, सहानुभूति का प्रचार किया। तुलसीदास ने रामचरितमानस के विविध पात्रों-घटनाओं के माध्यम से पति-पत्नी, माता-पिता, भाई-बहन, मित्र-शत्रु, त्याग, श्रद्धा, धर्मनीति, राजनीति, मर्यादा, आदर्श, भाग्य, पुरुषार्थ, कर्तव्य—आदि न जाने क्या-क्या कितने मानव-जीवन के तत्त्वों को इसमें ऋचाओं तथा वेदों की सूक्तियों सदृश सर्वत्र बिखेरा। तुलसीदास ने शताब्दियों से जनता की इस आकांक्षा की पूर्ति सहज रूप में की।

रामचरितमानस में नारी-निन्दा से सम्बन्धित पंक्तियाँ युगपरिवेशवश ही

---

१. तुलसीदास : नवमूल्यांकन, डॉ० रामरतन भटनागर, पृष्ठ १६।

प्राप्त होती हैं, अन्यथा कवि तो सम्पूर्ण जग को "सीय राममय"[1] ही जानने वाला है। वह "नारी-निन्दक" नहीं है, किंतु अन्य सन्त-भक्त कवियों की भाँति उसने भी नारी के "प्रमदा" तथा "भोग्या" रूप से विरत रहने के लिए हमें सचेष्ट किया है। इसको "नारी-निन्दा" नहीं कहा जा सकता। वह नारी को उसके महनीय रूप—माँ, पत्नी, बहन—आदि— आदर्श रूपों में ही देखना चाहता है तथा इस आदर्श की प्रतिस्थापना का भी यत्न अपने महाकाव्य में किया है। अग्रांकित पंक्तियों में उसके इसी लक्ष्य की ध्वनि गूँजती है—

"पुत्रि पवित्र किए कुल दोऊ।
सुजस धवल जगु कह सबु कोऊ।।"[2]

उसे नारी की उपेक्षा स्वीकार्य नहीं है। अर्द्धांगिनी के 'सिखावन' पर "काम न करने" वाले बालि को "मूढ़" कहते हुए तुलसीदास के राम का कथन है—

"मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना।
नारि सिखावन करिस न काना।।"[3]

नारी-परतन्त्रता के विपक्ष में कवि का मत स्पष्ट परिलक्षित होता है—

"कत बिधि सृजीं नारि जग माहीं।
पराधीन सपनेहुँ सुखु नाहीं।।"[4]

तुलसीदास नारी के प्रति कितने उदारमना हैं, इससे सहज अनुमेय है। नारी पर कुदृष्टिपात करने वालों को वह आततायी मानकर उन्हें वध्य भी मानते हैं।

"अनुज बधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी।।
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधे कछु पाप न होई।।"[5]

नारी के प्रति इस प्रकार की समुदार दृष्टि वाले कवि को नारी-निन्दक समझना संकीर्णता का ही परिचायक है।

---

१. सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।। —रामचरितमानस, १/८/१।
२. रामचरितमानस २/२८७/१।
३. रामचरितमानस ४/९/५।
४. रामचरितमानस १/१०२/३।
५. रामचरितमानस ४/९/४।

पुरुषप्रधान भारतीय समाज में भी माता को पिता से उच्चतर स्थान दिया गया है। इस आर्ष दृष्टि को मान्यता देते हुए तुलसीदास कौसल्या से राम के प्रति स्पष्ट कहलाते हैं—

"जौं केवल पितु आयसु ताता। तौ जनि जाहु जानि बड़ि माता।।
जौं पितु मातु कहेउ बन जाना। तौ कानन सत अवध समाना।।"[1]

कवि ने नारी के प्रति अत्यधिक सम्मानपूर्ण दृष्टि के लिए सम्पूर्ण मानव जाति को प्रेरणा अपने महाकाव्य में दी है। एक ओर उसने पुरुषों को नारियों का सम्मान करने की शिक्षा दी है, तो दूसरी ओर नारियों को भी 'नारि धरमु पति देउ न दूजा"[2] कहकर पति-सेवा-प्रेम की दीक्षा देकर दोनों में परस्पर सहयोग, प्रेम एवं त्याग की भावना विकसित करके नारी को पूज्या और सम्मान्या बनाने का प्रयास किया है। नारी के सन्दर्भ में तुलसीदास की अपनी मूल दृष्टि यही है। तुलसीदास का यह लक्ष्य उनके महाकाव्य में अद्योपान्त परिलक्षित होता है।

भाव-पक्ष एवं कला-पक्ष दोनों दृष्टियों से ही रामचरितमानस श्रेष्ठतम महाकाव्य है। यह महाकाव्य तुलसीदास की काव्य-मर्मज्ञता कलात्मकता, भावुकता, गम्भीरता, रचना-कुशलता आदि का द्योतक है, जिसमें विषय का प्रतिपादन, सद्गुणों का विकास, दुर्गुणों के प्रति कुत्सा-प्रदर्शन, आद्योपान्त रस का निर्वहन, सजीव कथोपकथन, पात्रों के चरित्र का चित्रण, रूपकों का समावेश, अनूठी उपमाएँ, नैसर्गिक दृष्ठिकोण, प्रच्छन्न प्रहसन, उत्कट उमंग, बहुज्ञता, प्रतिभा, पद-लालित्य, कथाओं-किम्वदन्तियों की कुशलता एवं सुन्दरता से कथा में समावेश आदि सब कुछ अनूठे तथा सर्वथा बेजोड़ हैं। इसमें कवि ने मर्यादित शृंगार के साथ-साथ असीम शौर्य, अतुलित पराक्रम के साथ अद्वितीय शील, उत्कृष्ट रूप-सौन्दर्य तथा उच्च कोटि के मानव-प्रेम आदि का निरूपण किया है।

अभिप्राय यह है कि रामचरितमानस के प्रणयन के अपने लक्ष्य में मानसकार पूर्णतः सफल रहा है। आज भी इस महाकाव्य की जनप्रियता एवं श्रेष्ठता सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय के ग्रन्थों में सर्वाधिक है। इसे दावे के साथ कहा जा सकता है कि उत्तर भारत में कोई ऐसा हिन्दू व्यक्ति नहीं है, चाहे वह साक्षर हो अथवा निरक्षर, जिसको रामचरितमानस की कुछ पंक्तियाँ न याद हों। इससे इस ग्रन्थ की जनप्रियता सिद्ध होती है। वैदिक-संस्कृत ग्रन्थों की सूक्तियों की भाँति हिन्दी में जो भी श्रेष्ठ

१. रामचरितमानस २/५६/१।
२. रामचरितमानस।

सूक्तियाँ या नीतिवचन हैं, उनमें से अधिकांश रामचरितमानस की हैं जो सम्पूर्ण उत्तर भारत में व्यवहृत होती हैं, इससे भी कवि की अपने लक्ष्य में सफलता सिद्ध होती है। हिन्दू समाज तथा हिन्दू धर्म के स्थायी, अति कुशल समन्वयकर्ता तथा श्रेष्ठ संगठनकर्ता तुलसीदास का सर्वोत्तम ग्रन्थ 'रामचरितमानस,निस्सन्देह हिन्दी साहित्य का गौरव ग्रन्थ है तथा इसमें निहित उपदेश तथा उद्देश्य हिन्दी साहित्य, हिन्दू समाज एवं भारतीय संस्कृति की बहुमूल्य निधियाँ हैं।

कम्बन और तुलसीदास के वर्णन में देशीय संस्कृतिवश भिन्नता पायी जाती है, किन्तु समानता की दृष्टि से भी दोनों रचनाकारों में कतिपय सूत्र उपलब्ध होते हैं, यथा दोनों कवि भक्त हैं, दोनों एक ही लक्ष्य हेतु—समाज-कल्याण, जन-कल्याण, संस्कृति-प्रेमवश अपने महाकाव्य का प्रणयन करते हैं, किन्तु उनका वर्णन दक्षिण तथा उत्तर भारत की संस्कृति, सभ्यता, मान्यताओं, परिस्थितियों आदि से पूर्णतः प्रभावित है। इसी कारण दोनों महाकाव्यों की घटनाओं के चित्रण तथा कथा के प्रस्तुतिकरण में विभिन्नता भी पायी जाती है।

इस प्रकार भारतीय संस्कृति और साहित्य की सुदीर्घ परम्परा में कम्बन और तुलसीदास तथा उनके महाकाव्य कम्ब-रामायण और रामचरितमानस का स्थान अद्वितीय है। अनूठे काव्य-सौन्दर्य से परिपूर्ण कम्ब-रामायण तथा रामचरितमानस विशाल रत्नाकर हैं जिनमें कथाभिलाषी को कथा, साहित्यानुरागी को साहित्य और दर्शनेच्छु को दर्शन प्राप्त होता है। इनकी काव्य-रचना की दृश्यावली शोभन वस्तुओं की मनोरम स्वर्गस्थली है। कम्बन तथा तुलसीदास की वाणी में इस देश की अपूर्व मनीषा और महान् जीवन-आदर्शों को रूप मिला है। आज तमिळ और हिन्दी जगत् - के ही नहीं, अपितु विश्व के मनीषी इन दोनों कवियों की महनीयता मुक्त कंठ से स्वीकार करते हैं। वास्तव में ये दोनों महाकाव्य हैं ही कुछ ऐसे, जो आज भी सम्पूर्ण विश्व के सुधी पाठकों का ध्यान पूर्ववत् आकृष्ट किये हुए हैं। भारतीय संस्कृति, दर्शन, धर्म, साधना, भाषा आदि में जो कुछ उदात्त है, जो कुछ ललित है, जो कुछ मोहन और महनीय है, उसका प्रयत्नपूर्वक सजाया, सँवारा, सलोना रूप कम्बन तथा तुलसीदास के महाकाव्य—कम्ब-रामायण और रामचरितमानस हैं जिनमें भारतीय आदर्श और संस्कृति का जो कुछ सर्वोत्तम है, उसी की ध्वनि निनादित हो रही है।

अध्याय-द्वितीय

कम्बन और तुलसीदास-कालीन परिस्थिति और संस्कृति

कम्बन और तुलसीदास कालीन राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक परिस्थितियाँ

साहित्य समाज का दर्पण होता है। इस दर्पण के सम्मुख खड़ी समाज-रूपी नायिका की मूर्ति के अंग-प्रत्यंग का सौष्ठव स्पष्ट झलकता है। मूर्तिकार उसी युग का होता है। वह उसमें उन्हीं रंगों का प्रयोग करता है जो उस समय बाजार में उपलब्ध होते है। अतः मूर्तियों से उनके समय की बहुत सारी बातें स्वयं प्रकट हो जाती हैं। प्रत्येक मूर्ति या रचना पर उस युग—परिवेश का प्रभाव अवश्य पड़ता है। उस समय की परिस्थितियों के प्रकाश में उस रचना का भली-भाँति परीक्षण-निरीक्षण किया जा सकता है। किसी भी रचना या ग्रन्थ के विवेचन या विश्लेषण का प्रमुख लक्ष्य अपनी विशेष परिस्थितियों, सामाजिक तथा भौतिक वातावरण तथा कवि की वैयक्तिक अनुभूति को समझना है और यह स्पष्ट करना है कि इन नियामक दशाओं ने उसके काव्य के स्वरूप को कहाँ तक प्रभावित किया है। कम्ब-रामायण और रामचरितमानस दोनों, दो भिन्न-भिन्न परिस्थितियों तथा संस्कृतियों के प्रतिनिधि ग्रंथ हैं। अतः इन आलोच्य ग्रंथों के सम्यक् विवेचनार्थ प्रस्तुत कृतियों को प्रभावित करने वाली तत्कालीन परिस्थितियों एवं संस्कृतियों पर विचार करना आवश्यक हो जाता है।

कम्बन-कालीन परिस्थितियाँ

बारहवीं शती में विद्यमान महाकवि कम्बन चोल राजाओं के राजाश्रय-प्राप्त कवि थे। अतः कम्बन-कालीन परिस्थितियों तथा संस्कृति से अभिज्ञ होने के लिए बारहवीं शताब्दी के उनके आश्रयदाता चोल राजाओं के साम्राज्य तथा उनकी व्यवस्था पर भी दृष्टिपात करना आवश्यक प्रतीत होता है।

दक्षिण भारत में जिन राजवंशों ने शासन किया, उनमें चोलों का स्थान विशिष्ट है। दक्षिण-भारत के इतिहास में चोल-नरेशों का समय विविध दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। सम्पूर्ण दक्षिण भारत सर्वप्रथम इन्हीं के राज्यकाल में एक छत्र के नीचे आया और यहाँ पर अत्यन्त सुदृढ़ शासन व्यवस्था की स्थापना हुई। यद्यपि चोल शासकों का उल्लेख अशोक के अभिलेखों में उपलब्ध है तथा 'संगम-कालीन' ग्रन्थों में भी उनके कार्यों का वर्णन प्राप्त होता है, किन्तु दक्षिण भारतीय राजनीति के

रंगमंच पर नवीं शताब्दी के मध्य में ही चोल शासक शक्तिशाली शासक के रूप में उभर कर आते हैं। उनका यह राजनीतिक प्रभाव तेरहवीं शताब्दी के अन्त तक लगभग पाँच सौ वर्षों तक दक्षिण भारत के विशाल भू-भाग पर बना रहा।

चोल साम्राज्य का अभ्युदय नवीं शताब्दी में हुआ। नवीं से दसवीं शताब्दी के मध्य विजयालय चोल सत्तारूढ़ था। चोल साम्राज्य की नींव इसी ने डाली। इसके परवर्ती शासकों—परान्तक चोल, आदित्यकरिकालन आदि चोल सम्राटों ने इस साम्राज्य का और भी विस्तार किया। प्रथम राजराजन् के समय में चोल साम्राज्य अपनी उन्नति तथा विकास की पराकाष्ठा पर था। उसके पुत्र राजेन्द्र प्रथम चोल के समय में गंगा नदी तक चोल साम्राज्य की विजय वैजयन्ती फहरने लगी थी। उसके साम्राज्य की सीमाएँ दक्षिण में पूर्वी द्वीप समूह, जावा, सुमात्रा तक थीं। श्रीलंका द्वीप के उत्तरी हिस्से को चोल राजाओं ने अपने साम्राज्य का अंग बना लिया था। चोल सम्राटों के दूत चीन तक जाते थे। चोल साम्राज्य बारहवीं शताब्दी में दक्षिण भारत का सर्वाधिक शक्तिशाली साम्राज्य था। उनके पास एक अत्यन्त शक्तिशाली एवं विशाल सेना थी। चोल नरेशों के पास सुसज्जित नौसेना भी थी, जिससे वे अपने समुद्र तटीय साम्राज्य एवं व्यापार की रक्षा करते थे। इनका व्यापार जावा-सुमात्रा तक होता था। विक्रम चोल, कुलोत्तुंग द्वितीय, द्वितीय राजराज (राजराजन) आदि चोल राजाओं के समय में राज्य की व्यवस्था, प्रशासन, साहित्य, कला आदि सब कुछ उन्नति के शिखर पर था।

चोल-सम्राट न केवल कुशल योद्धा और वीर थे, अपितु उत्कृष्ट कलाप्रेमी भी थे। वे कला-साहित्य, मूर्तिकला, चित्रकला, भित्ति-कला आदि सभी में गहरी रुचि लेते थे। चोल राजाओं के दरबार में तमिळ भाषा के कवियों, विद्वानों, मूर्तिकारों, कलाकारों, साहित्यकारों का बहुत सम्मान था। कविगण इन राजाओं की प्रशस्ति करते रहते थे। कुछ राजा तो स्वयं भी श्रेष्ठ साहित्यकार एवं विद्वान् थे। इस काल में कला-साहित्य-वल्लरी खूब पल्लवित-पुष्पित हुई जिसकी मोहक सुरभि से तमिळ-साहित्य आज भी सुरभित है। इसी कारण तमिळ साहित्य में 'संघ-काल' तथा 'अर्वाचीन चोल-काल' स्वर्णयुग के नाम से जाने जाते हैं। संघ-काल उच्च-स्तरीय एवं अत्यन्त श्रेष्ठ रचनाओं से परिपूर्ण है। पत्तुप्पाट्टु, एट्टुत्तोकै आदि 'संघ-काल' की श्रेष्ठतम रचनाएँ है।

चोल सम्राटों का समय वस्तु-कला की दृष्टि से भी स्वर्णयुग था। तंजौर में १०१२ ई० में चोल नरेश राजराज प्रथम ने बृहदीश्वर का मन्दिर बनवाया। तत्कालीन अत्यन्त विकसित शिल्प-कला का यह एक श्रेष्ठतम उदाहरण है। चोल

राजाओं के समय में तमिळ संगीत का विकास हुआ । चोल राजाओं ने शैव सन्तों द्वारा रचित 'सेवारम्' आदि भक्तिप्रधान पद्यों के गायन की नियमित व्यवस्था मन्दिरों में की थी । लुप्तप्राय नाट्यकला को भी राजेन्द्र चोल ने नवजीवन प्रदान किया । वैष्णव-दिव्य प्रबन्धों की व्याख्या इसी समय हुई । चोल राजाओं की उदारता तथा उनकी सहृदयता का परिणाम था कि उनके काल में जैन-बौद्ध जैसे वैदिक कर्मकाण्डों के प्रबल विरोधी धर्मों के आचार्य भी तमिळ साहित्य के सृजन में लग गये थे। इस प्रकार अर्वाचीन चोल राजाओं का समय उत्तम शासन व्यवस्था, श्रेष्ठतम साहित्य सृजन, कला की उत्कृष्टता आदि से जाज्वल्यमान है । प्रसिद्ध इतिहासकार प्रो० नीलकंठ शास्त्री के अनुसार यह समय तमिळ साहित्य का स्वर्णयुग था ।[1] प्रो० आर० राममूर्ति के अनुसार चोलों की संस्कृति सम्पूर्ण मानव जाति के लिए ग्राह्य थी ।[2] चोल नरेशों की छाप तत्कालीन कला, ज्ञान, नीति, सम्प्रदाय, समुदाय, राजनीति, अर्थव्यवस्था आदि सब पर स्पष्ट दिखलाई पड़ती है । चोल राजाओं का यह मन्तव्य था कि संस्कृति मनुष्य के हृदय में बसती है । अतः उन्होंने संस्कृति के आधार पर हृदय को पवित्र करने हेतु अनेक प्रकार के प्रयत्न किये । इसके लिए उन्होंने मठों, मन्दिरों, आदि का निर्माण कराया, जिसमें धार्मिक तथा नैतिक विषयों पर नियमित प्रवचन की व्यवस्था थी । इस प्रकार चोल राजाओं ने सर्वथा एक आदर्श साम्राज्य की स्थापना की तथा आगामी पीढ़ी के लिए एक आश्चर्यजनक संस्कृति विरासत में प्रदान की ।

चोल राजाओं के काल में ही जीवक चिन्तामणि, चूड़ामणि, पिरिय्यपुराणम् कन्दपुराणम् प्रभृति अनेक श्रेष्ठ काव्यों का सृजन हुआ है । उस समय लिखी गयी अन्य छोटी-छोटी श्रेष्ठ रचनाओं की एक लम्बी श्रृंखला पायी जाती है । चोल राजाओं के साम्राज्य की सुव्यवस्थित शासन-प्रणाली, राज्य में सुन्दर राजमार्गों का जाल, तन्जौर, कांचीपुरम्, मामळ्ळपुरम् (महाबलीपुरम्) श्रीरंगम् जैसे नगरों के श्रेष्ठ मन्दिरों का निर्माण, विदेशों तक व्यापार-विस्तार, पंचायत शासन-प्रणाली, अत्यन्त सुखमय तथा समृद्ध प्रजा का जीवन-स्तर आदि की अति उर्वर तथा अत्यन्त उदात्त पृष्ठभूमि ने नवीन साहित्य के सृजनार्थ रचनाकारों को उत्तम आधार प्रदान किया ।

---

१. चोलवंश, प्रो० ए० के० नीलकंठ शास्त्री, अनुवादक—मंगलनाथ सिंह, प्रकाशन वर्ष १९७९ ।

२. A Study of Cultural Development in the Chola Period—Prof. R.Ramamurthi.

कम्बन इस प्रकार के अत्यन्त समृद्ध, शक्तिशाली, सर्वहितकारी, प्रजावत्सल एवं उदात्त गुणों से पूरित चोलवंशीय राजाओं के आश्रय-प्राप्त कवि थे। उनका महाकाव्य कम्ब-रामायण चोल शासकों के स्वर्णयुग की ही एक श्रेष्ठतम रचना है। कम्ब-रामायण का वर्णन समकालीन व्यवस्था से पूर्णतः प्रभावित है। कम्ब-रामायण में चोल शासकों की उत्तम शासन-प्रणाली, न्यायप्रियता, सरलता, समृद्धि एवं तत्कालीन जन-जीवन की मनोरम झाँकी मिलती है।

राजनीतिक परिस्थिति

दक्षिण भारत के इतिहास में रचनात्मक दृष्टि से चोल शासकों का कार्य-काल सर्वाधिक उर्वर रहा है। कहा जा चुका है कि इस काल में ही सर्वप्रथम सम्पूर्ण दक्षिण भारत एक शासन-प्रणाली के अधीनस्थ हुआ। इन नवीन परिस्थितियों में लोक-प्रशासन की समस्याओं के निदानार्थ गम्भीर प्रयास किये गये। इस समय स्थानीय प्रशासन, कला, धर्म, साहित्य आदि सभी क्षेत्रों में तमिळ देश उत्कर्ष के जिस चरम बिन्दु पर था, पुनः उस स्तर पर वह कभी नहीं पहुँच सका। इन सभी क्षेत्रों में, विदेशी व्यापार तथा नौ-परिवहन के क्षेत्र में इससे पूर्व पल्लवों के द्वारा जिन आन्दोलनों का श्रीगणेश हुआ था, वे सभी इस काल में अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गये थे। इस वैभवशाली स्वर्णयुग में ही अत्यन्त प्रतिभाशाली कवि कम्बन हुए।

कम्बन-कालीन राजनीतिक व्यवस्था में राजा ही राज्य का सर्वोच्च अधिकारी होता था, किन्तु वह निरंकुश नहीं होता था। राजा कोई भी निर्णय मन्त्रि-परिषद् की बहुमतयुक्त परामर्श पर करता था। समय-परिस्थितियों के अनुकूल वह मन्त्रिपरिषद् के निर्णय को मानने के लिए बाध्य नहीं था, किन्तु वह उसका सम्मान अवश्य करता था। कम्बन के विचारों एवं वर्णन पर उक्त शासन-व्यवस्था का प्रभाव परिलक्षित होता है। राजा दशरथ राम के राज्याभिषेक का निर्णय स्वयं न लेकर इसका प्रस्ताव मन्त्रिपरिषद् में रखते हैं जिसकी अनुमति प्राप्त होने पर ही वे निश्चय करते हैं।[1] राजा-राजवंश-परम्परा से ही होते थे, किन्तु न्याय-निर्णय इत्यादि सभी कार्य प्रजातान्त्रिक प्रणाली पर आधारित था। पुरोहित, मन्त्री, सेनापति राजा के प्रमुख सहायक एवं परामर्शदाता थे। राजा को विष्णु-सदृश माना जाता था—'ना विष्णुः पृथ्वीपतिः।

कम्बन-कालीन शासक अत्यधिक समृद्ध थे। उनके वैभव से कम्ब-रामायण का वर्णन भी अप्रभावित नहीं है। महाराजा दशरथ द्वारा सूचनार्थ भेजे जाने वाले

---

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, मन्दिरप्पड़ळम्।

संदेश स्वर्णपत्रों पर उत्कीर्ण होते थे।[1] इस प्रकार का वर्णन करके कवि ने राजा के वैभव का उल्लेख किया है क्योंकि तत्कालीन समाज में लेखन हेतु ताड़-पत्रों का ही प्रयोग होता था।

कम्बन-कालीन चोल शासक अपने दाहिने पैर में सोने का कड़ा पहनते थे, जिसे 'वीरवलय' या 'वलय' कहा जाता था, जो उनकी वीरता का प्रतीक था। कम्ब-रामायण में दशरथ का चित्रण वीरवलयधारी के रूप में मिलता है।[2] वीर-वलयधारी के रूप में रावण का भी चित्रण हुआ है।[3] रामचरितमानस में यह वर्णन नहीं मिलता।

तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था में दूतों की प्रथा थी। विवेकशील, नीति-निपुण, अत्यन्त निर्भय तथा व्यवहार-कुशल लोगों का ही दूतों (राजदूतों) के रूप में चयन किया जाता था जो अपने राजा के सन्देश-पक्ष को शत्रु पक्ष में जाकर निर्भीकता से भली-भाँति तथा यथावत् प्रस्तुत कर सकें। दूत के रूप में हनुमान[4] तथा अंगद इसके उत्तम उदाहरण हैं।

आलोच्य ग्रन्थ के वर्णन में दशरथ पुत्रों के उत्पन्न होने की प्रसन्नता में सम्पूर्ण राज्य में सात वर्षों के लिए लगान-माफ कर देते हैं, जनता के लिए अन्न-भण्डारों के किवाड़ खोलवा देते हैं जिससे वह अपनी इच्छानुसार अन्न ले सके, युद्धकार्य बन्द कर दिये तथा कारागार के बन्दी शत्रु-राजाओं को मुक्त करने की आज्ञा देते हैं, देवालयों में विशिष्ट उत्सव मनाये जाते हैं।[5] ऐसा प्रतीत होता है कि यह वर्णन तत्कालीन चोल राजाओं द्वारा हर्ष प्रकट करने की विशेष विधियों पर आधारित है, क्योंकि वाल्मीकि-रामायण, अध्यात्म रामायण, और रामचरितमानस आदि में सोना, गाय, वस्त्र आदि के अत्यधिक दान देने के अतिरिक्त इस प्रकार का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

कम्बन ने कोशल देश के वर्णन में जहाँ एक ओर उत्तम सदाचार का वर्णन मिलता है, वहीं दूसरी ओर शृंगार एवं विलासिता की मधुरिमा नृत्य करती है। परस्पर विरोधी इन दोनों में सहज रूप में सामंजस्य स्थापित कर सकना सरल नहीं है। देश की समृद्धि एवं सम्पन्नता से प्रभावित मद्यपों का चित्रण भी कुछ इसी

---

१. कम्ब-रामायण २/१/७३।
२. उपर्युक्त १/४/१८।
३. उपर्युक्त ३/७/३।
४. कम्ब-रामायण, सुन्दरकाण्ड, पिणिवींट्टुपड़लम्, ५/१२/६९-७७।
५. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड. तिरुअवतारप्पड़लम् १/५/११०-११२।

प्रकार का है। काव्य-सौन्दर्य की दृष्टि से यह चित्रण अधिक सफल है, किन्तु समाज के लिये तुलसीदास सदृश प्रभावशाली आदर्श कम्बन अपने इस प्रकार के वर्णनों के कारण प्रस्तुत नहीं कर सके हैं।

तुलसीदास-कालीन राजनीतिक परिस्थिति

कम्बन-कालीन राजनीतिक परिस्थिति की तुलना में तुलसीदास-कालीन राजनीतिक परिस्थिति पूर्णतया भिन्न थी। कम्बन-कालीन शासक वेदाभिमानी, प्रजा के पोषक और रक्षक थे, तो तुलसीदास-कालीन शासक शोषक और भक्षक। तुलसीदास के समय का इतिहास विदेशी तथा क्रूर यवन शासकों के वीभत्स अत्याचारों का इतिहास है। कवि ने तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति का यथार्थ और भयावह चित्र मानस में कलियुग वर्णन के माध्यम से चित्रित किया है। मानस में अनेक स्थलों पर कलियुग का यह वर्णन मिलता है। इस वर्णन पर तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। मानसकार ने तत्कालीन म्लेच्छ-शासन को रावण-राज्य के पर्याय के रूप में चित्रित करके दुष्ट म्लेच्छों के अत्याचारपूर्ण शासन के उन्मूलनार्थ सम्पूर्ण हिन्दू जनता को "निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह।"[१] की प्रतिज्ञा करने वाले एकमात्र राम की शरण में लाकर, विभाजित शक्ति को संगठित करके इस पीड़ादायिनी स्थिति से मुक्त होने का मार्ग निराश हिन्दू जनमानस के सम्मुख प्रस्तुत किया। तुलसीदास ने तत्कालीन शासन को रावण-शासन के रूप में चित्रित किया है। इस दुराचारी शासन का अन्त वे राम द्वारा कराते हैं। "रामराज्य" के रूप में कवि ने एक आदर्श राज्य की परिकल्पना की है। कवि ने "सत्यं, शिवं, सुन्दरम्" सर्वोत्तम तत्त्वों को कुशलतापूर्वक "राम-राज्य" में निरूपित किया है। मानसकार द्वारा मानस में निर्मित रेखाचित्रों से तत्कालीन धर्मान्ध मुग़ल सम्राटों के राज्य का चित्र स्पष्ट एवं साकार होता है।

निष्कर्ष

कम्ब-रामायण में कम्बन ने निज-कालीन राजनीतिक परिस्थिति का यत्र-तत्र सामान्य रूप में उल्लेख किया है, जबकि रामचरितमानस में तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति का विस्तारपूर्वक वर्णन मिलता है। दोनों कवियों के समय की राजनीतिक परिस्थिति में पर्याप्त भिन्नता है। कम्बन-कालीन शासक वेदों में आस्थावान् हिन्दू थे जिनको अपनी प्रजा अपत्यवत् प्रिय थी। वे जनता के हितकारी शासक थे। इसके विपरीत तुलसीदास-कालीन शासक म्लेच्छ थे जिनकी गहरी आस्था इस्लाम में थी। वे प्रजा शोषक एवं भक्षक थे। उनके अत्याचार से हिन्दू जनता त्रस्त थी तथा वह भयानक यातनाएँ भुगत रही थी।

---

१. रामचरितमानस, ३/९।

धार्मिक परिस्थिति

कम्बन-कालीन धार्मिक परिस्थिति

आलवारों द्वारा तमिळनाडु में वैष्णव धर्म की ऐसी धारा प्रवाहित हुई कि इस प्रवाह में शेष बचे हुए जैन और बौद्ध भी प्रवाहित हो गये। आलवारों के पश्चात् तीन धुरन्धर वैष्णव धर्माचार्य हुए हैं—नाथमुनि, यामुनमुनि और रामानुज-मुनि (श्रीभाष्यकार—१००८)। शंकराचार्य के समय में वैष्णवों तथा शैवों में परस्पर विरोध बिलकुल नहीं था, स्वयं शंकराचार्य भी पंचायन (गणेश, सूर्य, शिव, शक्ति और विष्णु) पूजक थे। यही नहीं, शैव-वैष्णव में परस्पर विवाह सम्बन्ध भी होता था। इन दोनों वैदिक मतावलम्बियों में परस्पर विरोध उस समय नहीं था। इन दोनों का विरोध था तो अवैदिक मतावलम्बियों, बौद्धों तथा जैनियों से। शैव तथा वैष्णव आचार्य जब तक अवैदिक मतावलम्बियों—जैनियों-बौद्धों के उन्मूलन में व्यस्त रहे, तब तक उनमें परस्पर सहिष्णुता थी। जैनों तथा बौद्धों का प्रभाव घटते ही (नवीं शताब्दी के पश्चात्) इन वैदिक मतों में परस्पर प्रतिद्वन्द्विता प्रारम्भ हो गयी। फलतः परस्पर विरोध एवं कटुता में उत्तरोत्तर वृद्धि ही होती गयी।

कम्बन के जन्म के बहुत पूर्व ही वैष्णव धर्म प्रतिष्ठित हो चुका था। इसका प्रसार-प्रचार भी अब तक प्रभूत रूप में हो चुका था। वैष्णव परिवार में उत्पन्न होने के कारण कवि की वैष्णव धर्म के प्रति आस्था स्वाभाविक थी। यह आस्था आलवारों के साहित्य "दिव्यप्रबन्ध" के गहन अध्ययन के कारण और भी बलवती हुई। अतः कम्बन को अत्यन्त कट्टर वैष्णव होना चाहिए था, किन्तु कवि की यह सहिष्णुता तथा अत्यन्त उदार दृष्टि है कि वे शिव तथा राम दोनों को समान आदरभाव से अपने काव्य में प्रस्तुत करते हैं। इसी उदारतावश शिव की प्रसंगा-नुसार प्रशंसा भी आलोच्य ग्रन्थ में मिलती है। आलोच्य कवि की यह सहिष्णुता उसके समन्वयवादी धार्मिक दृष्टि का परिचायक है।[१] कम्बन ने विष्णु के समान ही शिव को भी महान् रूप में वर्णित किया है।[२] कम्बन ने समन्वय की भावना-वश ही शंकर को विष्णु सदृश माना है, वह विष्णु के द्वारा शंकर को भगवान् कहलवाते हैं।[३] कवि ने रामावतारम् के माध्यम से धार्मिक ऐक्य-स्थापना का पूर्ण-रूपेण प्रयास किया है।

---

१. कम्ब-रामायण, किष्किन्धकाण्ड, नाड, बिट्पड़ळम्-४/१२/२४।

२. कम्ब-रामायण, युद्धकाण्ड, वीडणन्अडैक्कळपड़ळम्।

३. कम्ब-रामायण, युद्धकाण्ड, मीट्टचिप्पड़ळम् ६/४१/२३।

कम्बन-कालीन समाज में देवी-देवताओं की भी पूजा प्रचलित थी—आलोच्य ग्रन्थ में इसका उल्लेख मिलता है। समाज में वेद-विरोधियों के प्रति उपेक्षा और तिरस्कार का भाव था। आलोच्य कवि ने अवैदिकों को नरकगामी कहा है।[१]

कम्ब-रामायण-कालीन समाज में विद्यमान विविध धार्मिक सम्प्रदायों तथा आश्रमों का वर्णन मिलता है।[२] तत्कालीन समाज में विभिन्न धार्मिक मत एवं सम्प्रदाय थे, किन्तु उनमें शैव तथा वैष्णव ही प्रमुख थे। इन्हीं दोनों सम्प्रदायों के प्रति अधिकाधिक जनता में श्रद्धा थी। समाज में ब्राह्मणों का स्थान सर्वोच्च था। लोग धार्मिक प्रवृत्ति के थे, मन्दिरों, देवोत्सवों और यज्ञों में अधिकांश लोग भाग लेते थे।[३] लोग अपना अधिकाधिक समय वेदाध्ययन, वैदिक कर्म-काण्डों के अनुष्ठान तथा अग्निहोत्रादि में लगाते थे। आलोच्य ग्रन्थ में कवि की दृष्टि वैदिक परम्परा के अनुकूल है। दक्षिण भारत में आज भी लोगों में वेदों के प्रति अधिक श्रद्धा है और वेदाध्ययन की परम्परा उत्तर भारत की तुलना में अधिक अक्षुण्ण है।

इस प्रकार कम्बन-कालीन समाज में वैदिक मत ही आदृत था, यद्यपि तत्कालीन समाज में वेद-विरोधी मतों का भी उल्लेख प्राप्त होता है, किन्तु इसका प्रभाव मुख्यतः निम्नवर्गीय अशिक्षित एवं अन्धविश्वासी लोगों पर था। समाज का शिक्षित एवं कुलीन समुदाय इनके प्रभाव से पूर्णतः अप्रभावित रहा। कम्बन-कालीन शासक भी वेदों के प्रति ही आस्थावान थे।

तुलसीदास-कालीन धार्मिक परिस्थिति

तुलसीदास के समय की धार्मिक स्थिति, कम्बन-कालीन धार्मिक स्थिति से पूर्णतया भिन्न थी। कम्बन-कालीन शासक वेदाभिमानी हिन्दू थे, तो तुलसीदास कालीन शासक यवन, जिन्होंने एक हाथ में तलवार तथा दूसरे हाथ में कुरान लेकर भारत में प्रवेश किया था। पहले तो तलवार की शक्ति से उन्होंने उत्तर भारत के राजाओं को पराजित करके जनता तथा यहाँ के मन्दिरों से अपार धन-सम्पत्ति लूटा, तत्पश्चात् यहाँ शासक के रूप में बस गये। वे यहाँ अपने धर्म का प्रचार जोर-शोर से करने लगे तथा हिन्दुओं को तरह-तरह के प्रलोभन और शक्ति द्वारा बलपूर्वक मुसलमान भी बनाने लगे। हिन्दू समाज बाह्य और आन्तरिक (राजनैतिक-धार्मिक) दोनों ओर से संकटों के बीच घिरा हुआ था। उसके अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, नगरनीङ्गुपङ्ळम् २/४/१७८।
२. उपर्युक्त, ३/८/२०।
३. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, नाट्टुप्पङ्ळन् १/२/५६।

लगा था। शासन की बागडोर यवन-शासकों के हाथ में होने के कारण जनता आर्थिक शोषण की शिकार थी और उनके नाना प्रकार के अत्याचारों से पीड़ित थी। धार्मिक शक्ति विभिन्न धार्मिक मतों-सम्प्रदायों के कारण एक से अनेक भागों में विभक्त थी। शैव-वैष्णव का परस्पर मतभेद अपनी चरम सीमा पर था। इन सम्प्रदायों में भी शाखाएँ, उप-शाखाएँ बनती जा रही थीं जिसका परिणाम हुआ धार्मिक शक्ति-एकता का क्षय। हिन्दू समाज आन्तरिक विघटन के कगार पर खड़ा, मात्र एक झटके की प्रतीक्षा कर रहा था। ऐसी विकट धार्मिक परिस्थितियों के बीच तुलसीदास ने अपनी उत्कृष्ट प्रतिभा से निराश हिन्दू जनमानस के सम्मुख रामचरितमानस-रूपी एक अत्यन्त सुन्दर आदर्श प्रस्तुत किया जिसका हिन्दू जनता द्वारा हृदय से स्वागत हुआ।

आलोच्य ग्रन्थ में मानसकार ने धर्म के सन्दर्भ में अत्यन्त सहज समन्वयात्मक दृष्टि अपनाई है। उसने सभी मत-मतान्तरों के बीच परस्पर सहयोग और सहिष्णुता के सम्भावित सभी सूत्रों को ढूंढ़कर रामचरिममानस में प्रस्तुत किया है। उन्होंने शैव एवं वैष्णव मतों के बीच के गहरे अन्तराल को समाप्त करने के उद्देश्य से राम (विष्णु) को शिव-भक्त तथा शिव को राम-भक्त के रूप में स्थान-स्थान पर चित्रित किया है।[१] आलोच्य कवि ने इसी महत् उद्देश्य से मर्यादा-पुरुषोत्तम लोकनायक राम द्वारा भगवान् शिव की प्रशंसा तथा पूजा कराते हैं। राम ने शिव को अपने से भी श्रेष्ठ कहा है।[२] मानसकार ने समन्वय की दृष्टि से रामचरित-मानस में वैदिक देवों, पृथ्वी, ब्रह्मा, इन्द्र, यम आदि का भी उल्लेख करके उन्हें मान्यता दी है। कवि अत्यन्त चातुर्य के साथ इन देवों का मानस में उल्लेख तो करता है, किन्तु इनकी आराधना को प्रतिष्ठापित नहीं करता। ये सभी वैदिक-देव राम के कार्य में प्रोत्साहनकर्ता की भूमिका निभाते हैं, किन्तु मानसकार इन देवताओं की स्वार्थप्रियता की निन्दा भी करता है।[३] तुलसीदास ने अपनी अद्वितीय प्रतिभा से सभी विखण्डित धर्मों को एकता-सूत्र में पिरोकर उन्हें रामचरितमानस में स्थान दिया है तथा तत्कालीन प्रचलित सभी धर्मों को सुसमन्वित किया है।

इस प्रकार तुलसीदास ने अत्यन्त विकट धार्मिक परिस्थितियों में निराश हिन्दू जनमानस के सम्मुख, उच्च आदर्श प्रस्तुत करके जिस सहजता एवं कुशलता से सभी को एकता के सूत्र में संगृहीत किया है, वह व्यक्तित्व का परिचायक है।

---

१. रामचरितमानस १/१०४/३,४ १/१०६/१।
२. रामचरितमानस, ६/२, ६/३।
३. उपर्युक्त, २/१२/३।

प्रतिभा एवं इसी समन्वयकारी दृष्टि के कारण डॉ० जार्ज ग्रियर्सन ने तुलसीदास की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है और उन्हें महात्मा बुद्ध के बाद उत्तर भारत का श्रेष्ठतम लोकनायक कहा है।

निष्कर्ष

कम्बन और तुलसीदास-कालीन धार्मिक परिस्थितियाँ परस्पर पूर्णतः भिन्न हैं। कम्बन-कालीन शासक वेद-अभिमानी हिन्दू थे, तो तुलसी-कालीन शासक कुरान में गहरी आस्था रखने वाले यवन। कम्बन-कालीन शासक सभी क्षेत्रों में उन्नति का प्रयास करके जनता को सुखी बनाने में तत्पर थे, तो तुलसीदास-कालीन शासक सब प्रकार से जनता का शोषण कर रहे थे। कम्बन-कालीन शासकों ने धर्म-सम्मत शासन-व्यवस्था स्थापित की थी, तो यवन-शासक जनता को हठात् धर्म-परिवर्तन के लिए विवश कर रहे थे। दोनों कवियों के समय में समान रूप से धार्मिक विद्वेष पाया जाता है। दोनों की ही दृष्टि समयानुकूल तथा सन्दर्भानुकूल है जो समाज के लिए श्रेष्ठ आदर्श प्रस्तुत करती है।

आर्थिक परिस्थिति

कम्बन-कालीन आर्थिक परिस्थिति

बारहवीं शताब्दी में दक्षिण भारत में चोल शासकों का शासन था। चोल-साम्राज्य मात्र सैनिक-दृष्टि से ही शक्तिशाली नहीं था, अपितु आर्थिक दृष्टि से भी अत्यन्त समृद्ध था। इस शताब्दी में चोल-साम्राज्य अपनी उन्नति की पराकाष्ठा पर था। सर्वत्र समृद्धि थी। कम्ब-रामायण में भी इस आर्थिक सम्पन्नता की झलक स्पष्ट मिलती है। चोल-शासकों का व्यापार विदेशों तक होता था जिससे उन्हें अत्यधिक लाभ होता था, इसका स्पष्ट उल्लेख कम्ब-रामायण में मिलता है।

कोशल देश का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि वहाँ के नागरिकों की समृद्धि का वर्णन कौन कर सकता है? बड़ी-बड़ी नावें विदेशों से अनेक प्रकार की निधियाँ भरकर लाती हैं। वसुमती विविध शस्यों के रूप में अनन्त समृद्धि देती है। खानों से बहुमूल्य रत्न निकलते हैं। राज्य की आय का मुख्य स्रोत देशी-विदेशी व्यापार था। अन्तर्राज्यीय व्यापार भी उन्नति पर था। गुड़, शहद, दही, मद्य आदि भी एक राज्य से दूसरे राज्यों में स्थानान्तरित होते रहते थे।[२] अधिकांश व्यापार विनिमय-प्रणाली से होता था।

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, नाट्टुप्पड़ळम्, १/२/३८।
२. उपर्युक्त १/२/५५।

चोल राजाओं की स्थल तथा नौ-सेना बहुत शक्तिशाली एवं सुव्यवस्थित थी। इस कारण इनका व्यापार पूर्णतः सुरक्षित था। इससे व्यापारी व्यापार-कार्य में अधिक रुचि लेते थे। इनके समय में विदेशों से व्यापार विशेष उन्नति पर था। आलोच्य ग्रन्थ में इसका उल्लेख उपलब्ध है।[1] इस प्रकार देशी-विदेशी व्यापार के कारण सम्पूर्ण चोल-साम्राज्य स्वर्ण-रत्नों से परिपूर्ण था।[2]

कम्बन-कालीन समाज अत्यन्त समृद्ध था—इसका उल्लेख कम्ब-रामायण में बारम्बार हुआ है। कम्ब-रामायण के बालकाण्ड में नाट्टुप्पड़ळम् का वर्णन तत्कालीन समृद्धता का परिचायक है। वहाँ (कोशल देश में) कोल्हुओं (गन्ने का रस निकालने का एक प्राचीन यंत्र) से गन्ने का रस झरने की तरह बहता है, नारियल के कटे हुए घौदों (फलों) से मीठा रस चू रहा है। ये बहने वाले सभी रस एक साथ मिलकर धारा का रूप धारण कर जब समुद्र में जाकर गिरते हैं, तो समुद्र की मछलियाँ इन रसों को पीकर मस्त हो जाती हैं।[3]

वहाँ (कोशल देश) की रमणियों के सौन्दर्य का क्या कहना ? उनके मधुर स्वर, मनोहर कटाक्ष—जो कटार-सदृश पैने हैं, पुरुषों के मन को मुग्ध कर लेते हैं, उनकी विद्युत् की-सी छटा अवर्णनीय है, उनके केश-पुष्प, कस्तूरी आदि सुगन्धित द्रव्यों से सुवासित हैं। जब वे नदियों में स्नान करती हैं, तो नदी का जल उनके केश गन्ध से सुवासित हो जाता है। वह जल समुद्र में जाकर उसकी दुर्गन्ध को मिटा देता है।[4]

तत्कालीन समाज में सर्वत्र सम्पन्नता थी, साथ ही साथ जीवन अत्यन्त सात्त्विक था। जीवन-पद्धति वेदोक्त नियमों पर ही आधारित थी अगरु-पाक-शालाओं, गुड़ की भट्टियों और वेदों की ध्वनि से गुञ्जित यज्ञशालाओं का धूम—ये सब मिलकर बादल बन जाते हैं तथा (अयोध्या के) गगन में फैल जाते हैं।[5]

कम्ब-रामायण के बालकाण्ड के 'नगरप्पड़ळम्' में अयोध्या के प्रसादों का वर्णन अतिशयोक्तिपूर्ण प्रतीत होता है, किन्तु वह तत्कालीन अतिविकसित वास्तुकला तथा आर्थिक समृद्धि का सूचक है। सुसमृद्ध तथा उत्तम आर्थिक स्थिति वाले कम्बन-

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, नाट्टुप्पड़ळम्, १/२/५१।
२. उपर्युक्त १/२/३८, १/२/५१।
३. उपर्युक्त १/२/१०।
४. उपर्युक्त १/२/१२।
५. उपर्युक्त १/२/४१।

कालीन समाज में स्त्रियाँ सर्वदा धार्मिक कर्मों में निरत रहती थीं ।[1] सभी निवासी धार्मिक-कृत्यों के अतिरिक्त कोई अन्य कार्य नहीं करते थे । तत्कालीन समाज में स्त्रियों का बहुत सम्मान था तथा वे अत्यन्त पवित्र आचरण वाली थीं ।[2] वे अपने स्वर्णप्रासादों में अगरु-धूम प्रासारित करती रहती थीं ।[3]

तत्कालीन सुसमृद्ध समाज में बालिकाओं की बोली सुन्दर वेणुनाद-सदृश अलकजाल से सुशोभित युवतियों की बोली मकर-वीणा की ध्वनि-सदृश तथा प्रौढ़ रमणियों की बोली मधु-विक्रेता के संगीत-सदृश थी ।[4] सभी स्त्रियों को पवित्र आचरण की शिक्षा दी जाती थी । समाज में दान का महत्त्व नहीं था, क्योंकि याचक नहीं थे, सत्यवचन का महत्त्व नहीं था, क्योंकि असत्यभाषी नहीं थे । पण्डितों-विद्वानों का महत्त्व नहीं था, क्योंकि सभी बहुश्रुत तथा ज्ञानी थे ।[5]

तमिळ भाषा के अत्यन्त प्राचीन लक्षण-ग्रन्थ—'तोळकाप्पियम्' में भूमि को पाँच प्रकारों – १. कुरिञ्चि (पर्वतीय भू-भाग) २. मुळ्ळै (वन-प्रदेश) ३. मरुदम (सिंचाई की सुविधा वाला समतल मैदान) ४. नय्दळ् (सागरतटीय भू-भाग) ५. पाळै (मरुस्थल क्षेत्र) — में विभक्त किया गया है । कम्ब-रामायण में भूमि के इन पाँचों प्रकारों का आर्थिक दृष्टि से भी वर्णन कवि ने किया है ।

आर्थिक दृष्टि से सुसमृद्ध कोशल देश के वर्णन में कम्बन-कालीन सुसम्पन्न समाज की स्पष्ट झलक मिलती है जिसमें नागरिकों की आर्थिक दशा बहुत ही अच्छी थी । उसमें स्त्रियाँ सब प्रकार से प्रसन्न तथा स्वतन्त्र थीं । तत्कालीन समाज में स्त्रियाँ सर्वथा सम्मानीया थीं ।

तुलसीदास-कालीन आर्थिक परिस्थिति

कम्बन और तुलसीदास-कालीन समाज में नारी की आर्थिक स्थिति में अत्यधिक भिन्नता पायी जाती है जो तत्कालीन शासन-व्यवस्था से प्रभावित है । तुलसीदास-कालीन शासक म्लेच्छ थे । उनका लक्ष्य जनता के लिए उत्तम शासन-व्यवस्था न देकर, राजकोष की वृद्धि करना था । अतः वे सब प्रकार से जनता का शोषण कर रहे थे । जनता में सर्वत्र हाहाकार मचा हुआ था । कम्बन-कालीन समाज

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, नाट्टुप्पड़ळम् १/२/४३६ ।
२. उपर्युक्त १/२/५९ ।
३. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, नगरप्पड़ळम्, १/३/४२ ।
४. उपर्युक्त १/३/११ ।
५. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, नाट्टुप्पड़ळम्, १,२/५३ ।

में कोई दान लेने वाला ही नहीं था, क्योंकि सभी धन-धान्य से परिपूर्ण थे, किन्तु तुलसीदास-कालीन समाज में दाताओं के पास दान देने के लिए ही कुछ नहीं था।[१] दोनों कवियों के समय की आर्थिक परिस्थितियों में पूरब-पश्चिम का-सा अन्तर पाया जाता है।

इतिहास-ग्रंथों से ज्ञात होता है कि सन् १५५५-५६ ई० में दिल्ली, आगरा और हिन्दी भाषी पश्चिमी क्षेत्रों में भीषण अकाल पड़ा था। ऐसा ही भयंकर अकाल सन् १५९५-१५९८ ई० के बीच भी पड़ा था। बार-बार की इन दैवी आपदाओं से भी तुलसीदास-कालीन जनता की आर्थिक दशा बहुत ही शोचनीय थी। खाद्यान्नों के अभाव से पीड़ित जनता मर रही थी। 'बारहिं बार दुकाल परै' का रामचरितमानस में उल्लेख मिलता है।[२] ऐसी अत्यन्त दयनीय आर्थिक स्थिति में नारियों की स्थिति भी शोचनीय थी। तत्कालीन नारियों की आर्थिक दशा का चित्रण करते समय निश्चितरूपेण कवि के नेत्र अश्रुपूरित होकर छलछला गये होंगे, क्योंकि उनकी दशा थी ही कुछ ऐसी। कम्बन-कालीन जो नारी सर्वथा दान देती रहती थी, जिनके केश पुष्प, कस्तूरी आदि अनेक सुगन्धित द्रव्यों से सुवासित रहते थे, तुलसीदास-कालीन समाज में उसी नारी के अब केश ही एक मात्र आभूषण थे, अर्थात् उनके शरीर पर अन्य कोई आभूषण शेष नहीं था। वे सर्वदा भूख से पीड़ित रहती थीं। वे धनहीन और बहुत प्रकार की ममता होने के कारण दु:खी रहती थीं।[३] विपन्नता ने मनुष्य की नैतिकता को भी बुरी तरह से प्रभावित कर दिया था। तत्कालीन समाज में इतनी विकट निर्धनता एवं आर्थिक तंगी थी कि 'जाति-कुजाति' सभी लोग भीख माँगने वाले हो गये थे।[४]

निष्कर्ष

कम्बन-कालीन समाज तथा तुलसीदास-कालीन समाज में नारियों की आर्थिक स्थिति एक दूसरे से पूर्णतः भिन्न थी। कम्बन-कालीन समाज में आर्थिक सम्पन्नता थी। फलतः नारी अत्यन्त सुखमय तथा सम्मानीय स्थिति में थी जिसका

---

१. कवितावली ७/७९।

२. रामचरितमानस, ७/१०१/३।

३. "अबला कच भूषन भूरि छुधा।
धनहीन दुखी ममता बसुधा।।"—रामचरितमानस, ७/१०२/१।
"कलिकाल बिहाल किये मनुजा। नहिं मानत कोउ अनुजा तनुजा।।
नहिं तोष बिचार न सीतलता। सब जाति कुजाति भये मगता।।"
—रामचरितमानस ७/१०२/३

भौतिक जीवन बहुत ही विलासपूर्ण था । तुलसीदास-कालीन नारी की स्थिति इसके पूर्णतः प्रतिकूल थी। उसकी स्थिति बहुत शोचनीय थी। वह क्षुधा से भी पीड़ित थी। वह अनेक कष्टों को भुगत रही थी। कम्बन-कालीन नारी परिवार तथा समाज में सर्वत्र सम्मानीया थी, उसकी आर्थिक स्थिति भी सम्मानपूर्ण थी, किन्तु तुलसीदास-कालीन समाज में उसकी स्थिति इसके ठीक विपरीत थी। वह समस्याओं के दलदल में फँसी हुई थी। इन्हीं कारणों से कम्बन-कालीन नारी धर्मोन्मुख थी, तो तुलसीदास-कालीन धर्म-विमुख ।

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस के नारी पात्रों पर तत्कालीन दक्षिण भारत और उत्तर भारत की संस्कृति का प्रभाव

भारतीय हिन्दू समाज पुण्य-सलिला गंगा सदृश परम पवित्र है जिसमें अनेक छोटी-बड़ी नदियाँ हजारों मील की यात्रा पूरी करके मिलती हैं, मिलने के उपरांत सब अपने पूर्वनाम तथा अस्तित्व को छोड़कर उसी में विलीन हो जाती हैं —'यथा नद्य स्यन्दमानाः समुद्रेअस्ततंगच्छन्ति नामरूपे विहाय ।''[1] नदी की जलराशि एवं प्रवाह की गति में सबका योगदान सम्मिलित हो जाता है। नदी के मिलन-स्थल से आगे बढ़ने पर, उसमें मिलने वाली नदियों के नाम का भी लोगों को ज्ञान नहीं रहता, लोग उसे भूल जाते हैं। इन नदियों की जलराशि के मध्य वही धारा प्रधान होती है जिसमें अन्य नदियाँ आकर मिलती हैं। भारतीय संस्कृति की धारा भी कुछ ऐसी है जिसमें अनेक जातियों, संस्कृतियों की हजारों नदियाँ विलीन हो गयी हैं। सैन्यशक्ति द्वारा भारत को अपने अधीन बनाने वाले शासक भी भारतीय संस्कृति द्वारा पराजित हुए। विदेशी इस भारतीय संस्कृति के गहरे रंग में अपना पूर्व स्वरूप खो बैठे तथा इसी की इकाई बन गये । सहस्रों वर्षों के इतिहास में किसी भी विदेशी शासक को अपनी भाषा, प्रथा और अपने विचारों को इस पर थोपने में सफलता नहीं मिली। अगर किसी को कुछ सफलता मिली भी, तो वह अत्यन्त सतही एवं क्षणिक थी जिसका प्रभाव शीघ्र ही समाप्त हो गया। इस विश्व में अनेक सभ्यताएँ नष्ट हो गयीं, किन्तु विगत पाँच हजार वर्षों से मिस्र और बेबीलोन की सभ्यताओं की तरह प्राचीन भारतीय संस्कृति और सभ्यता अपने पूर्व-स्वरूपानुसार अद्यावधि अक्षुण्ण है ।

अनेक जातियों-संस्कृतियों का समुज्ज्वल समुच्चय आज हिन्दू समाज कहलाता है। इस समाज की संस्कृति का नाम हिन्दू संस्कृति है। यह वह संस्कृति है जिसमें कश्मीर से अण्डमान-निकोबार द्वीप समूह तथा अरब सागर से पूर्व में चीन की सीमाओं तक आर्य और द्रविड़ संस्कृति समन्वित है। कम्ब-रामायण और राम-

१. उपनिषद् ।

चरितमानस द्रविड़ और आर्य संस्कृति की प्रतिनिधि रचनाएँ हैं। तत्कालीन दोनों संस्कृतियों के उन प्रभावकारी कारकों को जिन्होंने आलोच्य ग्रन्थों में नारी पात्रों के चित्रण को प्रभावित किया है, उन्हें ही प्रस्तुत अध्याय में अध्ययन का प्रमुख बिन्दु बनाया गया है—

'सम्' उपसर्गपूर्वक 'कृ' धातु से भूषण-अर्थ में सुट् का आगम होने पर 'क्तिन्' प्रत्यय (के समन्वय) से 'संस्कृति' शब्द बनता है जिसका अभिप्राय है—'भूषण भूत सम्यक् कृति' सम्पूर्ण सृष्टि में मात्र मानव योनि ही प्रज्ञासम्पन्न है जो सम्यक्-असम्यक् के विवेचन में सक्षम है। जिन प्रयत्नों के द्वारा मनुष्य के जीवन में वेदोक्त विधियों से सर्वतोमुखी उत्थान हों, ऐसे प्रयत्न भूषणभूत सम्यक् कृति कहे जाते हैं। इस प्रकार मनुष्य के लौकिक-पारलौकिक समग्रतः उत्थान के अनुरूप सभी आचार-विचार 'संस्कृति' हैं।

अनेकता में एकता स्थापित करने वाली सम्पूर्ण भारत-भूमि की संस्कृति एक है। भारतीय संस्कृति आर्य, द्रविड़ आदिवासी इत्यादि विभिन्न संस्कृतियों के समन्वय का प्रतिफल है। विविध भाषाओं की रचनाओं में उनकी अपनी अपनी प्रादेशिक विशेषताओं का भी प्रकाशन हुआ है। ये दोनों आलोच्य ग्रन्थ भी इसके अपवाद नहीं हैं। इनके वर्णन भी इनकी अपनी प्रादेशिक संस्कृति एवं परम्पराओं से प्रभावित हैं।

अनादिकाल से भारतीय जनमानस में यह धारणा रही है कि 'पुत् नाम्नः नरकात् त्रायते इति पुत्रः' अर्थात् 'पुत' नामक नरक से पुत्र माता-पिता की रक्षा करता है। 'अपुत्रस्य गृहं शून्यम्'—ऐसी धारणा भारतीय समाज में सर्वदा रही है। अतः पुत्र-प्राप्ति के लिए कई विवाह भी किये जाते रहे हैं। दोनों आलोच्य ग्रन्थों में दशरथ, रावण आदि की कई रानियों का उल्लेख मिलता है। पुत्र-प्राप्ति के लिए यज्ञ, तपस्या आदि भी किये जाते रहे हैं। महाराजा दशरथ अपनी इस व्यथा को वशिष्ठ से कहते हैं।[१] वे उनके परामर्श से इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु 'पुत्रेष्टि यज्ञ' करते हैं।

दक्षिण भारत—प्रमुख रूप में तमिळनाडु में सुमंगली नारियाँ अपने बालों में फूलों की मालाएँ या फूल अवश्य लगाती हैं, मंगल-सूत्र पहनती हैं, किन्तु विधवा होने पर वे इसे धारण नहीं करती हैं। हमें कम्ब-रामायण में यह वर्णन मिलता है। कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन तत्कालीन दक्षिण भारत की संस्कृति के प्रभाव से ही मिलता है। उत्तर भारत में यह प्रथा नहीं है। इसी कारण बालों में फूलों की माला तथा फूल लगाने और गले में मंगल-सूत्र पहनने का वर्णन रामचरितमानस में उपलब्ध नहीं होता।

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, तिरुअवतारप्पड़ळम्, १/५/२-४।

तुलसीदास-कालीन समाज में सौभाग्यवती तो 'विभूषनहीना' थीं किन्तु विधवाएँ नित्य नवीन शृंगार करती थीं।[1] मानसकार ने इसकी कटु शब्दों में निन्दा की है। दक्षिण भारत में विधवाओं के लिए कुछ विशिष्ट नियम है जिसके अनुसार वे मंगल-सूत्र नहीं पहनतीं तथा बालों में पुष्प-माला धारण नहीं करतीं, क्योंकि उनके तो बाल ही काट दिये जाते हैं। दशरथ के मृत्यूपरान्त कौशल्या, कैकेयी, सुमित्रा तथा बालि-वध के पश्चात् तारा[2] का चित्रण कम्ब-रामायण में इसी प्रकार मिलता है। उत्तर भारत की संस्कृति के अनुकूल रामचरितमानस में बालों में पुष्प-माला तथा गले में मंगल-सूत्र पहनने का उल्लेख प्राप्त नहीं होता।

दक्षिण भारत की संस्कृति के अनुकूल ही कम्ब-रामायण में नारियों का ही नहीं, पुष्प-मालाओं से अलंकृत शिखा वाले पुरुषों का भी वर्णन प्राप्त होता है। इसका अलग-अलग नाम होता था—शिखा में पहनी जाने वाली पुष्प-माला को 'कण्णित्' तथा गले में पहनी जाने वाली माला को 'तार' कहा जाता था। यह समाज के सभी वर्गों में प्रचलित था, किन्तु ब्रह्मचारी, संन्यासी और विधवाएँ इसके अपवाद थे। अपने पतियों/प्रेमियों पर कुपित होने पर पत्नियाँ/प्रेमिकाएँ अपना क्रोध प्रकट करने के लिए इन पुष्प-मालाओं को तोड़कर फेंक देती हैं।[3] यह उस समय उनके क्रोध की पराकाष्ठा को प्रकट करता है। उत्तर भारत की परम्परा और संस्कृति में दक्षिण भारत की तुलना में क्षेत्रीय कारणों वश कुछ भिन्नता है, इसी कारण रामचरितमानस में ऐसा चित्रण नहीं मिलता।

तत्कालीन समाज में दक्षिण भारत में वैष्णव धर्म का अधिक प्रभाव था। फलतः अपनी अभीष्ट की सिद्धि हेतु या सिद्ध होने पर लोग लक्ष्मीनारायण के मन्दिर में उनकी (लक्ष्मी-नारायण की) अभ्यर्थना करते हैं, यथा राम के पट्टाभिषेक का समाचार प्राप्त होने पर कम्ब-रामायण के वर्णन में कौशल्या, सुमित्रा के साथ 'नारायण' के मन्दिर में जाती हैं।[4] प्रायः सुमंगली स्त्रियाँ पति-पुत्र आदि के हितार्थ व्रत रहती हैं तथा अपने आराध्य देव के मन्दिर में पूजा करने जाती हैं। रामचरित-

---

१. सौभागिनीं विभूषन हीना। विधवन्ह के सिंगार नवोना॥—रामचरितमानस, ७/९९/३।

२. कम्ब-रामायण, किष्किन्धाकाण्ड, किट्किन्वैप्पड़ळम्, ४/१०/५।

३. कम्ब-रामायण; बालकांड, पुनळ्विकेयाट्ट्प्पड़ळम्, १/१६ २५ अयोध्याकांड तथा मन्थरेशूळ्च्चिप्पड़ळम्, २/२/८६।

४. कम्ब-रामायण, अयोध्याकांड, मन्दिरप्पड़ळम्, २/१/९४।

मानस में राम के राज्याभिषेक की सूचना प्राप्त होने पर आनन्द में मग्न कौशल्या ब्राह्मणों को बुलाकर बहुत दान देती हैं। वे 'ग्रामदेवि', 'सुर' और नागों की पूजा करती हैं तथा 'बलिभागा' देने को कहा (मनौती की)।[१] एक समान अवसर पर एक ही घटना एवं उसी नारी पात्र के चित्रण में दोनों आलोच्य ग्रन्थों में पायी जाने वाली इस भिन्नता का प्रमुख कारण तत्कालीन उत्तर और दक्षिण भारत की संस्कृति, धर्म तथा मान्यताओं का प्रभाव है।

दक्षिण भारत में नारियों के मदिरापान को बुरा नहीं माना जाता है तथा उत्तर-भारत की तरह उन्हें इसके लिये हेयदृष्टि से नहीं देखा जाता। यही कारण है कि कम्ब-रामायण में बालकाण्ड के पूरे एक पटल—'उण्डाट्ट्प्पड़ळम् (मद्यपानपटल) में स्त्रियों के मद्यपान का ही चित्रण मिलता है। बालकांड में पुनल्विळैयाट्ट्प्पड़ळम् (जलक्रीड़ापटल) में आद्योपान्त उनके जलक्रीड़ा तथा सामूहिक स्नानानन्द का वर्णन है जिसमें स्त्रियाँ/नायिकाएँ अपने पति/नायकों के साथ जल-क्रीड़ा करती हैं। यह वर्णन दक्षिण की परम्परा-संस्कृति के अनुकूल है तथा अति सुन्दर रूप में वर्णित है। उत्तर भारत में इसे दक्षिण भारत-समतुल्य आदर नहीं प्राप्त है जिसका कारण उत्तर भारत की परम्परा तथा संस्कृति का प्रभाव है। इसी कारण रामचरितमानस में कवि ने ऐसा वर्णन नहीं किया है।

दक्षिण भारत में यह परम्परा है कि पुत्र के विवाह में उसकी माँ, बहनें और परिवार से सम्बंधित अन्य स्त्रियाँ भी पुरुषों के साथ बरात में जाती हैं। इस परम्परा का निर्वाह करते हुए ही कम्ब-रामायण में राम के विवाह में कौशल्या, कैकेयी, सुमित्रा सब माताएँ तथा अयोध्या की स्त्रियों के अत्यन्त सज-धजकर मिथिला जाने का वर्णन मिलता है।[२] तमिळनाडु में यह प्रथा आज भी है। पुत्र के ही विवाह में नहीं, अपितु भाई-बान्धवों के पुत्रों के विवाह में अन्य परिवारों की भी स्त्रियाँ पुरुषों के साथ बरात में जाती हैं। वहाँ के विवाह में कुछ ऐसे नियम तथा विधि-विधान एवं कर्म सम्पादित होते हैं जिसमें स्त्रियों की उपस्थिति परमावश्यक होती है, यथा 'दृष्टिपरिहार', 'हारती', आँखों में अंजन लगाने की प्रथा तथा वधू के गले में 'मंगलसूत्र' ननद भी बाँधती है आदि।

---

१. पूजीं ग्रामदेबि सुर नागा।
कहेउ बहोरि देन बलिभागा॥ —रामचरितमानस, २/८/३।

२. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, एळुच्चिप्पड़ळम्।

उत्तर भारत के विवाह में उपर्युक्त प्रथाएँ सम्मिलित नहीं हैं। उत्तर भारत की संस्कृति एवं परम्पराओं के प्रभाव के कारण ही रामचरितमानस में इस प्रकार का वर्णन नहीं मिलता है।

कम्ब-कालीन समाज में सती-प्रथा पायी जाती है, यही कारण है कि दशरथ की मृत्यूपरान्त उनकी साठ सहस्र रानियों के सती हो जाने[१] का वर्णन कम्ब-रामायण में पाया जाता है। यदि किन्हीं विशेष कारणवश कोई सती नहीं हो पाती, तो वह अत्यन्त कठिन नियमों का पालन करते हुए विधवा-जीवन व्यतीत करती थी। वालि की मृत्यूपरान्त तारा का श्रेष्ठ वैधव्यपूर्ण जीवन इसका सर्वोत्तम दृष्टान्त है।[२] दशरथ के स्वर्गवास होने के पश्चात् कौशल्या, कैकेयी तथा सुमित्रा भी इसी प्रकार का विधवा जीवन व्यतीत करती हैं।[३] कम्ब-रामायण-सदृश ऐसा वर्णन सांस्कृतिक प्रभाववश रामचरितमानस में नहीं मिलता। रामचरितमानस की तारा तो बालि की मृत्यु के पश्चात् सुग्रीव से विवाह करके साम्राज्ञी बनकर राज्य-सुख में लिप्त हो जाती हैं।[४] दोनों कवियों के इस वर्णन में भिन्नता का प्रमुख कारण तत्कालीन दक्षिण भारत और उत्तर भारत की संस्कृति का प्रभाव है।

कम्ब-रामायण के चित्रण में अपने मृतक पति रावण को देखकर मन्दोदरी का प्राण निकल जाता है। कम्ब-रामायण का यह वर्णन तमिळ साहित्य के अत्यन्त प्रसिद्ध ग्रन्थ 'शिलप्पधिकारम्' के चित्रण से प्रभावित प्रतीत होता है, क्योंकि उसमें कोप्पेरुन्देवी अर्थात् प्रधान रानी अपने पति पाण्डियन नेड़ुच्चेळिशन के निधन के दूसरे क्षण ही उसके प्राण भी निकल जाते हैं।

तत्कालीन समाज में बहु-पत्नी प्रथा थी। यही कारण है कि दशरथ, रावण आदि की कई पत्नियों का उल्लेख दोनों ग्रन्थों में प्राप्त होता है। बहु-विवाह की प्रथा राजाओं में ही नहीं, ऋषियों, महर्षियों में भी पायी जाती थी, यथा याज्ञवल्क्य की मैत्रेयी और कात्यायनी दो पत्नियाँ थीं।

'शिलप्पाधिकारम्' के नायक 'कोवलन्' की विधिवत् विवाहिता पत्नी 'कण्णकी' थी। 'कोवलन्' एक अत्यन्त सम्पन्न तथा राजा द्वारा सम्मानित वणिक था। 'माधवी' नामक एक गणिका के संगीत-नृत्य पर वह एक बार राजदरबार में ही

---

१. कम्ब-रामायण अयोध्याकाण्ड, पळ्ळिपडैप्पड़ळम्, २/९/१४०-१४१।

२. कम्ब-रामायण, किष्किन्धाकांड, किट्किन्धैप्पड़ळम् ४/१०/५१।

३. उपर्युक्त, ४/१०/५२।

४. विस्तार के लिए प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में ही 'तारा' का चरित्र द्रष्टव्य है।

मुग्ध हो गया। वह उसे रखैल (उप-पत्नी) के रूप में रख लेता है जिसको उसकी परम पतिव्रता पत्नी भी बुरा नहीं मानती है।[१] इस प्रकार तत्कालीन तमिळनाडु में कुछ प्रतिष्ठित लोगों के पास एक "छोटा घर"[२] अवश्य होता था। यह भी उनके सम्मान की श्रेणी में आता था। इस "छोटे घर" की रक्षा और जीविका का सम्पूर्ण दायित्व उन्हीं संभ्रान्त लोगों पर था। तमिळनाडु के कुछ जिलों— विशेष रूप से तन्जौर में आज भी यह प्रथा पायी जाती है। '"पेरियपुराणम्" में भी बहु-पत्नी विवाह का उल्लेख प्राप्त होता है।

तमिळनाडु में विवाह के पूर्व ही लड़का-लड़की एक दूसरे से मिलकर उनको अपने लिए उपयुक्त अथवा अनुपयुक्त का सोच-विचार कर निर्णय कर लेते थे। विवाह के पूर्व उनमें परस्पर प्रेम हो जाता था। इसी संस्कृति एवं परम्परा या प्रथा के अनुसार ही कम्ब-रामायण में कवि ने विवाह के पूर्व ही सीता-राम में "पूर्वराग-प्रसंग" द्वारा दोनों में परस्पर प्रेम का चित्रण किया है,[३] किन्तु लड़का-लड़की के माता-पिता की अनुमति मिलने पर ही यह विवाह होता है। आठवीं शताब्दी से लेकर विवाह के पूर्व राम तथा सीता के पारस्परिक आकर्षण और प्रेम का उल्लेख विविध राम-काव्यों में पाया जाता है।[४] किन्तु कम्ब-रामायण में सर्व-प्रथम यह प्रसंग इतने आकर्षक रूपों में प्रस्तुत है। दक्षिण भारत की संस्कृति एवं परम्परा के प्रभाववश ही कम्ब-रामायण में "पूर्वराग-प्रसंग" वर्णित है। उत्तर भारत में यह प्रथा नहीं है, इन्हीं कारणों से रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

तमिळनाडु में वहाँ की परम्परा एवं प्रथा के अनुसार विवाह दिन में होता है और वह भी पूर्वाह्न में ही होता है। इसी कारण कम्ब-रामायण में कवि ने विवाह के पूर्व सूर्योदय का वर्णन किया है।[५] यह प्रथा तमिळनाडु में आज भी विद्यमान है तथा आज भी विवाह इसी भाँति वहाँ पर होता है। प्रातःकाल वर को स्नान करा करके सजाकर विवाह-मण्डपम् में लाते हैं। सम्भवतः दिन में विवाह होने का एक प्रधान कारण विवाह के पूर्व वर का सर्वांग क्षौर-विधान है,

---

१. शिलप्पधिकारम्।

२. उप-पत्नी या रखैली।

३. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, मिथिलैकाटिप्पड़ळम्, १/१०/३५-३७।

४. राम-कथा (उत्पत्ति और विकास)—कामिल बुल्के, प्र० संस्करण, १९५०, पृ० २८८।

५. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, कडिमणप्पड़ळम्।

क्योंकि रात्रि के समय इसका निषेध है। इस प्रकार का वर्णन रामचरितमानस में नहीं मिलता। कम्ब-रामायण में इस प्रकार के वर्णन के पाये जाने का और रामचरितमानस में ऐसे वर्णन के न पाये जाने का प्रधान कारण तत्कालीन दक्षिण तथा उत्तर भारत के संस्कृतिगत प्रभाव को माना जा सकता है।

तामिळनाडु में विवाह के दिन प्रातःकाल सात या साढ़े सात बजे के पूर्व ही, स्नान करके तिलक आदि लगाकर, वर अपने कुल-देवता की पूजा करता है, तत्पश्चात् 'विवाह-मण्डलम्' में जाता है। पुनः वर ब्राह्मणों को दान देता है। ये सभी रस्म विवाह के पूर्व ही सम्पन्न होते हैं।[१] उत्तर भारत की रीति एवं संस्कृति दक्षिण भारत की तुलना में अपने आंचलिक कारणों से कुछ भिन्न है, इसी कारण रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

उत्तर भारत में यह प्रथा है कि विवाह के समय तथा वर-पक्ष वालों के भोजन करने के समय, कन्या-पक्ष की महिलाएँ 'गाली' गाती हैं। रामचरितमानस में यहाँ की परम्परा एवं संस्कृति के अनुसार यह वर्णन पाया जाता है।[२] दक्षिण भारत की संस्कृति में ऐसी प्रथा नहीं है इसी कारण कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

तत्कालीन दक्षिण-भारत की संस्कृति में नारी को कुछ अधिक ही स्वतन्त्रता है। वे भी पुरुषों के समान ही कन्दुक-क्रीड़ा में भाग लेती हैं।[३] कम्ब-रामायण के वर्णन से ज्ञात होता है कि तत्कालीन तमिळनाडु की स्त्रियाँ नृत्य-शालाओं में जाकर नृत्य-शिक्षा प्राप्त करती थीं एवं नृत्य भी करती थीं। नृत्य-शालाओं में पुरुष-दर्शकों के होने का भी उल्लेख कम्ब-रामायण में प्राप्त होता है।[४] रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं पाया जाता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार दोनों आलोच्य ग्रन्थों के नारी-पात्रों का चित्रण दक्षिण भारत एवं उत्तर भारत की तत्कालीन संस्कृति के प्रभाव से स्पष्टतः प्रभावित है। दोनों महाकाव्यों के नारी-पात्र-चित्रण पर देशीय संस्कृति की छाप सर्वत्र परिलक्षित होत है, किन्तु यह चित्रण भारतीय संस्कृति की आधार शिला पर ही आधारित है। यही नहीं दोनों आलोच्य ग्रन्थों के कवि तत्कालीन संस्कृति के चित्रण एवं निरूपण में पूर्ण-रूपेण सफल भी हैं।

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, कडिमणप्पड़ळम्।
२. रामचरितमानस, १/३ ६/१।
३. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, नगरप्पड़ळम्, १/३/४५।
४. कम्ब रामायण, बालकाण्ड, नगरप्पड़ळम्। १/३/४६।

अध्याय : तृतीय

कम्बन और तुलसीदास-कालीन नारी की सामाजिक स्थिति और कविद्वय का नारी-विषयक दृष्टिकोण

कम्बन-कालीन नारी की सामाजिक स्थिति

'तोळकाप्पियम्' के अनुसार तमिळनाडु को पाँच भागों में विभक्त किया गया है—

१. कुरिञ्चि—पर्वतीय भू-भाग।

२. मुळ्ळै—वन-प्रदेश।

३. मरुदम—सिंचित क्षेत्र या कृषि-कार्य के लिए उपयुक्त समतल मैदान।

४. नय्दळ—सागर-तटीय भू-भाग।

५. पाळै—मरुस्थल क्षेत्र, यह क्षेत्र कृषि-कार्य के लिए अनुपयुक्त होता है।

उपर्युक्त पाँचों भागों के निवासी भी पाँच भागों में विभक्त हैं। इन विभिन्न पाँचों भागों के निवासियों की जीवन-प्रणाली भी एक-दूसरे से भिन्न है। प्रत्येक भाग में प्रायः एक पेशे वाले तथा लगभग समान स्तर वाले लोग रहते थे। एक प्रदेश या भाग के निवासियों का दूसरे प्रदेश के निवासियों तथा लोगों से भी सम्पर्क रहता था। इन सभी पाँचों भागों के लोगों के जीवन में प्रायः समानता अधिक थी, भिन्नता कम। इन पाँचों भागों—कुरिञ्चि, मुळ्ळै, मरुदम, नय्दळ और पाळै में 'पाळै' एक अलग भाग नहीं है, अपितु गर्मियों के दिनों में पर्वत या वन-प्रदेशों में यह (पाळै) बन जाता था। अतएव पाळै को तोळकाप्पियम् में अलग नहीं माना जाता, किन्तु परवर्ती लक्षण-ग्रन्थों तथा साहित्यों में इसका अलग ही अस्तित्व स्वीकार किया गया है। उपर्युक्त पाँचों प्रदेश के निवासी क्रमशः इस प्रकार हैं—१. वनचर, २. व्याध, ३. कृषक, ४. नाविक एवं मछुआ और ५. लड़ाकू-डाकू आदि। इन पाचों को ऐन्दिणैनिळम्, इनके निवासियों को ऐन्दिणैमक्कळ तथा वहाँ के आचार-विचार एवं जीवन-प्रणाली को ओळुक्कम कहा जाता। इन पाँचों के अलग-अलग मुखिया भी होते थे। उक्त जीवन-प्रणाली में निबद्ध जनता को 'समाज' कहते थे।

इन पाँचों प्रदेशों के निवासियों की जीवन-पद्धति, रहन-सहन परस्पर भिन्न था। इनके कुल-देवता, पर्व-व्रत, आचार-व्यवहार, प्रथा, उद्यम आदि सभी लगभग भिन्न थे। तोळकाप्पियम्-काल तक यह भिन्नता तथा दूरी अधिक थी, किन्तु कम्बन-काल तक आते-आते यह दूरी कम हो चुकी थी। तोळकाप्पियम् तथा कम्बन-काल के मध्य वैदिक वर्ण-व्यवस्था का प्रसार प्रारम्भ हो गया था। समाज के सम्पन्न

लोगों का प्रोत्साहन तथा राजाओं का प्रश्रय प्राप्त होने के कारण यह नयी व्यवस्था लोगों में एक नवीन आकर्षण का केन्द्र बनी जिसका अनुकरण भी होने लगा। इस अनुकरण में पाँचों भागों की जीवन-पद्धतियों का भी समावेश था। फलतः यह अधिक सफल हुई। दक्षिण भारत में कम्बन-कालीन समाज इसी प्रकार का था। इसी समाज की नारियों का चित्रण कम्बन-रामायण में पाया जाता है जिसका विवेचन इस अध्याय में प्रस्तुत किया जा रहा है—

(अन्येषां संघः), संवीयतेऽत्र, सम + अज् (गतिक्षेपणयोः + धञ्, संस्कृत तद्-भव, समूह, सभा)—'समाज का अर्थ है, समूह—चाहे वह पशुओं का हो, अथवा मनुष्यों का हो। रामायण में भी 'समाज' का अर्थ है मनुष्यों का समूह या सम्मेलन।[१]

कम्बन-कालीन समाज अत्यन्त समृद्ध था। समृद्धता से विलासिता की वेलि पल्लवित-पुष्पित होती है। तत्कालीन समाज में इस लता की हरीतिमा सर्वत्र थी। समाज में गणिकाओं का स्थान भी गौरवपूर्ण था। आलोच्य ग्रन्थ में गणिकाओं के गौरवपूर्ण उल्लेख से भी यह बात सिद्ध होती है। राम के विवाह के समय मिथिला-गमन के समय हंसिनी-सदृश केकयराज-पुत्री सहस्रों गणिकाओं के झुंड से घिरकर जाती हुई वर्णित है।[२] इससे भी तत्कालीन समाज में गणिकाओं के गौरव का प्रमाण मिलता है।

तत्कालीन समाज में एकपक्षीय प्रेम कष्टप्रद था। दुःखमय दाम्पत्य-जीवन निम्न जातियों में पाया जाता था। कौशल्या-दशरथ, सीता-राम आदि उच्च वर्ग के श्रेष्ठ दाम्पत्य-जीवन के दृष्टान्त हैं, तो शूर्पणखा निम्न वर्ग की। यह वर्णन युगल महाकाव्यों में वर्णित है।

आलोच्य ग्रन्थ के वर्णन से ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज में नारियों को विशेषाधि कार नहीं प्राप्त था, यद्यपि उन्हें सभी सुख-सुविधाएं प्राप्त थीं, किन्तु परिवार में उनका स्थान प्रभावशाली नहीं था। किसी महत्त्वपूर्ण विषय पर भी उनसे परामर्श की आवश्यकता नहीं समझी जाती। पुत्रेष्टि यज्ञ, राम-लक्ष्मण को विश्वामित्र को सौंपने का निर्णय, राम के पट्टाभिषेक के निर्णय आदि अनेक अवसर इसके दृष्टान्त हैं। विदेह भी अपनी पुत्रियों के परिणय के निर्णय में अपनी पत्नी से विचार-

---

१. वाल्मीकि-युगीन भारत, डॉ० मंजुला जायसवाल, पृष्ठ २४४।
२. कम्ब-रामायण, १/१३/६४।

विमर्श नहीं करते हैं। नारी की यह स्थिति युगल कवियों के समाज एवं महाकाव्य में पायी जाती है।

पति के आदेश तथा निर्णय का पालन करना पत्नियों का श्रेष्ठ धर्म माना जाता था। पति के भेदभावपूर्ण और अन्यायपूर्ण निर्णय का भी स्त्रियाँ प्रतिवाद नहीं करतीं। दशरथ द्वारा चरु का आधा भाग कौशल्या को तथा कैकेयी और सुमित्रा को केवल एक चौथाई भाग का दिया जाना इसका प्रबल प्रमाण है—ऐसी थी तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था में नारी की सामाजिक स्थिति।

परिवार अथवा राज्य के महत्त्वपूर्ण निर्णय से सम्बन्धित विषयों पर उनके परामर्श की बात को जाने दिया जाय, लिये गये उन निर्णयों की सूचना भी नहीं दी जाती थी। राम के पट्टाभिषेक की सूचना से अयोध्या की सम्पूर्ण प्रजा अवगत होकर अपनी प्रसन्नता का प्रकाशन कर रही थी, किन्तु राजमाताएँ इससे अनभिज्ञ थीं। इसकी सूचना कैकेयी को उसकी दासी मन्थरा से मिलती है। कौसल्या को भी इसकी सूचना उनकी दासियों से मिली।[1] महाराजा दशरथ की ओर से इस निर्णय की सूचना राजमाताओं को नहीं भेजी गयी। युगल कवियों के सामाजिक परिवेश में नारियों की यही सामाजिक स्थिति थी।

दशरथ, राम-वन-गमन का निर्णय कैकेयी के परामर्श से नहीं करते हैं, अपितु कैकेयी द्वारा प्राप्त वरदान के आधार पर, ऐसा निर्णय विवश होकर लेते हैं। उन्हें कैकेयी के प्राण से भी अधिक प्रेम अपने यश से है, अन्यथा वह तो उसकी हत्या तक कर देने पर मन ही मन विचार करने लगते हैं, किन्तु नारी-हत्या के अपयश का भय उन्हें इससे विरत करता है।[2] दशरथ[3] जैसे नीतिज्ञ, धर्मज्ञ और अपने सत्य आचरण के लिए जगत्-विख्यात चक्रवर्ती राजा के मन में जब नारी के प्रति यह भाव है, तो तत्कालीन सामान्य जन के मन का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है। अपनी एक इच्छा के प्रतिकूल पत्नी द्वारा निर्णय लिये जाने पर, कुपित दथरथ के मन में यह विचार आता है कि इस सम्पूर्ण संसार को ही स्त्री-विहीन कर दूँ।[4] उनके मन में अपनी ऐसी वीरांगना, सच्ची-अर्द्धांगिनी एवं सहायिका के लिए ये विचार हैं जिसने उनका केवल मनोरंजन ही नहीं किया है, अपितु युद्ध-भूमि में भी कन्धे से कन्धा मिला ऐसी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी जिससे कि युद्ध का परिणाम

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, मन्दिरप्पड़ळम्, २/१/६२।
२. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, कैकेशूऴ्विनैप्पड़ळम्, २/३/१५।
३. उपर्युक्त, २/३/२२।
४. उपर्युक्त।

अप्रत्याशित रूप में ही उनके पक्ष में हुआ। आज दशरथ का यह जीवन उस वीरांगना के शौर्य का प्रतीक-स्वरूप है—उसी के रक्षक-पालक पति की उसके प्रति ऐसी सच्ची निष्ठा है।

आलोच्य ग्रन्थद्वय में तारा तथा मन्दोदरी अपने पतियों को उनके अधर्म एवं दुर्नीति से विरत करने का यत्न करती हैं, उनको समयोचित परामर्श देती हैं, किन्तु वे उनके परामर्श की सर्वदा उपेक्षा नारी होने के कारण करते हैं—इसके परिणाम से सभी अभिज्ञ हैं। इससे भी समाज एवं परिवार में उनकी सामाजिक स्थिति एवं प्रतिष्ठा का ज्ञान होता है।

कम्ब-रामायण में मीनाक्षी कन्याओं को दान में देने का वर्णन प्राप्त होता है।[१] कैकय नरेश द्वारा मन्थरा भी दहेज-स्वरूप ही दशरथ को प्रदत्त थी। इस प्रकार तत्कालीन समाज में नारियाँ दान की 'वस्तु' भी थीं।

तत्कालीन दक्षिण भारतीय समाज में स्त्रियों को उत्तर भारत की तुलना में स्वतंत्रता कुछ अधिक ही प्राप्त थी। पुरुषों के समान ही वे उत्सवों में भाग लेती थीं, नाट्य-शालाओं में नृत्य प्रस्तुत करती थीं। इसी स्वतंत्रता के कारण राम के विवाह में सभी माताओं सहित अयोध्या की स्त्रियाँ भी जनकपुर जाती हैं। मार्ग में अत्यन्त मुक्त भाव से नृत्य, गान, हास-परिहास, जलक्रीड़ा करते हुए मद्यपान करती हुई उनके वहाँ जाने का वर्णन कम्ब-रामायण में मिलता है। इससे यह सिद्ध होता है कि कुछ क्षेत्रों में इनको पुरषों-सदृश अधिकार प्राप्त थे।

तत्कालीन समाज में पर्दा-प्रथा नहीं थी। स्त्रियाँ अधिक स्वतंत्र थीं, किन्तु राज-परिवार की नारियों पर सामान्य लोगों की तुलना में प्रतिबन्ध अधिक थे। वे सामान्य महिलाओं की तरह स्वतंत्र नहीं थीं। आलोच्य ग्रन्थ में दशरथ की रानियों का वर्णन 'असूर्यस्पश्या' के रूप में प्राप्त होता है।[२]

तत्कालीन समाज में सती-प्रथा भी प्रचलित थी, क्योंकि दशरथ की मृत्यु के पश्चात् उनकी साठ हजार रानियाँ उनके साथ सती हो जाती हैं।[३] यह भी विश्वास था कि पति के साथ सती होने वाली स्त्रियों को स्वर्ग की प्राप्ति होती है।[४] रामचरित-मानस में दशरथ की साठ हजार रानियों का उल्लेख नहीं मिलता है। रामचरित-

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, कडिमणप्पड़ळम् १/२१/५०।
२ कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, नगरनीङ्-गुपड़ळम्, २/४/१८५।
३. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, पळ्ळिपड़ैप्पड़ळम् २/९/१४०।
४. उपर्युक्त २/९/१४१।

मानस में भरत सब माताओं का चरण पकड़ कर सती होने से रोकते हैं। माताएँ भी राम के दर्शन की अभिलाषावश उनका यह अनुरोध स्वीकार कर लेती हैं।[1] कम्ब-रामायण में माताएँ सती क्यों नहीं होती ?—इस विषय पर कम्बन ने चुप्पी साध ली है।

तत्कालीन सामजिक व्यवस्था के अन्तर्गत सती न होने वाली स्त्रियाँ अत्यन्त कठिन वैधव्य-व्रत का पालन करती थीं। विधवाओं के जीवन तथा कठिन वैधव्य-व्रत का उल्लेख कम्ब-रामायण में प्राप्त होता है। विधवा के रूप में तारा का जीवन इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। मंगल-सूत्र, अन्य आभूषणों, पुष्प-मालाओं, चन्दन, कुंकुम आदि सभी प्रसाधनों से विरत, एक साड़ी में ही अपने सम्पूर्ण अंगों को छिपाए हुए, तारा लक्ष्मण के सम्मुख आती है। तारा को देखकर लक्ष्मण को अपनी विधवा माताओं का स्मरण हो जाता है।[2] इस प्रकार कम्बन-कालीन समाज में विधवाओं का जीवन अत्यन्त पवित्र था। मानस में विधवाओं का वर्णन इस रूप में नहीं मिलता, क्योंकि तुलसीदास-कालीन समाज में विधवाओं का जीवन-चरित्र सर्वथा प्रतिकूल था। मानसकार इस स्थिति से क्षुब्ध है।[3] श्रेष्ठ आचरण वाली और सती स्त्रियों का समाज में सम्मान नहीं था।[4]

कम्बन-कालीन समाज में नारियों का जीवन श्रेष्ठ पातिव्रतयुक्त था। पति की मृत्योपरान्त अधिकांश नारियाँ सती हो जाती थीं। कुछ जो जीवित रहती थी, वे कठिन वैधव्य-व्रत का पालन करतीं, तो कुछ ऐसी आदर्श और श्रेष्ठ ललनाएँ भी हुई हैं जिन्हें पति-वियोग सह्य ही नहीं था। उन्हें न तो सती होना पड़ता था, न ही विधवा, अर्थात् पति की मृत्यु के दारुण शोक से ही उनके प्राण निकल जाते थे। मन्दोदरी का चित्रण कम्ब-रामायण की श्रेष्ठतम पतिव्रताओं की इसी कोटि में आता है—रावण की मृत्योपरान्त उसके मृत शरीर के समीप विलाप करते हुए ही मन्दोदरी के प्राण निकल जाते हैं।[5] रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

कम्बन-कालीन समाज में कन्या का विवाह उसके पिता-भाइयों द्वारा निर्धारित

---

१. रामचरितमानस २/१७०/१।

२. कम्ब-रामायण, किष्किन्धाकाण्ड् किट्किन्धैप्पड़ळम्, ४/१०/५१-५२।

३. "सौभागिनीं विभूषन हीना। विधवन्ह के सिंगार नवीना॥"

—रामचरितमानस, ७/९९/३।

४. "कुलवंति निकारहिं नारि सती।
गृह आनहिं चेरि निबेरि गती॥ —रामचरितमानस ७/१०१/२।

५. कम्ब-रामायण, युद्धकाण्ड, रावणन्वधैप्पड़ळम् ६/३६/२३०।

किया जाता था ।[१] विधवाओं का पुनर्विवाह नहीं होता था, किन्तु इस नियम के अपवाद भी मिलते हैं—शूर्पणखा विधवा थी, जिसका विवाह नियमानुसार नहीं हो सकता, तथापि वह अपने विवाह का प्रस्ताव स्वयं राम से करती है । शूर्पणखा राक्षस-कुल की है तथा वह कम्ब-रामायण में निम्न वर्ग की नारियों का प्रतिनिधित्व करती है । सम्भ्रान्त एवं कुलीन-वर्ग में यह स्थिति नहीं थी । रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता । कम्ब-रामायण के वर्णन से यह भी विदित होता है कि तत्कालीन समाज में प्रेम-विवाह (गन्धर्व-विवाह) भी प्रचलित था ।[२] रामचरितमानस में ऐसा प्रसंग नहीं आया है ।

स्त्रियों के सम्बन्ध में नैतिक नियम अत्यन्त कठोर थे । अनिच्छा पूर्वक दूसरे के घर में प्रवासित नारी अपवित्र तथा अस्वीकार्य मानी जाती थी । इसी कारण दोनों महाकाव्यों में सीता की अग्नि-परीक्षा उनकी चरित्र-परीक्षा के रूप में की जाती है ।

कम्बन-कालीन समाज में विलासिता सर्वत्र थी । कवि ने वेश्याओं का बार-बार उल्लेख "रामायणम्" में किया है ।[३] कम्बन-कालीन समाज में मद्यपान प्रचलित था । स्त्रियाँ भी मद्यपी थीं—कवि ने इसका विस्तारपूर्वक वर्णन कम्ब-रामायण बालकाण्ड में उण्डाट्टुप्पड़ळम् में किया है । समाज में विद्या का बहुत आदर था । स्त्री-पुरुष सभी सुशिक्षित थे । समाज में विद्वानों का महत्त्व नहीं था, क्योंकि सभी विद्वान् थे । कोई अपण्डित नहीं था ।[४] सभी शिक्षित थे । स्त्रियाँ शिक्षा के साथ-साथ नृत्य-संगीत में भी निपुण थीं । नृत्यशालाएँ उनके नृत्य के अभ्यास तथा मनोहर नृत्य की अत्यन्त कर्णप्रिय-मोहक ध्वनि से सर्वदा गुञ्जायमान रहती थीं ।[५]

तुलसीदास-कालीन नारी की सामाजिक स्थिति

तुलसीदास ने समकालीन म्लेच्छ-शासन को कलियुग माना है । इसी प्रतीक के माध्यम से उन्होने तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था का वर्णन किया है । इस समय समाज में स्त्रियों की दशा अत्यन्त दयनीय थी । म्लेच्छ शासकों द्वारा वैदिक कर्म-काण्डों की निन्दा की जा रही थी—"श्रुति विरोध रत सब नर-नारी"[६] वाले समाज

१. उपर्युक्त, अरण्यकाण्ड, सूर्पणखैप्पड़ळम् ३/५/४६ ।
२. उपर्युक्त ३ ५/४७ ।
३. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, वरैक्काट्चिप्पड़ळम्, १/१४/२६ ।
४. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, नगरप्पड़ळम् १/३ ७४ ।
उपर्युक्त, नाट्टुप्पड़ळम्, १/२/५३ ।
५. उपर्युक्त, १/३/४६, ४८, ५२ ।
६ रामचरितमानस, ७/९८ १ ।

में पापाचार, दुराचार, अनाचार, कदाचार, मिथ्या आडम्बर, पाखण्ड, अस्तेय आदि का ही सर्वत्र प्राबल्य था।[1] ब्राह्मणों तथा वैदिक कर्म-काण्डों का अपमान हो रहा था। पुरुष स्त्रियों के संकेत पर "नट मर्कट की नाई"[2] नृत्य कर रहे थे। स्त्रियाँ सभी गुणों और सुखों के परमधाम अपने पति की उपेक्षा करती तथा परपुरुष की ओर आकृष्ट थीं।[3] आर्थिक दशा भी अच्छी नहीं थी। कम्बन-कालीन समाज की भाँति, तुलसीदास-कालीन समाज की स्त्रियों का आचरण वेदोक्त विधियों पर आधारित नहीं था। सौभाग्यवती स्त्रियाँ अलंकारों से रहित थीं, किन्तु समाज में व्याप्त अनैतिकता के कारण विधवाएँ नित्य-नवीन अलंकारों से अपने को अलंकृत किये रहतीं।[4]

तत्कालीन समाज में नारी ही नहीं, अपितु पुरुष भी दुराचारी थे—उनके आचरण की मानसकार ने कटु शब्दों में निन्दा की है। पुरुष अपनी कुलीना-पतिव्रता पत्नियों को घर से निकाल कर "चेरियों" को आश्रय प्रदान करते। पुत्र अपने माता-पिता का सम्मान तभी तक करते थे जब तक कि वे अविवाहित होते थे।[5] समाज में इतनी घोर अनैतिकता व्याप्त थी कि "नहिं मानत कोउ अनुजा-तनुजा"।[6] रामचरित-मानस में तत्कालीन समाज में इस प्रकार की व्याप्त घोर अनैतिकता का उल्लेख मिलता है। इसी कारण मानसकार ने इस अनैतिकता-स्वरूप पाप-कर्मों में लिप्त दुराचारी, कदाचारी तथा दुष्कर्मी सभी स्त्रियों-पुरुषों को समान भाव से आड़े हाथों लिया है। कवि ने जमकर उनकी निन्दा की है। उन्हें वह निन्द्य माना है तथा मानने के लिए भी कहा है जिससे कि उनके मन में आत्म-ग्लानि उत्पन्न हो और वे पुनः सन्मार्ग पर वापस लौट आयें। इसी कारण रामचरितमानस में मानसकार ने उन्हें स्थान-स्थान पर नैतिकता का उपदेश भी दिया है। वैदिक कर्म-काण्डों की निन्दा करने वालों को कवि ने "कल्प-कल्प भरि एक एक नरका।"[7] बताया है। इसी प्रसंग में कवि ने कहीं-कहीं नारी-निन्दा भी की है, किन्तु यह अत्यन्त स्मरणीय तथ्य है कि तुलसीदास ने सर्वदा वेद-विरोधी आचरण करने वाली नारियों, सन्मार्गच्युत नारियों

---

१. रामचरितमानस, ७/९८/२।
२. उपर्युक्त, ७/९९/८।
३. उपर्युक्त, ७/९९/२।
४. उपर्युक्त, ७/९९/३।
५. उपर्युक्त, ७/१०१/२।
६. उपर्युक्त, ७/१०२/३।
७. उपर्युक्त, ७/१००/२।

पाखण्डी, दुराचारी, दुष्कर्मों में लिप्त नारियों की ही निन्दा की है जिसकी अन्य, सन्त तथा भक्त कवियों ने भी निन्दा की है—जो भारतीय आदर्श, संस्कृति, प्रथाओं मान्यताओं के सर्वथा अनुरूप है। तुलसीदास ने सत्कुलप्रसूता-सत्कर्मों में निरत, सदाचारिणी और वैदिक विधियों के अनुकूल-कर्मा किसी नारी की कभी भी निन्दा नहीं की है। अतः उनकी नारी-निन्दा-सम्बन्धी कुछ "प्रसंग-विशेष" की उक्तियों के आधार पर उन्हें नारी-निन्दक नहीं कहा जा सकता। अगर कोई ऐसा दुस्साहस करता है, तो यह उसकी एकदेशीय दृष्टि ही कही जानी चाहिए जो अपनी ही दृष्टिभेद का शिकार हुआ है।

निष्कर्ष

कम्बन-कालीन समाज, चोल-राजाओं का सुसमृद्ध तथा सुसंस्कृत समाज था जिसमें शैवों-वैष्णवों के परस्पर विरोध को अतिरिक्त, सर्वत्र शान्ति, समृद्धि और सुशासन था। तत्कालीन समाज में नारी की स्थिति बहुत अच्छी थी, वह सम्माननीया, सुशिक्षिता, सदाचारिणी तथा वेदोक्त-कर्मों में निरत थी। तुलसीदास-कालीन नारी की सामाजिक स्थिति कम्बन-कालीन नारी की सामजिक स्थिति से पूर्णतया भिन्न है, क्योंकि कम्बन-कालीन शासन की बागडोर वेदों में गहरी आस्था रखने वाले हिन्दू शासकों के हाथों में थी, किन्तु तुलसीदास-कालीन शासक कुरान में आस्थावान् म्लेच्छ थे। अतः वेद और कुरान रूपी भिन्न चश्मे के कारण उनकी शासन-नीति तथा शासन-दृष्टि में पर्याप्त भिन्नता है। यह दृष्टिभेद नारियों के सन्दर्भ में है। इन्हीं कारणोंवश कम्बन और तुलसीदास-कालीन समाज में नारियों की सामाजिक स्थिति में अत्यधिक भिन्नता दृष्टिगत होती है। इन्हीं भिन्नताओं के कारण आलोच्य ग्रन्थद्वय में नारियों की सामाजिक स्थिति का चित्रण भी भिन्न रूपों में हुआ है।

●

कम्बन का नारी-विषयक दृष्टिकोण

कवि तथा उसका काव्य तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित होता है। कम्ब-रामायण तथा रामचरितमानस का वर्णन भी तत्कालीन परिस्थितियों से प्रभावित है। कम्बन-कालीन चोल-साम्राज्य अत्यन्त सम्पन्न था जिसमें स्त्रियाँ सुशिक्षित, पतिव्रता तथा सद्गुणी थीं। इसकी पुष्टि इतिहास-ग्रन्थों से भी होती है।[1] कम्बन-कालीन साम्राज्य वेदाभिमानी हिन्दू शासकों का था। सर्वत्र सभी कर्म वैदिक रीति पर आधारित थे। समाज में स्त्री-पुरुष का आचरण वेदानुकूल था। स्त्री-पुरुष सबको समाज में समान माना जाता था। नारियाँ पूजनीया थीं, वन्दनीया थीं, 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'[2] की उक्ति चरितार्थ थी, किन्तु वस्तुस्थिति इससे सर्वथा भिन्न थी, क्योंकि भारतीय समाज में नारी कभी भी स्वतंत्र नहीं रहती।[3]

कम्बन-कालीन शासन महान् धर्मप्रिय राजाओं का था, अतः तत्कालीन समाज में नारियों को वेद-स्मृति आदि में उक्त स्वातंत्र्य प्राप्त था, अर्थात् सामाजिक मर्यादा की यवनिका सर्वदा उनके सम्मुख रहती थी। कम्बन-कालीन समाज में नारियाँ सर्वदा पुरुषों के संरक्षण में रहती थीं। कौसल्या इसे राम-वन-गमन के समय तथा दशरथ की मृत्यु के समय स्वयं कहती हैं।[4] सुरेचन (श्रवणकुमार) के पिता की मृत्यु के उपरान्त उसकी माँ भी यही कहती है।[5] स्त्रियाँ स्वयं भी पति के संरक्षण में सर्वदा रहना चाहती थीं। इसी कारण सीता वन-गमन के समय राम से स्वयं भ उनके साथ चलने के लिए निवेदन करती हैं।[6]

---

१. चोलवंश, के० ए० नीलकंठ शास्त्री।

२. मनुस्मृति—३/५७।

३. पिता रक्षित कौमारे भर्ता रक्षति यौवने।
रक्षन्ति स्थाविरे पुत्रा न स्त्री स्वातंत्र्यमर्हति।
मनुस्मृति, अध्याय ९, श्लोक ३।

४. कम्ब-रामायण, नगरनीङ्गुपड़लम् २/४।

५. उपर्युक्त २/४।

६. कम्ब-रामायण, नगरनीङ्गुपड़लम् २/४।

कम्बन उदार विचारधारा के कवि हैं। नारियों के पति भी उनकी दृष्टि अत्यन्त उदार हैं। वे सौन्दर्य के उपासक हैं। नारी-सौन्दर्य के अभिनन्दक कम्बन सौन्दर्यशास्त्र के मर्मज्ञ हैं। कम्ब-रामायण को पढ़ते समय विदित होता है कि कवि 'सामुद्रिक शास्त्र' का प्रकाण्ड पण्डित है। कम्ब-रामायण के नारी पात्रों के वर्णन पर इसकी छाप सर्वत्र परिलक्षित होती है।

कम्बन नारी-चित्रण में अत्यन्त कुशल एवं निपुण हैं। नारी-पात्रों के प्रस्तुतिकरण में उनके प्रति कवि की सहानुभूति सर्वत्र प्रकट हुई है। आलोच्य ग्रंथ में कवि ने नारियों को सर्वत्र सुन्दर एवं कमनीय रूपों में प्रस्तुत किया है। कोशल देश की नारियों के चित्रण में उनकी सौन्दर्यानुरक्ति की झलक मिलती है। यहाँ की नारियों का चित्रण करते समय कवि कहता है कि कोशल देश की नारियों के मोहक नृत्य को देखकर मयूरिनी अपनी गति को सुधारती है। सीप कोशल देश की सुन्दरियों के दाँतों की भाँति उज्ज्वल मोती उगलते हैं, कोकिल कोशल की रमणियों की मधुर ध्वनि का अनुसरण करते हैं।[१] पुष्पों से अलंकृत केशों और मुक्ताओं से भूषित वक्षों के कारण अतिरमणीय दिखलाई देने वाली कामिनियों को उद्यानों में देखकर मयूर भ्रमित हो जाते हैं कि वे मयूरी हैं और इसलिए नवयुवकों के मन-सदृश वे मयूर भी उनके पीछे-पीछे चलने लगते हैं।[२]

आलोच्य ग्रंथ में कवि ने नारियों को अत्यन्त तेजोमयी रूप में वर्णित किया है। वे इतनी कान्तिमती हैं कि अयोध्या के प्रासादों के अन्धकार उनके शरीर की दिव्य कान्ति से दूर हो जाते हैं।[३] हिन्दी साहित्य में रीतिकाल के श्रेष्ठतम कवि बिहारी; नारी के सौन्दर्य-चित्रण में कम्बन के अधिक निकट प्रतीत होते हैं।[४]

कम्बन-कालीन नारियाँ विलासमय जीवन व्यतीत करती हैं। आर्थिक सम्पन्नता के कारण उनका जीवन सभी प्रकार की कलह से मुक्त तथा अत्यन्त सुखमय है। उनका अधिकांश समय प्रणय-कलह, समागम के सुखों में, जलक्रीड़ा तथा

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, नाट्टुप्पड़ळम्, १/२/४९।
२. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, नाट्टुप्पड़ळम्, १/२/५२।
३. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, नगरप्पड़ळम् १/३/५३।
४. अंग-अंग नग जगमगत दीपसिखा सी देह।
दिया बढ़ाए हूँ रहै बढ्यौ उज्यारौ गेह।।
—बिहारी-सतसई, 'बिहारी रत्नाकार'—जगन्नाथदास 'रत्नाकर, दोहा संख्या ६९।

अपने को नाना प्रकार से अलंकृत करने में ही व्यतीत होता है।[1] उनकी गति गज-गति का उपहास करने वाली है, परस्पर सटे हुए उनके उन्नत उरोज कमल की कलियों का उपहास करते हैं, उनके स्तन नारियल के शीतल-फलों से भी विलक्षण हैं। उनके मनोहर सुन्दर मुख षोडश कलाओं से पूर्ण चन्द्रमा का उपहास करते हैं।[2]

कम्बन ने अपने काव्य में नारियों का चित्रण इस रूप में प्रस्तुत किया है जिनकी एक झलक पाने के लिए विद्याधर इत्यादि भी सौन्दर्याकृष्ट होकर खिंचे चले आते हैं।[3] कम्ब-रामायण में कवि ने नारियों की भृकुटि, तीक्ष्ण दृष्टि, स्तन-युगल आदि को अत्यन्त मनोहर, ललित, मोहक एवं उत्तम उपमाओं से अलंकृत किया है।[4]

कम्बन-कालीन समाज में मद्यपान प्रचलित था। नारियाँ भी मद्यपा थीं—इसका उल्लेख बालकाण्ड के 'उण्डाट्टुप्पड़ळम्' में अत्यन्त विस्तारपूर्वक मिलता है। इसमें कवि ने नारियों के मद्यपान का चित्रण एक कुशल मनोवैज्ञानिक की भाँति किया है। अत्यधिक मद्य पी हुई एक नारी स्वर्ण-निर्मित शीतल, सुगन्धित मद्य भरे हुए चषक में पड़ने वाली अपनी ही चन्द्र-ज्योत्स्ना को; अपनी सखा समझकर उसे मद्य-पात्र के लिए आमंत्रित करने लगती है।[5] अत्यधिक मद्य पी हुई एक रमणी मद्य-पात्र में अपने दिव्य प्रतिबिम्ब को देखकर उसे अन्य नारी मानकर कह पड़ती है, हे पगली! तुम उच्छिष्ट मद्य क्यों पी रही हो? यहाँ तो पूरा पात्र भरा हुआ है।[6] इस पड़ळम् में कवि ने मद्यपा नारियों का चित्रण अत्यन्त सजीव मनोवैज्ञानिक रूप से किया है। इस प्रकार कम्बन तत्कालीन सामाजिक व्यवस्थानुसार मद्यपा नारियों को उसी रूप में देखने के पक्षधर प्रतीत होते हैं। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि मद्यपा नारियों के प्रति कम्बन के मन में कोई घृणा-भाव नहीं था, अगर ऐसा होता तो वे इतने प्रशंसित रूप में इनका वर्णन कभी नहीं करते तथा वे भी तुलसीदास की तरह इनकी निंदा ही करते। मद्यपा नारियों के प्रति तुलसीदास की दृष्टि कम्बन से पूर्णतः भिन्न है।

कम्बन नारियों के अद्वितीय सौन्दर्य के उपासक कवि हैं। कम्ब-रामायण में नारी पात्रों का प्रस्तुतिकरण कवि के कुशल चितेरे मन को प्रकट करता है, किन्तु

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, नगरप्पड़ळम् (१/३/६६)।
२. कम्ब-रामायण १२/४४-४५।
३. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, वरैक्काट्टचिप्पड़ळम्, १/१४/२८।
४. क० रा०, बालकाण्ड, पूक्कोय्पड़ळम्, १/१५/३५।
५. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, उण्डाट्ट्प्पड़ळम्, १/१७/१०।
६. उपर्युक्त १/१७/११।

कम्बन ने नारी-सौन्दर्य को सर्वत्र भारतीय आदर्श, संस्कृति तथा मर्यादा की आधार-शिला पर ही चित्रित किया है। उन्होंने इसी आधारशिला पर भारतीय नारी के वन्दनीय स्वरूप को अंकित किया है।

कम्बन ने कोशल देश तथा मिथिला की महिलाओं का चित्रण अत्यन्त शिष्ट, मर्यादित तथा श्रेष्ठ पातिव्रताओं के रूप में किया है। मानव-मन ईश्वर-सदृश नहीं हो सकता। इसी कारण मिथिला की श्रेष्ठ पतिव्रताएं राम को देखकर मुग्ध होकर उन पर आकृष्ट हो जाती हैं, क्योंकि राम का सौन्दर्य है ही कुछ ऐसा; किन्तु पुनः वे अपने को विवेक की बागडोर से नियंत्रित भी कर लेती हैं।[1] इस प्रकार कवि सर्वत्र भारतीय उच्च आदर्शों तथा मर्यादाओं को खण्डित होने से बचाने के लिए सचेष्ट-सतर्क प्रतीत होता है।

काव्य-प्रणयन द्वारा विविध उद्देश्यों की पूर्ति होती है। मम्मटाचार्य ने 'काव्य प्रकाश' में काव्य-प्रयोजन इस प्रकार बतलाया है—

काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षयते।
सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे ॥[2]

—इसलिए काव्य की रचना और उसके अध्ययन में अवश्य प्रयत्न करना चाहिए। 'साहित्यदर्पण' में आचार्य विश्वनाथ ने काव्य-प्रयोजन को धर्म, अर्थ काम और मोक्ष की प्राप्ति का साधन बतलाया है—

चतुर्वर्गफलप्राप्तिः सुखादल्पधियामपि।
काव्यादेव यतस्तेन तत्स्वरूपं निरूप्यते ॥[3]

काव्य-प्रणयन में उपर्युक्त प्रयोजनों की पूर्ति होती है। इसके अतिरिक्त काव्य-प्रणयन का प्रयोजन समाज-कल्याण, जनहित और अधिकाधिक लोगों को आह्लादित करना भी होता है। कवि इसका पूरा-पूरा ध्यान अपने काव्य-प्रणयन में रखता है। इस दृष्टि से भी कम्बन अपने लक्ष्य में पूर्णतः सफल हैं।

शृंगार रस को सभी रसों में प्रधान माना गया है। आचार्य भोजराज ने 'शृंगारप्रकाश' में शृंगार रस को रस पद पर स्थापित करते हुए निष्कर्षतः कहा है कि शृंगार रस ही एकमात्र रस है। विभिन्न अनुभावों तथा विभावों के द्वारा प्रकाशित होता हुआ शृंगार ही सर्वत्र चर्वणा का विषय है—

---

१. उपर्युक्त, बालकाण्ड, जलावियर्प्पड़ळम्, १/१९।
२. काव्यप्रकाश, मम्मटाचार्य, सम्पादक डॉ० नरेन्द्र, प्रथम उल्लास, श्लोक २, पृष्ठ १०।
३. साहित्यदर्पण, आचार्य विश्वनाथ, प्रथम परिच्छेद, श्लोक द्वितीय।

'तस्माद् रत्यादयः सर्व एवैते भावाः, शृंगार एव एको रस इति। तैश्च साविभावानुभावैः प्रकाशमानः शृंगारः विशेषतः स्वदते।'[1]

इसलिए शृंगार को रसराज कहना सर्वथा उचित है। इसी 'रस-प्रकरण' में उनकी यह कारिका है—

'रसोऽभिमानो हंकारः शृंगार इति गीयते।
योऽर्थः तस्यान्वयात् काव्यं कमनीयत्वमश्नुते॥'[2]

शृंगार रस प्रायः सभी ग्रन्थों-महाकाव्यों में पाया जाता है। 'रामायण', कम्ब-रामायण, रामचरितमानस आदि सभी में यह समुचित रूप में है। कम्ब-रामायण के प्रणेता ने भी शृंगार रस को अपने काव्य में यथोचित स्थान दिया है। कम्ब-रामायण के कई पड़ळम् इसी रस से परिप्लावित हैं। शृंगार रस का प्रधान आलम्बन स्त्रियाँ हैं। अतः शृंगार रस के प्रधान आश्रय के रूप में उनके प्रस्तुतिकरण में कवि की वैचारिक दृष्टि झलकती है। इस वर्णन के आधार पर कवि के नारी विषयक दृष्टिकोण को समझा जा सकता है। कम्ब-रामायण के कथा-प्रवाह में विविध भूमिका वाले नारी पात्रों का प्रस्तुतिकरण कवि ने विविध रूपों में किया है। सभी नारी पात्रों के प्रस्तुतिकरण में शृंगार रस की प्रधानता नहीं हो सकती, क्योंकि यह पात्रों के चरित्र और परिस्थितियों पर भी निर्भर करता है, जैसे शबरी, मंथरा, त्रिजट आदि के चित्रण में इस रस की प्रधानता नहीं पायी जाती।

नारी पात्रों की आयु, समय, परिस्थिति, कथा-प्रवाह में उनकी भूमिका, नायक-नायिका से उनका सम्बन्ध आदि विविध आधारों पर कम्ब-रामायण में नारी पात्रों का चित्रण हुआ है। अतः सभी पात्रों के प्रति कवि की दृष्टि समान नहीं है, अपितु यह घटनाओं, प्रसंगों तथा परिस्थितियों पर निर्भर है। इन्हीं विविध आधारों पर कवि के नारी विषयक दृष्टिकोण का विश्लेषण किया जा रहा है—

कम्ब-रामायण में महर्षि गौतम की पत्नी तथा जनक के पुरोहित शतानन्द की माता, अहल्या का चित्रण विविध दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। यह चित्रण कवि की नारी-विषयक भावनाओं को उद्घाटित करता है। कम्बन में प्रगतिशील चेतना पायी जाती है। कम्बन ने नारी को सर्वदा आदरणीया एवं वन्दनीया रूपों में देखा

---

१. शृंगारप्रकाश, भोजराज, सम्पादित, वि० राघवन्, रसप्रकरण, पृष्ठ ४९१।
२. शृंगारप्रकाश, भोजराज, सम्पादित, वि० राघवन् रस प्रकरण। शृंगार रस के कारण ही हम रस को 'रस' शब्द से व्यवहृत करते हैं जिसकी व्याप्ति सभी रसों में है। इसी सत्ता से काव्य में कमनीयता की अनुभूति होती है।

है। वे नारी की गलतियों के प्रति क्षमाशील हैं। वे गलती के पश्चात् उसे सुधरने
प्रायश्चित करने का अवसर देते हैं तथा इसी के पक्षधर प्रतीत होते हैं। कम्बन
इस विचार का उद्घाटन अहल्या के चित्रण में हुआ है। कम्ब-रामायण में विश्वा
अहल्या के चरित्र की प्रशंसा करते हैं। विश्वामित्र उसको स्वीकार करने के लि
गौतम को आदेश देते हैं। अहल्या को स्वीकार करने के लिए राम गौतम से नि
वेदन करते हैं।[1] ऐसा वर्णन रामचरितमानस में नहीं मिलता। एक पतिव्रता के प
भ्रष्ट होने पर पुनः पति द्वारा उसे स्वीकार कराने का वर्णन कम्बन के अत्य
प्रगतिशील विचारों का द्योतक है। आज बीसवीं शताब्दी में भी क्या हम इ
'प्रगतिशील' दृष्टि वाले हैं? आज यह हमारे लिए चिन्त्य है। एक पथ-भ्रष्ट क
माता कहकर राम द्वारा उसकी चरण-वन्दना और अत्यन्त उग्र स्वभाव के ध
ब्रह्मर्षि विश्वामित्र द्वारा उसके चरित्र की प्रशंसा करते हुए उसे स्वीकार करने
'वकालत'[2] कराने के वर्णन में कम्बन की 'नारी-उद्धारक दृष्टि' तथा उसके प्र
उनकी भावना स्पष्ट रूप में प्रकट हुई है।

कम्ब-रामायण में तारा के वैधव्य का वर्णन कवि ने अत्यन्त उदात्त रूप
किया है। तारा के तेजस्वी वैधव्य के सम्मुख क्रोधी प्रकृति के लक्ष्मण हिम की भाँ
तरल हो जाते हैं। तारा में उन्हें अपनी विधवा माताओं का बिम्ब झलकने लग
है। वे तेजस्वी तारा के सम्मुख श्रद्धावनत दृष्टि से अधोमुख खड़े रहते हैं।[3] विध
तारा के कष्ट को देखकर लक्ष्मण के नेत्र अश्रुओं से भर जाते हैं।[4] वे तारा से आँ
नहीं मिला पाते। एक विधवा का जीवन किस प्रकार का होना चाहिए? उस
पवित्र जीवन के प्रति हमारी दृष्टि कैसी हो? इसका सुन्दर दृष्टान्त कवि
कम्ब-रामायण में प्रस्तुत किया है। यह वर्णन कम्बन के विधवाओं के प्रति दृष्टको
को प्रकट करता है।

कम्बन ने अपने किसी भी पात्र को पूर्णरूपेण दुष्ट के रूप में चित्रित नहीं
किया है। कवि ने किसी भी पात्र की दुष्टता को उसकी स्वाभाविक प्रकृति न सिद्ध
करते हुए उसे सर्वदा परिस्थितिजन्य सिद्ध किया है। नारी-पात्रों के सन्दर्भ में
उनकी यही दृष्टि सर्वत्र दिखलाई देती है, चाहे ताटका (ताड़का) हो अथवा

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, अकलिकैंपड़ळम् (१/९/८३-८६)।
२. उपर्युक्त १/९/८५।
३. उपर्युक्त १/१०/५०-५१।
४. कम्ब-रामायण, किष्किन्धाकाण्ड, किटिकिन्धैप्पड़ळम् (४/१०/५१)।

शूर्पणखा, कैकेयी हो या मन्थरा—सभी को कम्बन ने इसी धरातल पर प्रस्तुत किया है।

एक तपस्विनी का आचरण कैसा होना चाहिए ?—इसे कम्बन ने शबरी के माध्यम से कुशलतापूर्वक प्रस्तुत किया है।[1] सीता, कौशल्या, सुमित्रा आदि का चित्रण कम्बन ने भारतीय आदर्श के सर्वथा अनुरूप सर्वगुणसम्पन्ना, पतिपरायणा के रूप में किया है।

मन्दोदरी का चित्रण कम्बन ने श्रेष्ठतम पातिव्रत की पृष्ठभूमि पर किया है। ऐसे उच्च आदर्शों वाला पातिव्रतपूर्ण जीवन कम्ब-रामायण में ही नहीं, अपितु रामायण, रामचरितमानस आदि किसी में भी किसी अन्य नारी पात्र का नहीं है। कौशल्या, कैकेयी, सुमित्रा, तारा आदि किसी का भी चरित्र मन्दोदरी के चरित्र के तुल्य नहीं है। कम्बन सभी नारियों को इसी श्रेष्ठ पतिव्रता के रूप में देखने के पक्षधर प्रतीत होते हैं।

कम्बन ने नारी को सदैव आदरणीया तथा श्रद्धा का पात्र माना है, किन्तु मर्यादा की सीमाओं का उल्लंघन करने वाली नारी के प्रति उनके मन में यह आदरभाव नहीं है। ऐसी नारी उनकी श्रद्धा खो देती है। मर्यादा की सीमाएँ तोड़ने वाली नारी की कटु शब्दों में निन्दा करने में कम्बन संकोच नहीं करते। ऐसे अनेक अवसरों पर कम्बन ने नारी की निन्दा की है—

छल-कपट ही नारी का वेश धारण किये रहते हैं (छल-कपट ही नारी के वेश में रहता है, नारी साक्षात् छल-कपट है), इसीलिए प्राचीन काल से ही महान् लोग नारी को कभी अपना सहायक नहीं मानते।[2] नारियों का हृदय सरलता से नहीं जाना जा सकता।[3] कम्बन सहज रूप में नारी को अज्ञान का प्रतीक मानते हैं।[4] पृथ्वी पर धूमकेतु-सदृश उत्पन्न, मनोरम मेखलाधारिणी, रमणियों की कामव्याधि नहीं होती, तो कोई अन्य विपत्ति उत्पन्न नहीं होती। नरक की यातना भी नारियों के ही कारण भोगनी पड़ती है।'[5] कम्बन के अनुसार कामदेव के वाण से अपनी रक्षा करना सरल है, किन्तु नारियों के बंकिम चितवन-रूपी वाण से रक्षा करना असम्भव है। कम्बन ने नारी को इस रूप में भी माना है।

---

१. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, शबरिपिरप्पुनीङ्गुपड़ळम्।
२. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, कैकेयीशूल् विनैप्पड़ळम् (२/३/१७)।
३. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, शूर्पणखैप्पड़ळम् (३/५/४४)।
४. कम्ब-रामायण, किष्किन्धाकाण्ड, वालिवधैप्पड़ळम् ४/७/३१)।
५. 'नाम मिळ्ळै नरकमु मिळ्ळैये'—(कम्ब-रामायण (२/२ २१)।

कम्बन के नारी-विषयक दृष्टिकोण के बहुत ही निकट तुलसीदास की भी नारी-विषयक दृष्टि है। कम्बन की भाँति तुलसीदास ने भी नारी को—

"बिधिहुँ न नारि हृदय गति जानी। सकल कपट अध अवगुन खानी।।"[१] मानकर 'निज प्रति बिंबु बरुक गहि जाई। जानि न जाइ नारि गति भाई'[२] कहकर "नारि सुभाउ"[३] की व्याख्या की है। नारी के सम्बन्ध में कम्बन के उपर्युक्त विचारों की भाँति तुलसीदास ने भी 'अति दारुन दुखद मायारूपी नारि'[४] को 'अवगुन आठ सदा उर रहहीं'[५] के रूप में देखा है तथा नारी को 'सहज जड़ अग्य'[६] माना है।

कम्बन की दृष्टि में वे ही स्त्रियाँ उत्तम होती हैं जिनमें सरलता, लज्जा, संकोच आदि नारी के गौरव-गुण विद्यमान हैं। इन गुणों से रहित नारी की गणना नारी जाति में नहीं की जा सकती।[७] कवि ने दुष्टाओं एवं मर्यादाविरुद्ध आचरण करने वाली नारियों को दण्डनीय एवं वध्य भी माना है। दशरथ अपने मन में कैकेयी की दुष्टता के कारण उसकी हत्या करने का विचार करते हैं; किन्तु इससे अपयश मिलेगा, इस कारण वे अपना यह विचार बदल देते हैं।[८] दशरथ की मनोदशा के चित्रण में कवि की नारी-विषयक दृष्टि की झलक मिलती है। कवि का यही विचार ताटकैवधैप्पड़ळम् तथा शूर्पणखैप्पड़ळम् में भी प्रकट हुआ है।

कम्बन ने किसी देवी-देवता की पूजा अथवा अन्य तपस्याओं को निरर्थक बतलाते हुए पति को ही सर्वस्व मानकर उसकी सेवा करने वाली पतिव्रताओं को आदरणीय एवं परम तपस्विनी माना है। कम्बन की दृष्टि में पति की सेवा-सुश्रूषा, पूजा, उसकी आज्ञा-पालन ही नारी के लिए सबसे पवित्र तपस्या एवं उसका सर्वश्रेष्ठ धर्म है। कम्बन के नारी-सम्बन्धी इस विचार और तुलसीदास के 'सहज अपावनि नारि पति सेवत सुभ गति लहइ' में अद्भुत समानता पायी जाती है।

---

१. रामचरितमानस २/१६२/२।
२. उपर्युक्त २/४७/४।
३. उपर्युक्त ६/१६/१।
४. रामचरिमानस ३/४३।
५. रामचरितमानस ६/१६/१।
६. उपर्युक्त १/५७ (क)।
७. कम्ब-रामाययण, अयोध्याकाण्ड, कैकेयीशूल्विनैप्पड़ळम् २/३/३९।
८. उपर्युक्त २/३/१५।

कम्ब-रामायण का प्रणेता स्त्रियों के सम्मान की जोरदार शब्दों में वकालत करते हुए कहता है कि जहाँ पर स्त्रियों का आदर होता है, वहाँ पर धर्म सुरक्षित रहता है और वहाँ पर वर्षा समय पर होती है।[१] कम्बन का नारी-विषयक यह विचार मनुस्मृति से प्रभावित प्रतीत होता है।[२]

कम्बन नारी-सौन्दर्य के अनन्य उपासक हैं। कम्ब-रामायण में नारियों का चित्रण-कवि के सामुद्रिक शास्त्र के ज्ञान का परिचायक है। कवि ने अपनी बेजोड़ तथा मनोहारी उपमाओं से नारी के अंग-प्रत्यंगों का ऐसा मनोरम-मुग्धकारी वर्णन किया है कि हिन्दी साहित्य के शृंगार-वर्णन के महारथियों का वर्णन भी आलोच्य ग्रन्थ के सम्मुख अत्यन्त फीका-सा प्रतीत होता है। नितान्त अभिनव उपमाओं तथा मनोरम उत्प्रेक्षाओं से 'रामावतारम्' में नारी-चित्रण को कम्बन की चमत्कारी प्रतिमा ने ललित, मुग्धकारी तथा मनोहारी रूप में सर्वत्र चित्रित किया है। करवाल तथा बरछा दोनों एकसाथ रखे गये हों, ऐसे नेत्रों वाली, नर्तनशील कलापी से भी सुन्दर, कोकिल-सदृश स्वरवाली, एक सूत्र युगल रत्नजटित कलशों को ढो रहा हो— एवं सूक्ष्म कटि वाली तथा पुष्ट स्तनों से युक्त, बत्ती-रहित अमृत में जलने वाले उत्तम दीपक-तुल्य, विष-स्वभाव वाले नयनों से युक्त, तरंग-समान काली और लम्बी घुँघ-राली अलकों वाली, पीनस्तनी सीता, रत्नों से खचित पीत स्वर्ण-आभरणों से अलंकृत विशाल जघन, संगीतमय भाषण, शीतल पुष्प-मधु से युक्त केशों वाली, विद्युत्-सदृश कटि, सुकोमल बाँस के समान कन्धों वाली, रथ के अंगों जैसे जघनवाली, नारियल-फल तुल्य स्तनों वाली, पर्वतों को भी परास्त करने वाली भुजाओं वाली, वस्त्र के अन्दर न समाने वाले विशाल जघन, घट-सदृश स्तनों वाली, तिल-पुष्प-सदृश आरक्त अधरोष्ठों वाली, चाशनी जैसी मधुर-भाषिणी के रूप में कम्बन ने नारियों को आलोच्य ग्रन्थ में प्रस्तुत किया है। नारी के अंगों-प्रत्यंगों की मोहक, मादक तथा मनोरम आदि विविध भाँति की उपमाओं को कम्ब-रामायण में कवि ने कुशलता-पूर्वक सर्वत्र बड़ी निपुणता के साथ बिखेरा है जिसमें बालकाण्ड के वरैक्काट् विप्पड़ळम्[३], पूक्कोय्पड़ळम्[४], पुनल्विळैयाट्टुप्पड़ळम्[५] और उण्डाट्टुप्पड़ळम्[६] का

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, नाट्टुप्पड़ळम् (१/२/५९)।
२. 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः' —मनुस्मृति, ३/५७।
३. चन्द्रशैल पटल।
४. पुष्प-चयन पटल।
५. जलक्रीड़ा पटल।
६. मद्यपान पटल।

वर्णन इस दृष्टि से विशेष रूप में प्रशंसनीय है। (रामचरितमानस में यह वर्ण इस रूप में नहीं पाया जाता।)

कालिदास, भर्तृहरि, भवभूति, बाणभट्ट, सूरदास, घनानन्द, बिहारी सदृ नारी-सौन्दर्य-चित्रण के कुशल पारखी कम्बन ने भी आलोच्य ग्रन्थ में अपनी तीक्ष्ण तथा अत्यन्त उर्वर प्रतिभा से नारी-सौन्दर्य एवं नारी-पात्रों के चित्रण को सुन्दर सजीव, मुग्धकारी एवं मनोरम रूपों में प्रस्तुत किया है। कम्बन के नारी-सौन्दर्य का यह मनोरम वर्णन कुछ लोगों को अनुचित प्रतीत होता है। उन्हें उसमें अश्लीलता और नग्नता ही दृष्टिगत होती है। उपर्युक्त चारों पड़ळम् के आधार पर कुछ तमिल-जनों द्वारा आलोच्य कवि पर अमर्यादित आरोप लगाये गये हैं तथा अनेक प्रसंगों में कवि पर कीचड़ उछाले जाते रहे हैं—इसमें दिवंगत 'अण्णादुरै' तथा उनका 'कम्बरसम्' उल्लेखनीय है किन्तु पूर्वाग्रहरहित होकर कम्ब-रामायण का आद्योपान्त सुविवेचित तथा सम्यक् विश्लेषण करने पर, ये सभी आरोप पूर्णतः निराधार, अतार्किक तथा अविवेचित प्रतीत होते हैं। कम्बन एक महान् कवि हैं। उनका ज्ञान अपरिमित था। यदि वह चाहते तो सचमुच घोर अश्लील और नारी का अत्यन्त नग्न चित्रण अपने महाकाव्य में कर सकते थे जिससे उन्हें कौन विरत कर सकता था? उन्होंने इसके लिए क्यों मात्र चार पड़ळम् ही चुना? कवि का इस चयन में निःसन्देह कोई महान् उद्देश्य है। सम्भवतः भोजन में उचित मात्रा में डाले गये नमक-सदृश ये चार पड़ळम् भी महाकाव्य-रूपी दिव्य भोजन में कवि ने इसी भाँति आवश्यक मानकर प्रस्तुत किया हो। उसको अशिष्ट अथवा अश्लील कहने हेतु सर्वप्रथम हमको अपनी दृष्टि कवि के समान व्यापक बनानी होगी, तभी हम इस विषय पर युक्तियुक्त टिप्पणी कर सकेंगे, अन्यथा यह सम्भव नहीं होगा।

समय, स्थान और परिस्थिति के अनुसार शब्दों के अर्थ भी बदलते रहते हैं। कोई कार्य या प्रथा किसी समय-स्थान के अनुसार कहीं पर परम शुभ तथा मर्यादा-सम्मत हो सकती है, तो किसी दूसरे स्थान पर उसी समय में वही कार्य अथवा प्रथा अशुभ और मर्यादा विरुद्ध भी हो सकती है। दृष्टान्तार्थ, उत्तर भारत में सौभाग्यवती नारियों द्वारा अपना सिर ढकना उत्तमता, शिष्टता तथा कुलीनता का श्रेष्ठ प्रतीक माना जाता है। आज भी उत्तर भारत में अपना सिर ढँकने वाली अथवा घूँघटवाली नारियाँ अत्यन्त सम्माननीया हैं और उन्हें श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता है। इनका उत्तर भारतीय समाज में विशेष आदर है, किन्तु दक्षिण भारत में—तमिळनाडु में इसी प्रथा और इसी कार्य के प्रति इससे सर्वथा भिन्न दृष्टि है। यहाँ पर सिर तथा बाल को ढँकना एक सौभाग्यवती नारी के लिए अत्यन्त अशुभ माना

जाता है। यहाँ पर अपने सिर, बाल एवं ललाट को केवल विधवाएँ ही ढँकती हैं। आलोच्य ग्रन्थ का जो वर्णन आज कुछ लोगों को अश्लील और अमर्यादित रूप में प्रतीत होता है, सम्भव है कि कम्बन-कालीन समाज में तत्कालीन प्रथा-परम्परा और मर्यादा-अनुसार वह अत्यन्त सम्मानीय रूप में देखा जाता रहा हो। आलोच्य ग्रन्थ में यह वर्णन तत्कालीन समृद्धि एवं सुखमय सामाजिक जीवन का भी परिचायक है।

कम्बन ने नारी को आदरणीया एवं सम्मानीया रूपों में देखा है तथा उसके इसी रूप की कवि को अपेक्षा भी है। नारी की पवित्रता उसको अत्यन्त प्रिय है। सम्भवतः इसी कारण कवि ने वाल्मीकि रामायण से पूर्णतया भिन्न अपने 'रामावतारम्' में 'सीता-हरण-प्रसंग' में सीता को अस्पृश्या के रूप में ही प्रस्तुत किया है। (रामचरितमानस में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता।)

रावण की मृत्यूपरान्त लंका से सीता को राम के पास लाने के पूर्व रामचरितमानस के वर्णन में राक्षसियों द्वारा सीताजी को स्नान कराने का वर्णन मिलता है,[1] किन्तु कम्ब-रामायण में तिलोत्तमा, रम्भा, मेनका, उर्वशी आदि द्वारा सीता के स्नान एवं श्रृंगार कराने का वर्णन मिलता है।[2] ऐसे चित्रणों से भी नारियों के प्रति कवि का दृष्टिकोण परिलक्षित होता है।

कम्बन अत्यन्त प्रगतिशील विचारधारा के कवि हैं। नारियों के प्रति भी उनकी यही दृष्टि है। आलोच्य ग्रन्थ में अहल्या, कैकेयी, शबरी, तारा आदि के चित्रण में कवि की यह दृष्टि स्पष्टतः परिलक्षित होती है, साथ ही साथ कम्बन नारी-शिक्षा, नारी-स्वातंत्र्य, नारी-उत्थान आदि के भी पूर्ण पक्षधर प्रतीत होते हैं।

१. रामचरितमानस, ६/१०८/३-५।
२. कम्ब-रामायण, ६/३७/४२।

तुलसीदास का नारी-विषयक दृष्टिकोण

साहित्य समाज का दर्पण होता है। इस दर्पण का शिल्पी उसी समाज की एक इकाई होता है। वह अपने दर्पण-रूपी रचना में तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक परिस्थितियों का चित्र निर्मित करता है। तुलसीदास-कालीन सामाजिक व्यवस्था में नारी की स्थिति राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक आदि सभी क्षेत्रों में बहुत अच्छी नहीं थी। आलोच्य ग्रन्थ से प्रतीत होता है कि कवि नारी की इस स्थिति से खिन्न था। सन्त तथा भक्त होने के कारण कवि सभी को उच्च नैतिक आदर्शों से युक्त देखना चाहता था, किन्तु स्थिति इसके पूर्णतः प्रतिकूल थी। आलोच्य कवि वेदोक्त जीवन-पद्धति के प्रतिकूल सामाजिक क्रिया-कलापों तथा नारियों के आचरण से व्यथित था। वह नारियों के मर्यादाविरुद्ध आचरण को देखकर उन्हें सन्मार्ग पर लाने तथा उनके धर्मानुकूल आचरण के लिए प्रयत्नशील था। किसी दुराचारी को सन्मार्ग पर लाने हेतु यह आवश्यक होता है कि उसके कार्य-आचरण की निन्दा करके, निन्दनीय कर्मों से उसको अवगत कराया जाय। अन्य भक्त एवं सन्त कवियों सदृश तुलसीदास ने भी इसी उद्देश्य से तत्कालीन उन नारियों की ही निन्दा की है जिनके आचरण धर्म-मर्यादा, प्रथा के प्रतिकूल थे। कवि ने इस प्रपंच की समस्त नारियों की निन्दा नहीं की है। सामाजिक पृष्ठभूमि, नैतिक आदर्शों—मर्यादाओं के प्रतकूल नारियों के आचरण, कवि की वैयक्तिक स्थिति, युग-परिवेश आदि के कारण नारियों के निन्दार्थ कवि विवश हुआ। तुलसीदास के नारी-विषयक दृष्टिकोण के सन्दर्भ में अधिकतर उन पर 'नारी-निन्दक' होने का आरोप लागाया जाता है, किन्तु समीचीन विवेचनोपरान्त यह आरोप पूर्णतः निर्मूल एवं निराधार सिद्ध होता है।

रामचरितमानस में विभिन्न प्रसंगों में ऐसी अनेक उक्तियाँ और पंक्तियाँ हैं जिनसे ऐसा प्रतीत होता है कि तुलसीदास के मन में नारी के प्रति -अश्रद्धा है। भगवान् शंकर के श्रीमुख से ही इसे देखिए—'सुनहु सती तव नारि सुभाऊ। संसय अस न धरिअ उर काऊ।'[1] पार्वती के मन में 'नारि सहज जड़ अग्य'[2] का विचार आया है। 'सकल कपट अघ अवगुन खानी', नारी की गति 'जानि न जाय'[3] का

१. रामचरितमानस, १/५१/३।
२. रामचरितमानस १/५७/ख।
३. रामचरितमानस २/४७/४।

उल्लेख मानस में हुआ है। रामचरितमानस का प्रतिनायक रावण 'नारि सुभाउ' को 'साहस अनृत चपलता माया' आदि 'आठ अवगुणों'[१] से परिपूर्ण मानता है, तो उतना अमर्यादित नहीं प्रतीत होता जितना कि इसके एक आदर्श पात्र भरत 'बिधिहुँ न नारि हृदय गति जानी'[२] का कथन क्षणांश के लिए अमर्यादित प्रतीत होता है। शबरी 'अधम ते अधम अधम अति नारी'[३] कहती है। स्वयं राम के शब्दों में—

जैहउँ अवध कौन मुहु लाई। नारि हेतु प्रिय भाइ गँवाई।
बरु अपजस सहतेउँ जग माहीं। नारि हानि विशेष छति नाहीं।।[४]

मानस में ऐसी अनेक उक्तियाँ और पंक्तियाँ पायी जाती हैं जिनसे नारी के प्रति श्रद्धाभाव प्रकट होता प्रतीत होता है। इन्हीं चन्द पंक्तियों के आधार पर कुछ लोग तुलसीदास को नारी-निन्दक तथा नारी-विरोधी होने का आरोप लगाते हैं—

डॉ० माताप्रसाद गुप्त के अनुसार, 'प्रत्येक युग के कलाकार नारी-चित्रण में प्रायः उदार पाये जाते हैं, किन्तु नारी-चित्रण में तुलसीदास बेहद अनुदार हैं।'[५]

मिश्रबन्धुओं ने भी तुलसीदास को नारी-निन्दक बताया है। 'गोस्वामी जी में नारी के प्रति जैसी धारणा मिलती है, उसके हेतु का तो पता चल जाता है, पर उसका पूर्ण समर्थन भारतीय दृष्टि से सम्भाव्य नहीं है।[६]

तुलसीदास को नारी-निन्दक सिद्ध करने से सम्बन्धित लगाये जाने वाले आरोप युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होते। रामचरितमानस में प्राप्त नारी-निन्दा से सम्बन्धित पंक्तियों पर यदि तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों के सन्दर्भ में देखा जाय, तो इन पंक्तियों के लिखने का मूल कारण स्पष्ट हो जाता है। तुलसीदास-कालीन समय अभिशापों का समय था। तत्कालीन समाज में कुलीन पुरुषों की यह दशा थी कि वे अपनी पतिपरायणा पत्नी को घर से निकाल कर 'गृह आनहिं चेरि',[७] तो सामान्य लोगों की दशा तो और भी भयावह रही होगी जो केवल अनुमेय है।

---

१. रामचरितमानस ६/१५/१,२।
२. उपर्युक्त २/१६२/२।
३. उपर्युक्त ३/३५/२।
४. उपर्युक्त ६/६१/६।
५. तुलसीदास, डॉ० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ २१८।
६. तुलसीदास और उनका युग, डॉ० राजपति दीक्षित, प्रथम संस्करण, १९५२, पृष्ठ ७६।
७. रामचरितमानस ७/१०१/२।

नारियाँ वेदोक्त आचरण का परित्याग करके भोगों में लिप्त थीं। विधवाएँ भी अपने आचरण के प्रतिकूल अपने को नित्य नवीन शृंगारों से अलंकृत रखती थीं। 'गुन मन्दिर सुन्दर पति त्यागी। भर्जहिं नारि पर पुरुष अभागी।'[1] की स्थिति में इस जननायक की 'नारी-निन्दा' नारियों को सन्मार्ग पर लाने का मात्र प्रयास है। तुलसी ने प्रवृत्ति और उनके शास्त्र-विरोधी आचरण से उन्हें रोकने के लिए उनकी निन्दा की है। एक चाटुकार तथा मिथ्या प्रशंसक की तुलना में अप्रिय सत्य-भाषी मित्र जिस प्रकार वन्दनीय होता है, उसी प्रकार तुलसीदास की नारी-निन्दा भी तत्कालीन नारी-सौन्दर्य के प्रशंसकों की तुलना में श्रेष्ठतर है। कहा भी गया है—'अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः'।[2] अपने इस प्रकार के दृष्टिकोण तथा सर्वजनहिताय प्रयत्न के लिए तुलसीदास आदर, श्रद्धा और सम्मान के पात्र हैं, न कि निन्दा के।

तटस्थ भाव से निष्पक्ष विश्लेषण करने पर यह तथ्य स्पष्ट होता है कि तुलसीदास सच्चे अर्थों में नारियों के प्रशंसक हैं। तुलसीदास के कारण आज जन-मानस में पार्वती, अनुसूया, सीता, कौशल्या, आदि इतनी आदरणीय बन पायी हैं। रामकथा-साहित्य में रामचरितमानस के पूर्ववर्ती अन्य ग्रन्थों से इनको वह जनप्रियता नहीं मिल सकी थी जो मानस के पश्चात् मिली। रामचरितमानस को नारी-उत्थान का महाकाव्य कहा जा सकता है। रावण-रूपी राक्षस के हाथों से सीता को मुक्त कराने में आलोच्य कवि का संकेत तत्कालीन यवन शासकों से सीता-रूपी नारियों को मुक्त कराने की ओर है। अतः इस लोकनायक को 'नारी-निन्दक' नहीं कहा जा सकता। डॉ० रामकुमार वर्मा के अनुसार तुलसीदास ने नारी जाति के प्रति बहुत आदर-भाव प्रकट किया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार तुलसीदास ने सब रूपों में नारियों की निन्दा नहीं की है, केवल प्रमदा या कामिनी रूपों में दाम्पत्य-रति के आलम्बन के रूप में की है—माता, पुत्री, भगिनी के रूप में नहीं। इससे सिद्ध होता है कि स्त्री जाति के प्रति उन्हें कोई द्वेष नहीं था। यह सत्य भी प्रतीत होता है।

रामचरितमानस में नारी-निन्दा से सम्बन्धित पंक्तियाँ युग-परिवेशवश ही प्राप्त होती हैं, अन्यथा आलोच्य कवि तो सम्पूर्ण प्रपंच को 'सीय राममय'[3] ही

---

१. रामचरितमानस ७/९९/२।
२. वाल्मीकि रामायण, लंकाकाण्ड।
३. 'सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥—रामचरितमानस, १/८/१।

जानने वाला है। वह 'नारी-निन्दक' नहीं हैं। प्रायः संतों-महात्माओं की नारी के प्रति दृष्टि सन्देहशील और अत्यन्त कठोर रही है। सन्त होने के कारण तुलसीदास का भी कामिनी और कंचन से सतर्क होना स्वाभाविक है। इसी कारण अन्य सन्त-भक्त कवियों की भाँति उन्होंने भी नारी के 'प्रमदा' तथा भोग्या रूप से विरत रहने के लिए हमें सचेष्ट किया है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उनकी उन उक्तियों को नारी की भर्त्सना न मानकर, उनके अपने अतिशय प्रेमपूर्ण मन की भर्त्सना समझनी चाहिए। तुलसीदास अपने पतंग-सदृश मन को नियंत्रित करते हुए कहते हैं—'मन जनि होसि पतंग'[1]। अतः इसको 'नारी-निन्दा' नहीं कहा जा सकता। तुलसी-दास नारी को उसके महनीय रूप—माँ, पत्नी, बहन आदि आदर्श रूपों में ही देखना चाहते हैं। वह अपने इस आदर्श की प्रतिस्थापना का भी यत्न महाकाव्य में किया है। अग्रांकित पंक्तियों में कवि के इसी लक्ष्य की ध्वनि गूँजती है—

'पुत्रि पवित्र किए कुल दोऊ।
सुजस धवल जगु कह सबु कोऊ॥'[2]

निष्पक्ष दृष्टि से विवेचनोपरान्त यह तथ्य समक्ष में आता है कि तुलसीदास ने मात्र उन्हीं विन्दुओं या स्थानों पर नारी-निन्दा की है जब उसने धर्म-विरुद्ध आच, रण किया है। यहाँ नारी से अभिप्राय तत्कालीन समाज की विलासरत कर्तव्यहीना-कुमार्ग-गामिनी एवं वेद-विमुखी नारियों से है। इस प्रकार के स्थानों पर अथवा अवसरों पर निन्दक-पात्र या वस्तुस्थिति को देखकर कवि नीतिपूर्ण वाक्य या कोई 'सूक्ति' कहता है। रामचरितमानस की रचना 'नानापुराणनिगमागमसम्मत' पर हुई है। रामचरितमानस की ये अधिकांश पंक्तियाँ या कूटोक्तियाँ कवि की न होकर संस्कृत नीतिवचनों का हिन्दी रूपान्तरण हैं, यथा—

ढोल गँवार शुद्र पशु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी॥[3]

यह गर्ग-संहिता के निम्नलिखित श्लोक का ही अनुवाद है—

दुर्जनाः शिल्पिनो दासा दुष्टाश्च पटहाः स्त्रियाः।
ताडिता मार्दवं यन्ति नैते सत्कार भाजिनः॥

---

१. रामचरितमानस, ३/४६ ख।
२. रामचरितमानस २/२८७/१।
३. उपर्युक्त ५/५९/३।

इसी भाँति—

नारि स्वभाव सत्य सब कहहीं। अवगुन आठ सदा उर रहहीं।
साहस अमृत चपलता माया। भय अबिबेक असौच अदाया ॥[१]

इसका मूल संस्कृत श्लोक इस प्रकार है—

अनृतं साहसं माया मूर्खत्वमतिलोभता।
अशौचं निर्दयत्वं च स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः ॥

तुलसीदास मानव-हृदय के मर्मस्थलों को पहचानने में अत्यन्त कुशल, चितेरे-निपुण हैं—रामचरितमानस इसका जाज्वल्यमान दृष्टान्त है। कवि नारी-पुरुष सभी को उसकी सीमा तथा मर्यादा की परिधि में देखना चाहता है। इसी कारण कवि ने सीमोल्लंघन करके मर्यादा-विरुद्ध आचरणरत ताड़का, शूर्पणखा आदि की निन्दा की है, तो मर्यादानुकूल सत्-आचरणा अनुसूया, सीता, कौशल्या आदि की अतिशय प्रशंसा। 'सीयराममय सब जग' द्रष्टा कवि उसके अर्धांग (नारी) की निन्दा कैसे कर सकता है? उसने समाज-विरुद्ध, नीति-विरुद्ध, मर्यादा-विरुद्ध, धर्म-विरुद्ध आचरणरत स्त्री-पुरुष—दोनों की एक-सदृश निन्दा की है।[२]

तुलसीदास को नारी-उपेक्षा स्वीकार्य नहीं है। आलोच्य कवि ने भार्या के 'सिखावन' पर 'कान न करने' वाले बालि को 'मूढ़' कहा है—

'मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना।
नारि सिखावन करसि न काना ॥'[३]

कवि मर्यादित नारी-स्वातंत्र्य का प्रबल पक्षधर है—

'कत बिधि सृजी नारि जग माहीं।
पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं ॥'[४]

तुलसीदास के मन में सत्कर्मों में निरत प्रत्येक नारी के लिए अपार श्रद्धा है, चाहे वह नारी किसी भी वर्ग, जाति की हो। यही कारण है कि उन्होंने अपने आराध्य, रामचरितमानस के नायक मर्यादा-पुरुषोत्तम राम से भी अत्यन्त नीच कुलोत्पन्ना

१. रामचरितमानस ६/१५/१,२।
२. रामचरितमानस ७/९९/१-४।
३. रामचरितमानस ४/९/५।
४. रामचरितमानस १/१०२/३।

नारी—शबरी को सम्मान दिलवाया है। तुलसीदास के राम उसे 'भामिनि'[१] के श्रेष्ठ सम्बोधन से सम्बोधित करते हैं। इस सन्दर्भ में यह बात विशेष उल्लेख्य है कि 'भामिनि' शब्द का प्रयोग यहाँ पर श्रेष्ठ महिला, वृद्धा-माता के अर्थ में ही हुआ है। भागवतकार तथा तद्वत् अध्यात्म-रामायणकार ने भी 'भामिनि' शब्द का प्रयोग माता (भद्र स्त्री) के लिए करते हैं, जबकि संस्कृत, प्राकृत एवं हिन्दी के कोशकारों ने 'भामिनि' शब्द का अर्थ एकमत से चण्डी, मानिनी, क्रोधशीला, सुन्दर युवती, 'पैशनेट वूमन' आदि किया है।[२] वृद्धा स्त्री विशेषतः माता के लिए 'भामिनि' शब्द का प्रयोग भागवतकार द्वारा किया गया सर्वथा नवीन अर्थ-प्रयोग प्रतीत होता है जिसका बाद में सूर[३] एवं तुलसीदास ने भी उक्त अर्थ में प्रयोग किया है।[४] इस प्रकार के चित्रण से कवि की नारी-विषयक दृष्टि स्पष्टतः परिलक्षित होती है जिसमें प्रत्येक जाति-वर्ग की नारियों के लिए अपार श्रद्धा और आदर है।

तुलसीदास नारी के प्रति कितने उदारमना हैं, इससे सहज अनुमेय है। नारियों पर कुदृष्टिपात करने वालों को वह आततायी मानकर उन्हें वध्य भी मानते हैं—

'अनुज बधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी।
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधे कछु पाप न होई॥'[५]

---

१. (क) कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानउँ एक भगति कर नाता॥
—रामचरितमानस, ३/३५/२।
(ख) सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरे। सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरे॥
—रामचरितमानस, ३/३६/४।
(ग) जनकसुता कइ सुधि भामिनी। जानहि कहु करिबरगामिनी॥
—रामचरितमानस, ३/३६/५।

२. 'भामिनि'—संस्कृत-इंग्लिश डिक्शनरी (सर एम॰ मोनियर विलियम्स), (पृष्ठ ७५१-५२); द स्टूडेन्ट संस्कृत-इंग्लिश डिक्शनरी (वी॰ एस॰ आप्टे), पृष्ठ-४०३; पाइअ सद्महण्णवो (प्राकृत शब्दमहार्णव/, पृष्ठ ६४९; आदर्श हिन्दी शब्दकोश, पृ॰ ८३१।

३. 'जो सुख सूर अमर मुनि दुरलभ सो नंदभामिनि पावै।' —सूरसागर।

४. अध्यात्म रामायण पर श्रीमद्भागवत का प्रभाव—डॉ॰ हरिशंकर मिश्र का 'हिन्दुस्तानी' त्रैमासिक पत्रिका के वर्ष १९८१, अंक ४ में प्रकाशित शोध-पत्र, पृष्ठ ३१।

५. रामचरितमानस ४/९/४।

पुरुषप्रधान भारतीय समाज में माता को पिता से भी उच्चतर स्थान दिया गया है। इस आर्ष दृष्टि को मान्यता प्रदान करते हुए तुलसीदास कौशल्या से राम के प्रति स्पष्ट कहलवाते हैं—

'जौं केवल पितु आयसु ताता। तौ जनि जाहु जानि बड़ि माता।
जौं पितु मातु कहेउ बन जाना। तौ कानन सत अवध समाना॥'[१]

तुलसीदास ने नारी के प्रति अत्यधिक सम्मानपूर्ण दृष्टि को प्रोत्साहन, प्रेरणा अपने महाकाव्य में दी है। आलोच्य कवि ने एक ओर पुरुषों को नारियों का सम्मान करने की शिक्षा दी है, तो दूसरी ओर नारियों को भी 'नारिधरमु पति देउ न दूजा'[२] कहकर उन्हें पति सेवा-प्रेम की दीक्षा देकर दोनों में परस्पर सहयोग, प्रेम एवं त्याग की भावना विकसित करके नारी को पूज्या और सम्माननीया बनाने का स्तुत्य प्रयास किया है। नारी के सम्बन्ध में तुलसीदास की मूल दृष्टि यही है।

नारी के प्रति इस प्रकार की समुदार दृष्टि वाले कवि पर नारी-निन्दक होने का आरोप लगाना अथवा उसको ऐसा समझना संकीर्णता का ही परिचायक है। तुलसीदास के प्रति यह मात्र एकपक्षीय दृष्टि है। मानसकार पर इस प्रकार के लगाये जाने वाले आरोप युक्तियुक्त नहीं प्रतीत होते, अपितु ये पूर्णतः निराधार भी हैं। आलोच्य ग्रन्थ में पुरुष पात्रों की तुलना में अधिकांश नारीपात्र प्रायः श्रेष्ठतर एवं अत्यन्त आदर्श रूपों में चित्रित हैं। तुलसीदास द्वारा निर्दिष्ट सामाजिक आदर्श भारतवर्ष में चार सौ वर्षों से निरन्तर अनुवर्तित हैं जो कवि की महनीयता के प्रतीक हैं।

निष्कर्ष

कम्बन और तुलसीदास अपने-अपने समय के युगनायक और प्रतिनिधि कवि हैं। उनके विचार, दृष्टि, उद्गार आदि सब कुछ तत्कालीन समाज के हैं। आलोच्य ग्रन्थद्वय से सिद्ध होता है कि उनके उद्गार तत्कालीन सामाजिक भिन्नताओं से प्रभावित हैं। सम्भवतः इसी कारण कम्बन और तुलसीदास के नारियों के प्रति दृष्टिकोण में वैषम्य है।

तुलसीदास ने नारियों के लिए नीतिवचन कहा है, किन्तु कम्ब-रामायण में इस प्रकार के नीति-वाक्य नहीं मिलते, क्योंकि कम्बन-कालीन नारी की सामाजिक स्थिति, आचार-विचार, क्रिया-कलाप आदि रामचरितमानस-कालीन नारी से भिन्न थे। विधवाओं के प्रति दोनों कवियों की दृष्टि में भिन्नता पायी जाती है

---

१. रामचरितमानस २/५६/१।

२. रामचरितमानस १/१०२/२।

कम्बन-कालीन समाज में विधवाओं का आचरण—जीवन-पद्धति शास्त्रोक्त विधि-विधान के अनुकूल थी। कम्ब-रामायण में तारा का चित्रण, इसका सर्वोत्तम दृष्टान्त है। रामचरितमानस-कालीन समाज में विधवाओं का आचरण शास्त्र सम्मत नहीं था, फलतः वे कम्बन की भाँति तुलसीदास की आदर-पात्रा नहीं बन पायी हैं।

कम्बन-कालीन समाज में नारियाँ पुरुषों के सदृश ही विद्या-अध्ययन, संगीत, नृत्य आदि में समान रूप में सम्मिलित होती थीं। वेदों में गहरी आस्था वाले अत्यन्त शक्तिशाली तत्कालीन हिन्दू शासकों के साम्राज्य में नारियाँ अधिक सुरक्षित और स्वतन्त्र थीं। पर्दा प्रथा नहीं थी। मानसकार निज कालीन समाज में नारियों को इतनी अधिक स्वतन्त्रता देने का पक्षधर नहीं है, क्योंकि तत्कालीन म्लेच्छ-शासकों के कारण नारियों की अस्मिता सुरक्षित नहीं थी। इसी कारण रामचरितमानस को तुलसीदास ने नाना भाँति के नीतिवचनों से अलंकृत किया है तथा पातिव्रत-धर्म पर भी अधिक बल दिया है।

कम्बन और तुलसीदास पातिव्रतयुक्त सत्याचरणरता नारियों की प्रशंसा समान रूप में की है। सीता, कौशल्या, सुमित्रा आदि दोनों कवियों द्वारा प्रशंसित एवं वन्दित हैं, तो ताड़का, शूर्पणखा, मंथरा आदि इसके प्रतिकूल निन्दनीय हैं। आलोच्य कविद्वय का नारी-विषयक यह दृष्टिकोण तत्कालीन सामाजिक परिवेश से पूर्णतः प्रभावित है।

अध्याय : चतुर्थ

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस के नारी-पात्र : चरित्र-चित्रण

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस के नारी-पात्र: चरित्र-चित्रण

राम-कथा में राम, सूर्य-सदृश वह केन्द्र बिन्दु हैं, जिसके चतुर्दिक् सम्पूर्ण नारी-पात्र उपग्रहवत् परिक्रमा करते हैं। अधिकांश नारी-पात्रों का इस केन्द्र से अटूट सम्बन्ध है। राम-पक्ष के ही नहीं, अपितु रामेतर पक्ष के भी कतिपय नारी-पात्र इस परिक्रमा में सम्मिलित हैं।

सृष्टि-कर्त्ता ने नारी-हृदय का सृजन असीम ममता, स्नेह, करुणा, मृदुलता आदि से आप्लावित करके किया है। उसने नवीन प्राणी उत्पन्न करने तथा उसकी सेवा-शुश्रूषा करके पूर्ण मानव बनाने की प्रबल लालसा उसमें यों ही नहीं दी है, अपितु परमपिता का इसमें कुछ विशिष्ट उद्देश्य है। कम्ब-रामायण और रामचरित-मानस के नारी-पात्रों में भी ये गुण विद्यमान हैं। कविद्वय ने अपनी-अपनी कलात्मकता और विधि से इन्हें प्रस्तुत किया है। इन दोनों महाकाव्यों के नारी-पात्र; सम्पूर्ण नारी-जगत् के लिए आदर्श ही नहीं, अपितु अपने उदात्त, मोहक-महनीय, मनोरम गुणों द्वारा सर्वथा अनुकरणीय भी हैं। पूजनीया जनकजा अपने पातिव्रत, सौन्दर्य, विवेकशीलता के लिए, वात्सल्य-सम्पन्ना सरल हृदया माता कौशल्या मातृत्व तथा अपनी नीतिज्ञता के लिए आदर्श हैं, सुमित्रा एक आदर्श माता, आदर्श विमाता के रूप में चित्रित हैं, तो अपने लक्ष्य के प्रति कैकेयी की दृढ़ता अनुकरणीय है। कम्ब-रामायण में चित्रित सतीत्व की प्रतिमूर्तितारा और मन्दोदरी का अद्वितीय पातिव्रत सभी के लिए अवलम्बनीय है। शबरी और त्रिजटा की राम-भक्ति वरणीय है। आलोच्य ग्रन्थद्वय में चित्रित नारी-पात्र हाड़-मांस के हैं, तथापि उनमें पायी जाने वाली अलौकिक शुचिता, उदात्तता, महनीयता, त्याग, निष्ठा आदि सब-कुछ आज भी हमारे लिए सर्वथा अनुकरणीय है और भविष्य में भी रहेगा।

पात्र-संकल्पना

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस की पात्र-संकल्पना पर तत्कालीन परिस्थिति, संस्कृति, कविद्वय की अपनी-अपनी दृष्टि, धर्म-दर्शन आदि का प्रभाव स्पष्टतः परिलक्षित होता है। आलोच्य ग्रन्थद्वय के कथानक का मूलाधार ग्रन्थ एक है, तथापि पात्र-संकल्पना में भिन्नता है। उनकी पात्र-संकल्पना में वही स्वाभाविक

भिन्नता है, जो एक मूर्ति को दो मूर्तिकारों द्वारा पृथक् काल में बनाने पर पायी जाती है।

किसी भी काव्य-महाकाव्य के सृजन में पात्र-संकल्पना करनी पड़ती है। उन्हीं पात्रों के माध्यम से कथानक पूर्ण होता है, और उन्हीं के माध्यम से रचनाकार अपने उद्देश्य को प्रकट करता है एवं उसकी प्राप्ति भी उन्हीं के माध्यम से होती है। वाल्मीकि-रामायण की मूलकथा के आधार पर लिखे जाने वाले कम्ब-रामायण और रामचरितमानस के रचनाकारों को अपने पात्रों के प्रस्तुतीकरण में कुछ अधिक कठिनाई दिखलाई देती है, क्योंकि किसी स्वतन्त्र रचना—नाटक, उपन्यास, कहानी, काव्य-महाकाव्य आदि के पात्रों के प्रस्तुतीकरण में उसके रचनाकारों के सम्मुख कोई विशेष निर्बन्ध अथवा कठिनाई नहीं होती है। वह जिस रूप में चाहता है, तदनुरूप उन्हें अपनी रचना में सहज भाव से प्रस्तुत करता है, परन्तु किसी पूर्ववर्ती रचना के आधार पर दूसरे ग्रन्थ के प्रणयन में उसके पात्रों के प्रस्तुतीकरण में यह स्वातन्त्र्य नहीं होता, क्योंकि इस कथा के पात्रों का चरित्र उपजीव्य ग्रंथ में सृजित होता है। परवर्ती रचनाकार मूलकथा के पात्रों को पूर्वचरित्र से अधिक परे, अपनी रचना में प्रस्तुत नहीं कर सकता, क्योंकि मूलकथानुसार पात्र-संकल्पना करने पर वह मूलकथा का रूपान्तर मात्र होगा—स्वतन्त्र—नवीन रचना नहीं। उसकी पात्र-संकल्पना का यह अन्तर युग-परिवेशवश आता है।

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस दोनों एक ही कथानक के आधार पर निर्मित हैं, तथापि इन दोनों कवियों की पात्र-संकल्पना में किञ्चिद् भिन्नता है। यह भिन्नता कवि की रचना-कुशलता, शास्त्रज्ञता, दार्शनिक-धार्मिक मान्यताओं, तत्कालीन परिस्थितियों, सामाजिकयुग-परिवेश, संस्कृति आदि पर आधारित है। इसी कारण कथानक और घटनाओं में अद्भुत साम्य होने पर भी वाल्मीकि, कम्बन, तुलसीदास, मैथिलीशरण गुप्त प्रभृतिमहाकवियों के पात्र भिन्न-भिन्न रूपों में प्रस्तुत और वर्णित हैं।

चरित्र-चित्रण

किसी व्यक्ति अथवा पात्र की पहिचान उसके व्यक्तिगत गुणों, मूल्यों, योग्यताओं के आधार पर बनती है। ये गुण उसके चरित्र के आधार पर व्याख्यायित होते हैं। व्यक्ति का व्यक्तित्व, उसके चरित्र से निर्मित होता है। यदि मनोवैज्ञानिक विश्लेषण में न पड़ा जाय, तो कहा जा सकता है कि चरित्र व्यक्ति या किसी पात्र की आन्तरिक प्रकृति से सम्बन्धित होता है तथा व्यक्तित्व बाह्य प्रकृति से। चरित्र के आधार पर किसी व्यक्ति या पात्र के व्यक्तित्व का मूल्यांकन होता है। श्रेष्ठ

व्यक्तित्व से उसका सम्मोहक स्वरूप बनता है। चरित्र से व्यक्ति या पात्र के आन्तरिक गुणों का ज्ञान होता है। आकर्षक व्यक्तित्व से आकृष्ट करने वाले व्यक्ति का चरित्र निकृष्ट भी हो सकता है। इसी प्रकार चरित्र से आकृष्ट करने वाले व्यक्ति का व्यक्तित्व प्रत्यक्ष-दर्शन में अनाकर्षक भी हो सकता है, किन्तु वह चिरस्थायी है। चरित्र और व्यक्तित्व –ये दोनों मानव स्वभाव के परिवर्तनशील पहलू को प्रकट करते हैं। श्रेष्ठ चरित्र और व्यक्तित्व—दोनों का समन्वित रूप अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्तियों में पाया जाता है। राम-कथा के नारी-पात्रों में सीता शीलयुक्ता और शूर्पणखा शील-वियुक्ता के सुन्दर दृष्टान्त हैं।

राम-कथा में प्रयुक्त अधिकांश पात्रों के मन में राम के प्रति सम्मान एवं श्रद्धा-भाव है। राम के प्रति पात्रों की यह प्रीति उनकी स्थिति-अनुरूप विवधरूपा हो गयी है—दृष्टान्तार्थ कौशल्या, सुमित्रा, कैकेयी में विद्यमान यह प्रीति, 'वात्सल्य' है, तो सीता के साथ यही 'प्रेम' के नाम से अभिहित होती है, पात्रों के मन की यही 'प्रीति' लक्ष्मण, भरत, शबरी, तारा, मंदोदरी, त्रिजटा आदि में 'भक्ति' के रूप में पायी जाती है। सम्भवतः इसी प्रीतिवश अधिकांश नारी-पात्रों का चरित्र-चित्रण दोनों महाकाव्यों में रामोन्मुख हुआ है।[1]

कोई व्यक्ति सर्वदा अच्छा तथा कोई सर्वदा बुरा ही रहेगा—यह ध्रुव सत्य नहीं है, अपितु यह समय, परिस्थिति और घटनाओं पर निर्भर करता है। आदर्श पतिपरायणा, सर्वगुणसम्पन्ना, सत्कुलप्रसूता सीता का चरित्र विविध दृष्टियों से अनुकरणीय एवं महनीय है, किन्तु समय, परिस्थिति और घटनाओं के प्रसंगानुसार यह सर्वगुणसम्पन्ना अत्यन्त उदात्त एवं अनुकरणीय चरित्र भी सामान्य नारी के धरातल पर आ गया है। इसी कारण वाल्मीकि की सीता वन-गमन की अनुमति प्रदान करने में विलम्बरत राम को निस्तेज तथा नपुंसक कहती है।[2] वह पंचवटी में लक्ष्मण को, भ्राता के रूप में आये हुए राम के शत्रु, उसे (सीता को) प्राप्त करने के लिए राम का विनाश चाहने वाला कहती है।[3] इस प्रसंग में कम्बन की सीता ने लक्ष्मण का अनादर करते हुए अग्नि में गिरकर प्राण त्यागने की धमकी दी है।[4]

१. 'मनियत सबहिं राम के नाते।'—रामचरितमानस, बालकाण्ड।
२. वाल्मीकि-रामायण, २/३०/३,४।
३. उपर्युक्त ३/४५/७,८।
४ कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, रावणन्शूळच्चिप्पड़ळम् ३/८/१२-१३।

तुलसीदास की सीता भी लक्ष्मण को "मरम बचन" कहती है।[1] महनीय गुणों से पूरिता सीता हनुमान् की भावनाओं पर विचार किये बिना, उन्हें विविध भाँति से डाँटते-फटकारते हुए कहती है कि तुमने अपना कपित्व दिखा ही दिया। अपमान का कड़ुवा घूँट पीते हुए अन्ततः हनुमान् कहते हैं कि आज मेरा प्रथम पराभव हुआ है।[2] कम्ब-रामायण और रामचरितमानस में यह प्रसंग वर्णित नहीं है।

कैकेयी का चित्रण समय, परिस्थिति तथा घटनाओं के प्रसंगानुसार आलोच्य ग्रन्थद्वय में हुआ है। उसके जीवन की पूर्वार्द्ध घटनाओं का चित्रण प्रस्तुत करने में कवियों ने अपनी काव्य-कुशलता एवं चातुर्य से उसकी प्रशंसा करके अपनी लेखनी को कृतार्थ किया है, तो कैकेयी के जीवन की उत्तरार्द्ध-प्रतिमा को उन्होंने निन्द्य बना दिया है।

कवि-दृष्टि, धर्म-दर्शन, तत्तत्कालीन सामाजिक युग-परिवेश आदि से भी पात्रों का चरित्र-चित्रण प्रभावित होता है। इसी प्रभाववश वाल्मीकि ने सीता को एक आदर्श नारी के रूप में चित्रित किया है, कम्बन ने उसे साक्षात् लक्ष्मी के रूप में और तुलसीदास ने आराध्य की धर्म-प्रिया के रूप में अपने महाकाव्य में प्रस्तुत किया है। कवि की पात्र-संकल्पना का ज्ञान उसके पात्रों के चरित्रों के आधार पर होता है, जिसमें उसके उद्देश्य भी स्पष्ट परिलक्षित होते हैं।

नारी-पात्र : वर्गीकरण

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस के कथा-प्रवाह में नारी-पात्रों की एक लम्बी श्रृंखला है। प्रस्तुत शोधप्रबन्ध के चरित्र-चित्रण की परिधि में कथा-प्रवाह के अतिशय महनीय एवं महत्त्वपूर्ण पात्रों को ही अध्ययन का विषय बनाया गया है। नारी-पात्रों का वर्गीकरण सात्त्विक, राजस, तामस अथवा उत्तम, मध्यम तथा सामान्य कोटि के नारी-पात्र के रूप में अथवा सामान्य तथा गौड़ नारी-पात्र या राम को प्रिय नारी-पात्र, राम की सेविकाएँ तथा रामविरोधी नारी-पात्र आदि विविध श्रेणियों में किया जा सकता है, किन्तु यहाँ पर कुछ विशेष उद्देश्यवश ऐसा वर्गीकरण नहीं किया गया है, क्योंकि किसी श्रेणी-विशेष में पात्रों का वर्गीकरण प्रस्तुत करते समय पात्रों के आचरण, कर्म आदि की साम्यता को दृष्टि में रखकर उनको एक-एक निश्चित वर्ग में रखा जाता। इस प्रकार नारी-पात्रों का चरित्र-

---

१. रामचरितमानस, ३/२८/३।
२. वाल्मीकि-रामायण।

चित्रण किसी वर्ग-विशेष में विभाजित करने पर निश्चित-रूपेण उनका अवमूल्यन होगा, क्योंकि वर्गीकरण करने पर प्रत्येक नारी-पात्र के साथ किसी-न-किसी बिन्दु पर अन्याय हो जायेगा। इस रूप में उनका असीम व्यक्तित्व एक निश्चित श्रेणी में निबद्ध होगा। सत्य तो यह प्रतीत होता है कि आलोच्य ग्रन्थद्वय के प्रत्येक नारी-पात्र की अपनी एक अलग श्रेणी है, उसका अपना एक अलग वर्ग है—जिसका न तो किसी पात्र से तुलना है, न साम्यता। प्रत्येक पात्र का अपना एक अलग विशिष्ट चरित्र और व्यक्तित्व है, जिसकी तुलना दूसरा पात्र क्या स्वयं राम और सीता भी नहीं कर सकते। अतएव नारी-पात्रों का तुलनात्मक चरित्र-चित्रण, किसी श्रेणी या वर्ग में विभक्त न करके, कथा-प्रवाह में पात्रों के प्रवेश-क्रमानुसार किया जा रहा है।

प्रस्तुत शोधप्रबन्ध की परिधि में लिये गये अधिकांश नारी पात्र द्युलोक की दिव्य किरण-सदृश पवित्र हैं, उषा-सदृश कान्तिमान् हैं तथा साक्षात् वाग्देवी-सदृश ज्ञानमय हैं। प्राचीनता के आधार पर कम्ब-रामायण के कथा-प्रवाह में प्रवेश-क्रमानुसार मात्र इन्हीं अग्रलिखित नारी-पात्रों का तुलनात्मक चरित्र-चित्रण शोधप्रबन्ध में क्रमशः विश्लेषित किया जा रहा है।

१. कौशल्या २. कैकेयी ३. सुमित्रा ४. ताटका ५. अहल्या ६. सीता ७. ऊर्मिला ८. माण्डवी ९. श्रुतकीर्ति १०. मन्थरा ११. शूर्पणखा १२. शबरी १३. तारा १४. त्रिजटा १५. मन्दोदरी।

सम्भव है किसी एक महाकाव्य के नारी-पात्र का चरित्र, दूसरे महाकाव्य के नारी-पात्र के चरित्र से कुछ बिन्दुओं पर श्रेष्ठतर रूप में प्रस्तुत किया हुआ प्रतीत हो—तो ऐसा विवेचन एवं मूल्यांकन उस महाकाव्य के वर्णन के ही आधार पर हुआ है।

यहाँ प्रस्तुत है कथा-प्रवाह के प्रवेश-क्रमानुसार नारी-पात्रों का विश्लेषण—

कौशल्या

कौशल्या अयोध्याधिपति की प्रथम-प्रधान महिषी, राम की माता तथा समदर्शीपतिप्रिया, पुत्रवत्सला एवं धर्मशीला। जनसामान्य में उन्हें 'कौशल्या' नाम से

जाना जाता है, किन्तु उनको 'रामायण' में आदिकवि द्वारा 'कौशल्या' नाम से ही अभिहित किया गया है ।[१]

कम्ब-रामायण में कौशल्या

कम्ब-रामायण में हमें कौशल्या का प्रथम दर्शन बालकाण्ड के 'तिरुअवतार-प्पड़ळम्' में चरु-वितरण के समय मिलता है । धूम-सदृश काली, सुकोमल, घुँघराली अलकें, बिम्बाफल-सदृश अधरोष्ठवाली, लावण्यपूर्णा कौशल्या का उल्लेख कम्ब-रामायण में आलोच्य कवि ने एक अनुपम सुन्दरी के रूप में किया है ।[२] कम्ब-रामायण में कौशल्या दशरथ की पत्नी तथा राम की माता के रूप में वर्णित हैं, किन्तु इनके माता-पिता कुल आदि के सम्बन्ध में कम्बन मौन हैं ।

कौशल्या का वर्णन कम्ब-रामायण के अयोध्याकाण्ड में विस्तारपूर्वक मिलता है । कौशल्या, चक्रवर्ती दशरथ के उत्तराधिकारी के रूप में राजमुकुट धारण किये हुए, अपने पुत्र राम की कल्पना में उनके आगमन की प्रतीक्षा करती हुई बैठी हैं, किन्तु राम उनकी कल्पना के पूर्णतः प्रतिकूल अकेले वन-गमन हेतु उनका आशीर्वाद प्राप्त करने आते हैं । राम को अपने प्रतीक्षित वेश में न देखकर, वे अत्यन्त सामान्य भाव से इसका कारण पूछती हैं—राम कहते हैं कि आपका प्रेम-पात्र उत्तम गुणवाला मेरा भाई भरत किरीट धारण करने वाला है ।[३]

कौशल्या दशरथ के अन्य पत्नियों के पुत्रों पर भी राम-सदृश प्रेम रखती हैं,[४] तथापि भरत उन्हें कुछ अधिक प्रिय हैं ।[५] कौशल्या समदर्शी हैं । उन्हें राम या भरत के राजा होने में कोई अन्तर नहीं दिखलायी पड़ता, वे राम को भरत के साथ मिलकर रहने की परामर्श देती हैं,[६] किन्तु राम द्वारा वन-गमन की सूचना पाते ही एक सामान्य माता की भाँति वह पुत्र-वत्सला मूर्च्छित होकर गिरकर विलाप करने लगती है । प्रस्तुत चित्रण में आलोच्य कवि ने उनके मातृवात्सल्य को सुन्दर रूप में

---

१. वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड ।
२. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, तिरुअवतारप्पड़ळम् १/५ ८६ ।
३. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड. नगरनीङ्गुप्पड़ळम् २/४/२-४ ।
४. उपर्युक्त २/४/५ ।
५. उपर्युक्त २/४/५ ।
६. उपर्युक्त २/४/६ ।

चित्रित किया है ।[१] राज्याभिषेक में अवरोध उत्पन्न होने के पश्चात् राम-वन-गमन तक की घटनाओं में कौशल्या एक आदर्श पतिप्रिया, पुत्रवत्सला, धर्मशीला, सुख-दुःख में समभाव आदि रूपों में कम्ब-रामायण में चित्रित हैं ।[२]

जिस चक्रवर्ती के द्वार पर बड़े-बड़े राजा भी खड़े रहते हैं, उनकी पट्ट-महिषी तथा ब्रह्म की भी जन्मदात्री के रूप में, कौशल्या का परिचय, भरत गुह को देते हैं ।[3]

चौदह वर्षों के उपरान्त वन से राम-लक्ष्मण-सीता के अयोध्या लौटने पर माता अपने पुत्रों से बिछुड़ी हुई, धेनुवत् मिलती हैं। इस प्रकार कौशल्या को कम्ब-रामायण में सर्वथा उदात्त, सर्वगुणसम्पन्ना श्रेष्ठ पतिव्रता एवं पुत्रवत्सला के रूप में कवि ने प्रस्तुत किया है ।

रामचरितमानस में कौशल्या

महाराजा दशरथ की प्रथम महिषी एवं राम-सदृश आदर्श पुत्र की माता के रूप में इनका उल्लेख रामचरितमानस में मिलता है। कौशल्या का स्थान अयोध्या के राज-परिवार की तीनों रानियों में सर्वोच्च है । दशरथ पुत्रेष्टि यज्ञ से प्राप्त सम्पूर्ण चरु का आधा भाग कौशल्या को देते हैं[४]—शेष आधे भाग में दोनों रानियों को । इससे भी इनका प्रभाव स्पष्ट होता है । कौशल्या को रामचरितमानस में शतरूपा का अवतार कहा गया है ।[५]

प्रत्येक माँ अपने पुत्र की उन्नति का समाचार सुनकर आनन्दित होती है । कौशल्या भी राम के पट्टाभिषेक का समाचार सुनकर प्रसन्न होती हैं । वह ब्राह्मणों को नाना भाँति के दान देती हैं तथा विविध देवी-देवताओं की पूजा करती हैं ।[६]

कौशल्या भौतिक जीवन में राम के प्रति वात्सल्य प्रदर्शित करती हुई, अपने अलौकिक ज्ञान का सर्वदा परिचय देती रहती हैं । राम-वन-गमन के पूर्व; कौशल्या

---

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड-नगरनीङ्गुप्पड़ळम् २/४/९-१४ ।

२. उपर्युक्त ।

३. कम्ब रामायण, अयोध्याकाण्ड, गुहाप्पड़ळम् २/११/६५ ।

४. रामचरितमानस १/१९०/१ ।

५. उपर्युक्त १/१४६-१५२ ।

६. उपर्युक्त २/८/२-३ ।

से अनुमति-आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु जाते हैं। चौदह वर्षों के वनवास का समाचार राम अनुत्तेजित होकर कौशल्या से कहते हैं, जिसे सुनकर कौशल्या सहम जाती हैं, किन्तु तत्क्षण सँभल जाती हैं। मानसकार ने यहाँ पर उनके असीम धैर्य को प्रकट किया है। वे बड़ों की आज्ञा और कर्त्तव्य को सामान्य मानवोचित भावनाओं के ऊपर मानती हैं। वे राम पर कैकेयी का भी अपने सदृश अधिकार मानती हैं—

जौं पितु मातु कहेउ बन जाना। तौ कानन सत अवध समाना ॥[१]

'सरल सुभाउ राम महतारी'[२] वन के कष्टों की कल्पना और राम-सीता की सुकोमलता को सोचकर व्याकुल हो जाती हैं, किन्तु स्थिति को देखकर राम को वन-गमन की अनुमति हृदय पर पत्थर रखकर देती हैं।

भरत मातुल-गृह से लौटने पर, अयोध्या की घटनाओं से अवगत होने पर कष्ट से व्याकुल होकर कैकेयी के यहाँ से सान्त्वना हेतु कौशल्या के ही पास जाते हैं। पुत्र-पुत्रवधू का वन गमन, दशरथ की मृत्यु आदि के दारुण दुःख से कौशल्या 'कनक कलप बर बेलि बन मानहुँ हनी तुषार'[३] की तरह दिखलायी दे रही हैं। भरत उनके पास पहुँचकर सभी घटनाओं का मूल स्वयं को मानते हुए अपनी माँ कैकेयी तथा स्वयं अपनी भी निन्दा करते हैं।[४] यह उदारमना माँ—कौशल्या उन्हें हृदय से इस प्रकार लगाती हैं जैसे मानो राम ही वन से अयोध्या वापस लौट आये हों। उनके स्तनों से दुग्ध पयःस्रवित होने लगा तथा नेत्रों से अश्रु-धारा।[५]

कौशल्या भरत को विविध प्रकार से सान्त्वना देती हैं—'जनि मानहु हियँ हानि गलानी। काल करम गति अघटित जानी।'[६] इस प्रकार काल करम गति को ही सम्पूर्ण घटनाओं का मूल बताकर तुलसीदास की कौशल्या ने सबको निर्दोष सिद्ध कर दिया है। इसी प्रकार चित्रकूट में भी कौशल्या का विवेकसम्मत तथा नीतियुक्त विचार प्रकट हुआ है।[७] चौदह वर्षों के उपरान्त राम के वन से प्रत्यावर्तन पर

१. रामचरितमानस २/५६/२।
२. उपर्युक्त २/५५/४।
३. उपर्युक्त २/१६३।
४. उपर्युक्त २/१६४/२-४।
५. उपर्युक्त २/१६५/१७३।
६. उपर्युक्त २/१६८/३।
७. उपर्युक्त २/२८२ २।

कौशल्या का मातृत्व उमड़ पड़ता है—'कौशल्यादि मातु सब धाई । निरखि बच्छ जनु धेनु लवाई ।'[१] राम वन से लौटकर सभी माताओं से सप्रेम-सहर्ष-सानन्द मिलते हैं । उनकी वियोगोत्पन्न भयानक विपत्ति दूर हो जाती है, माता कौशल्या का शरीर बारम्बार पुलकित हो रहा है ।

निष्कर्ष

रामचरितमानस में वन-गमन हेतु अनुमति माँग रहे राम से कौशल्या कहती हैं—'जौं पितु मातु कहेउ बन जाना । तौ कानन सत अवध समाना ।'[२] कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन नहीं मिलता ।

वन-गमन के समय राम को समझाते हुए माता कौशल्या कहती हैं कि वन-देवता तुम्हारे पिता, वन-देवियाँ तुम्हारी माता, और वहाँ के पशु-पक्षी तुम्हारे सेवक होंगे। कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन नहीं मिलता। कौशल्या के मन में राम की भाँति सीता पर भी अत्यधिक स्नेह है । एक आदर्श सास की भाँति सीता पर उनका पुत्री-वत् स्नेह है । 'दीप बाति नहिं टारन कहऊँ'[३] से उनका सीता पर असीम स्नेह प्रकट होता है । कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन नहीं प्राप्त होता है ।

कौशल्या को मानस में शतरूपा का अवतार कहा गया है ।[४] कम्ब-रामायण में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता । कौशल्या नहीं चाहती हैं कि सीता पर वन के दुःखों की छाया भी पड़े । एक स्नेहमयी माँ की तरह वे पुत्र-वियोग में पुत्र-वधू सीता का सहारा चाहती हैं —'जौं सिय भवन रहै कह अम्बा । मोहि कहँ होइ बहुत अवलंबा ।'[५] कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन नहीं मिलता ।

कौशल्या के चरित्र-चित्रण में आलोच्य ग्रन्थद्वय में उपर्युक्त वैषम्य पाया जाता है, किन्तु आलोच्य कविद्वय ने कौशल्या को एक आदर्श माता के रूप में चित्रित किया है । वे समदर्शी हैं. जिनका भरत तथा राम पर समान स्नेह है । सभी पुत्रों पर सम-स्नेह भाव के कारण आलोच्य ग्रंथद्वय में अपने मन की निष्कलंकता प्रकट करने के उपरान्त, भरत को देखकर कौशल्या इस प्रकार आनन्दित होती हैं, जैसे राम ही वन से अयोध्या वापस लौट आये हों । अश्रुपूरित नेत्रों वाले भरत को, कौशल्या गले से

---

१. रामचरितमानस ७/६/५ ।
२. उपर्युक्त २/५६/१ ।
३. उपर्युक्त २/५६/३ ।
४. उपर्युक्त १/१० ३ ।
५. उपर्युक्त २/६०/८ ।

लगा लेती हैं। भरत के प्रति उनका ऐसा मातृत्व उमड़ पड़ा कि उनके पीन स्तनों से दूध टपकने लगा। आलोच्य कविद्वय के इस वर्णन में अद्भुत साम्य है।

राम की माता पद से गौरवान्वित कौशल्या की मूर्ति को शिल्पीद्वय ने अपनी विलक्षण शिल्प-कला-ज्ञान से वात्सल्यसम्पन्ना आदर्श माता, आदर्श पतिपरायणा पत्नी, स्नेहपूरिता आदर्श सास, आदर्श राजमाता, श्रेष्ठ नीतिज्ञा के रूप में सभी स्त्रियों द्वारा अनुकरणीय, विविध उदात्त गुणों से ओत-प्रोत श्रेष्ठतम गृहिणी के रूप में आलोच्य ग्रंथद्वय में प्रस्तुत किया है। 'कार्येषु दासी, करणेषु मन्त्री शय्याषु रम्भा' के रूप में आलोच्य ग्रंथद्वय में प्रस्तुत; माता कौशल्या का चरित्र भारतीय आदर्शों के सर्वथा अनुकूल है। वन्दनीय माता कौशल्या का चरित्र भारतीय नारियों के लिए एक जाज्वल्यमान आदर्श है।

कैकेयी

राम-कथा में दशरथ की तीन रानियों—कौशल्या, कैकेयी, सुमित्रा का उल्लेख मिलता है, किन्तु दशरथ ने इनसे कब; कैसे और किन परिस्थितियों में विवाह किये? ये कब और कैसे आकर राजमहल की श्रीवृद्धि में जुड़ीं?—इसका वाल्मीकि-रामायण, कम्ब-रामायण और रामचरितमानस में कहीं पर भी उल्लेख नहीं मिलता। इन तीनों महारानियों का प्रथमोल्लेख पायस-वितरण के समय, दशरथ की रानियों के रूप में पाठकों को प्राप्त होता है। कैकेयी दशरथ की तीन रानियों में एक हैं। केकय-नरेश की पुत्री होने के कारण उनका नाम कैकेयी पड़ा। कम्ब-रामायण में कैकेयी के स्थान पर कहीं-कहीं 'कैकेशी' नाम से इसका उल्लेख हुआ है।

कैकेयी का चरित्र 'बिधि प्रपंच गुन अवगुन साना' का सर्वोत्तम उदाहरण है। शील, सौन्दर्य, तेजस्विता, कूटनीति, लक्ष्य के प्रति दृढ़ निश्चय, एक सच्ची रानी के गुणों से पूरित आदि विविध गुणों से भूषित कैकेयी अपने जीवन के पूर्वार्द्ध में दशरथ से लेकर सम्पूर्ण प्रजा की हृदय-मल्लिका बनकर सभी को अपना प्रशंसक बना लेती है, किन्तु जीवन के उत्तरार्द्ध में क्रूर-नियति का शिकार होकर सम्पूर्ण समाज में नारी-जाति के लिए कलंक और अविश्वसनीयता का उदाहरण बन जाती है। वह कुटिलता तथा कठोरता का प्रतीक बन जाती है। कैकेयी के चरित्र का महत्त्व उसकी आदर्शवादिता के कारण नहीं, वरन् वस्तु निष्ठा के कारण है। कैकेयी का महत्त्व भरत जैसे आदर्शनिष्ठ पुत्र की माता होने के कारण न होकर, सम्पूर्ण कथा को एक निश्चित लक्ष्य तक पहुँचाने हेतु अप्रत्याशित रूप से कथा को विलक्षण मोड़

देने के कारण है, जिसके फलस्वरूप वह आम पाठक, दर्शक, श्रोता, भक्त, दशरथ, सम्पूर्ण प्रजा वर्ग, यहाँ तक कि अपने पुत्र भरत की भी सहानुभूति खो देती है तथा सम्पूर्ण नारी-जाति के लिए कलंक का दृष्टान्त बन जाती है। यह विडम्बना 'नियति' द्वारा निर्धारित है, जिससे यह उदात्त गुणसम्पन्ना नारी दुष्टा प्रतीत होने लगती है।

कम्ब-रामायण में कैकेयी

कम्बन ने कैकेयी का उल्लेख आलोच्य ग्रंथ में यत्र-तत्र 'कैकेशी' नाम से भी किया है। कैकेयी का चित्रण कम्बन ने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण चरित्र के रूप में किया है। इसका परिचय कम्ब-रामायण से अयोध्याकाण्ड के द्वितीय-तृतीय पड़ळम् में मिलता है। तीसरे पड़ळम् का तो नाम कम्बन ने इसी के आधार पर 'कैकेयीशूऴ-विनैप्पड़ळम्' किया है।

कम्ब-रामायण के नारी-पात्र विभिन्न श्रेणियों के हैं। आलोच्य कवि ने कैकेयी को सामान्य श्रेणी के नारी-पात्र के रूप में चित्रित किया है। यह कवि-परम्परा रही है कि अपनी रचना में प्रस्तुत अप्रिय घटना का मूल कारण किसी नारी-पात्र के होने पर, उस नारी-पात्र का चित्रण अत्यन्त दुष्टा के रूप में करते हैं, किन्तु कम्बन ने इस परम्परा में कैकेयी का चित्रण नहीं किया है।

कम्बन ने कैकेयी के प्रारम्भिक-जीवन का चरित्रांकन श्रेष्ठा के रूप में किया है। कम्बन कैकेयी का बाह्य तथा आन्तरिक चित्रण अत्यन्त उदात्त, महनीय और श्रेष्ठ गुणसम्पन्ना के रूप में किया है।[1] कैकेयी का दशरथ के चारों पुत्रों के प्रति समान प्रेम-स्नेह, ममता-वात्सल्य है। वह मन्थरा से कहती है—शत्रुञ्जयी धनुषधारी मेरे चारों पुत्र सुखी हैं, जो कभी धर्म-विमुख नहीं होते। फिर भी मुझे कौन-सी विपत्ति आ सकती है।[2] चारों पुत्रों में भी, उसका राम पर विशेष अनुराग है। वह कहती है कि राम को पुत्र के रूप में प्राप्त करने वाली मुझ पर भी क्या कोई विपत्ति आ सकती है?[3] कम्बन ने उसे उदारता की देवी के रूप में आलोच्य ग्रंथ में प्रस्तुत किया है, जो कौशल्या की प्रशंसा करते हुए भरत को कौशल्या का ही पुत्र कहकर कौशल्या के परम सौभाग्य—राम के तिलकोत्सव पर आनन्दित एवं प्रसन्न हैं।[4]

---

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, मन्थरेशूऴच्चिप्पड़ळम् २/२/४२-४३।
२. उपर्युक्त २/२/४६।
३. उपर्युक्त २/२/४७।
४. उपर्युक्त २/२/४९।

कैकेयी का राम पर भरत की तुलना में अधिक अनुराग है। मन्थरा द्वारा राम के तिलकोत्सव का समाचार सुनकर माता कैकेयी इतना प्रसन्न होती हैं कि अपनी 'नायकमाला रत्नहार' कैकेयी मन्थरा को शुभ समाचार सुनाने हेतु पुरस्कार-स्वरूप देती हैं।[१] कैकेयी दृढ़मनस्क, कुल-परम्परा का ध्यान रखने वाली, प्रजा की इच्छानुसार कार्य करने वाली तथा अपयश-भीता है।[२]

कम्बन की कैकेयी के विचार-परिवर्तन का कारण तुलसी से भिन्न है। कम्बन की कैकेयी के विचार, मुनियों के तप, देवताओं की माया, देवों से प्राप्त वर, राक्षसों के पाप तथा देवों के पुण्यों से प्रेरित-प्रभावित होकर परिवर्तित होते हैं।[३] गुणशालिनी कैकेयी मन्थरा नामक एक दासी की मन्त्रणा से भयंकर स्वार्थी, अपयश से न डरने वाली, स्वार्थ-सिद्धि के लिए कुछ भी कर सकने वाली, अन्याय करने में दृढ़संकल्पा बन जाती है,[४] जो विवेक खोने के साथ पति खोकर वैधव्य तथा महान् अपयश प्राप्त करती है।

कम्बन दशरथ की मृत्यु का पूर्वाभास कैकेयी द्वारा अपने ललाट की बिंदियाँ मिटाने, मेखला (करधनी) उतारकर फेंकने, चूड़ी-कंगन को उतारने, केश-पाश को खोलकर पृथ्वी पर लोटने में कर देते हैं तथा सीता का वन-गमन होगा—ऐसा पूर्वाभास भी आलोच्य कवि ने द्वितीय पड़ळम् में कर दिया है।[५]

कम्बन ने कैकेयी के चरित्र का उदात्त पक्ष 'मन्थरेशूळच्चिप्पड़ळम्' में वर्णित किया है तथा इसके जीवन एवं सम्पूर्ण यश को कलंकित करने वाला पक्ष आलोच्य-ग्रन्थ के अयोध्याकाण्ड के 'कैकेयीशूळविनैप्पड़ळम्' में प्राप्त होता है। कवि ने इसका पूर्वाभास अयोध्याकाण्ड के 'मन्थरेशूळच्चिप्पड़ळम्' में ही कर दिया है।

एक सामान्य नारी-चरित्र सदृश कैकेयी भी दशरथ से एक शब्द कहे बिना—अपनी भाव-भंगिमा द्वारा अपनी अप्रसन्नता से उन्हें अवगत करा देती है। दशरथ द्वारा कारण पूछने पर अपनी योजना (भरत को राज्य तथा राम को चौदह वर्षीय बनवास) को बिना बताये, उनसे अपने दोनों वरों को माँगती है। दशरथ ने उसे वर माँगने की अनुमति दे दी। कैकेयी ने दो वरों में से प्रथम वर के अनुसार अपने पुत्र भरत को समस्त राज्य का अधिपति-पद तथा दूसरे के अनुसार राम को चौदह वर्षों

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, मन्थरेशूळच्चिप्पड़ळम्, २/२/५२।
२. उपर्युक्त २/२/६४-६६।
३. उपर्युक्त २/२/७७-७८।
४. उपर्युक्त २/२/७४।
५. उपर्युक्त २/२/८६-८८।

के लिए वनवास माँगा।[१] कैकेयी के वर की बात सुनते ही दशरथ मूर्च्छित होकर मत्त गज-सदृश पृथ्वी पर गिर पड़े।[२] दशरथ की वेदना से देवता भी व्याकुल हो गये, किन्तु दृढ़संकल्पा कैकेयी पर इसका किञ्चिदपि प्रभाव नहीं पड़ा।[३] दशरथ कैकेयी के चरणों पर गिरते हैं, किन्तु उस पर इसका भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।[४]

कैकेयी अपने लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु नाना प्रकार के उचित-अनुचित तर्कों-कुतर्कों पर आधारित दृष्टान्त देकर कहती है कि यदि आप भी सत्य की रक्षा नहीं करेंगे, तो अब संसार में कौन सत्यवादी रह जायेगा?[५] राम-वन गमन की कल्पना मात्र से ही दशरथ व्याकुल हो जाते हैं। वे कैकेयी से अपने प्राणों का अभय-दान माँगते हैं, किन्तु कैकेयी उनको शास्त्रसम्मत कार्य करने की परामर्श देती है तथा कहती है कि पहले तो तुमने वर माँगने की बात कही, अब वर-माँगने पर कह रहे हो कि ऐसा वर न माँगो—यह अधर्म है। इस भाँति कैकेयी उन्हें धर्म-ज्ञान करा रही है।

कम्बन ने इस समय कैकेयी का मूल्यांकन स्वयं भी दशरथ की दृष्टि से किया है। कवि ने उसको भर्त्ता की हत्या करने वाली, अपने अपराध को न देखने वाली, कुल-धर्म-उपेक्षिणी, धर्म-उपेक्षिता, निर्दयी, करुणा-रहित आदि विविध उपमानों से सम्बोधित करते हुए उसके चरित्र को रेखांकित किया है।[६] स्त्रियों के परमावश्यक गुण—लज्जा, भय, सरलता, संकोच आदि से अभिज्ञा कैकेयी, इन गुणों से अनभिज्ञा की तरह आचरणरत है। उक्त गुणविहीना नारी कम्बन की दृष्टि में नारी न होकर पुरुष है।[७]

वर प्राप्त करके अपने अभीष्ट की प्राप्ति के उपरान्त कैकेयी दशरथ को मूर्च्छित अवस्था में छोड़कर भार्योचित चिन्ता से विमुख, स्वयं सो जाती है।[८] मनो-

---

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, कैकेयीशूळविनेप्पड़ळम् २/३/१०।
२. उपर्युक्त २/३/१२, २०।
३. उपर्युक्त २/३/१६।
४. उपर्युक्त २/३/१५।
५. उपर्युक्त २/३/३०।
६. उपर्युक्त २/३/२९-३०।
७. उपर्युक्त २/३/३९।
८. उपर्युक्त २/३/४६।

विज्ञान का भी एक अति सूक्ष्म तथ्य है कि अत्यधिक चिन्ताग्रस्त मस्तिष्क, जब तनाव-मुक्त होता है, तभी मनुष्य गहरी निद्रा की अवस्था में पहुँचता है। कवि ने कैकेयी को निद्रा की शांति में पहुँचाकर तथा दशरथ को वेदनापूर्ण मूच्छित अवस्था में प्रस्तुत करके इस तथ्य की नाटकीय अभिव्यक्ति किया है। कैकेयी की क्रूरता, लक्ष्य के प्रति दृढ़ता तथा धैर्य का चित्रण करते हुए कवि ने उसे यम-सदृश क्रूर चित्रित करके वन-गमन तथा वरदान की बात स्वयं कैकेयी द्वारा प्रस्तुत किया है।[१] वह वन-गमन के वरदान को दशरथ के आदेश के रूप में प्रस्तुत करती हुई राम को सुनाती है।[२] इस चित्रण में कवि ने कैकेयी को एक ओर अत्यन्त कुशल नीतिज्ञा के रूप में प्रस्तुत किया है, तो दूसरी ओर क्रूरता में यम से तुलनीय।[३]

कैकेयी की कूटनीतिज्ञता तथा उसका नीतिज्ञरूप वन गमन के समय राजा दशरथ के आदेश को सुनाते समय प्रकट होता है जिसमें वह वन-गमन का आदेश, राम का मन टटोलकर सुनाती है—चक्रवर्ती महाराज ने आदेश दिया है कि समुद्र से आवृत्त पृथ्वी का शासन भरत करेंगे और राम जटाधारी होकर तपस्वी के वेश में गहन अरण्य में जाकर, पुण्यकारी तीर्थों में स्नान करते हुए सात का दोगुना वर्षों अर्थात् चौदह वर्ष व्यतीत करेंगे।[४]

कम्बन की कैकेयी दूरदृष्टि सम्पन्न तथा नीतिज्ञा है। वह कुल-गुरु वसिष्ठ के अनुरोध की भी उपेक्षा करती है। वह अत्यन्त नीतिज्ञ तथा धर्मज्ञ, किन्तु त्रिया-चरित्र के साथ सिसक-सिसक कर रोते हुए कहती है—अगर राजा अपने वचन को पूर्ण नहीं करते हैं, तो वे सत्य से विचलित हो जायेंगे—तथा मैं अभी मर जाऊँगी।[५] यह वर्णन रामचरितमानस से सर्वथा भिन्न है।

कम्बन की कैकेयी महर्षि वसिष्ठ को आचरण से निष्ठुर, मायाविनी, पिशाचिनी लगती है।[६] स्वयं दशरथ को वह यम सदृश[७] लगती है तथा वे उसको

---

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, कैकेयीसूळविनेप्पड़ळम् २/३/१०३।
२. उपर्युक्त २/३/१०५।
३. उपर्युक्त २/३/१०५।
४. उपर्युक्त २/३/१०५-१०७।
५. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, नगरनीङ्गुप्पड़ळम् २/४/४३।
६. उपर्युक्त २/४/५०।
७. उपर्युक्त २/४/४४-४६।

पत्नी-पद से च्युत करते हैं।[१] कैकेयी को लक्ष्मण भयंकर मूर्खा मानते हैं।[२] भरत के ननिहाल से लौटकर अयोध्या आने पर कैकेयी अपने मायके का समाचार जानने की प्रबल इच्छुक है। भरत द्वारा पिता का समाचार पूछने पर किसी भी दशा में विचलित न होने वाली कैकेयी अत्यन्त निष्ठुरतापूर्वक कहती है कि देवताओं के नमस्कार का पात्र बनकर महाराज स्वर्ग सिधार गये। तुम चिन्ता न करो।[३] यहाँ कैकेयी की भयंकर निष्ठुरता परिलक्षित होती है। राम का समाचार पूछने पर भी इसी प्रकार उत्तर देती है। भरत के माध्यम से कम्बन निकृष्ट नारी के रूप में कैकेयी की निन्दा करते हैं।[४]

कम्बन के भरत, गुह से कहते हैं कि कैकेयी पति को श्मशान, पुत्र को दुःख-सागर, राम को घोर कानन पहुँचाने वाली, विष्णुवत् सम्पूर्ण पृथ्वी को अपने मन के षड्यन्त्र से नापने वाली, अयोध्या में सभी विपदाओं को उत्पन्न करने वाली, लोक-निन्दित सन्तान को पालने वाली, जिसके पापी पेट में चिरकाल तक वास करने वाले मुझ पुत्र के प्राणों को भार बनाने वाली, इस लोक में जहाँ के सभी प्राणी राम-वियोग में दुःखी हैं, अवसाद-लक्षण-रहित कैकेयी मेरी माँ है।[५]

रामचरितमानस में कैकेयी

भरत की माता तथा दशरथ की द्वितीय रानी कैकेयी, का कम्ब-रामायण-सदृश मानस में भी सर्वप्रथम दर्शन चरु-वितरण के समय प्राप्त होता है।[६] रामचरितमानस में भी कैकेयी प्रारम्भ में अत्यन्त विनम्र स्वभाव की पतिपरायणा हैं। **'प्रान तें अधिक रामु प्रिय मोरें'**।[७] कैकेयी कुल-मर्यादा तथा कुल-परम्परा में आस्थावान् है तथा निर्वाहक भी। मन्थरा द्वारा राम के राज्याभिषेक का समाचार सुनकर कैकेयी अत्यन्त प्रसन्न होती है। वह कहती है कि राज्याभिषेक का दिन 'सुमंगल-दायक' होगा।[८] कैकेयी का राम के प्रति कितना प्रेम, स्नेह और वात्सल्य है, इससे अनुमेय है।

---

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, नगरनीङ्गुप्पड़ळम् २/४/४८।
२. उपर्युक्त २/४/१६७।
३. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, पळ्ळिपड़ैप्पड़ळम् २/९/४२-४४।
४. उपर्युक्त २/९/५९।
५. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, गुहप्पड़ळम् २/११/७०।
६. उपर्युक्त १/१९०/२।
७. उपर्युक्त २/१५/४।
८. उपर्युक्त २/१५/१।

राम के राज्याभिषेक के प्रतिकूल मन्थरा को वह मलिनमना, घरफोरी, कहकर डाँटते हुए कहती है कि अगर तुमने पुनः ऐसा कहा तो जीभ 'कढ़ावउँ तोरी' वह मन्थरा को 'कुटिल', 'कुचाली', 'कुबरी' आदि कहकर डाँटती है।[२] राम के प्रति इतनी अस्थावान् और स्नेहपूर्णा माँ कैकेयी का मन-परिवर्तित होकर पूर्णतः प्रतिकूल हो जाता है, ऐसा कई कारणोंवश होता है—राक्षसों से पीड़ित देवतागण राम के राज्याभिषेक के समाचार से चिन्तित होकर इसमें अवरोध उत्पन्न हेतु प्रयत्नशील हो जाते हैं।[३] वे सब इसके लिए सरस्वती की प्रार्थना करते हैं तथा 'बारहिं बार पाय लै परहीं'।[४] 'अजस पेटारी ताहि करि गई गिरा मति फेरि'।[५] इस प्रकार देवताओं एवं सरस्वती द्वारा मिलकर कैकेयी का मन-परिवर्तन किया जाता है, किन्तु सारा दोष एवं अपयश मात्र कैकेयी के ही हिस्से आता है। वह अपने पूर्व-काल के प्राप्त दो वरों द्वारा एक से[६] भरत को राज-तिलक तथा दूसरे से[७] तापस्वियों के वेश में विशेष उदासीन होकर मुनिवत् आचरणरत चौदह वर्षों के लिए राम का वनवास माँगती है। इस वर के कारण राम के राज्याभिषेक की तैयारियाँ रुक जाती हैं तथा अयोध्या में भयंकर तूफान आता है—जिसमें उसका सुहाग भी उजड़ जाता है। रामचरितमानस में सौन्दर्यमयी रमणी, उदारहृदया पति-पुत्र-प्रिया साम्राज्ञी कैकेयी 'भावी' तथा 'मन्दमतिचेरी'[८] के विमार्गदर्शनवश राजमाता-पद की अभिलाषा से अभिशप्त होकर ग्लानियुक्त—क्षोभपूर्ण जीवन व्यतीत करती है।[९] तुलसीदास कैकेयी को 'पापिनी', कलंकिनी', 'नीच' आदि सम्बोधनों से निःसंकोच सम्बोधित करते हैं तथा अन्त तक उसे ग्लानियुक्त बनाये रखकर उसे पश्चात्ताप करने का भी अवसर नहीं देते हैं, किन्तु कैकेयी के माध्यम से राम को उद्धारक अवश्य सिद्ध कर देते हैं।[१०]

---

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, गुहप्पड़लम् २/१४/४।
२. उपर्युक्त २/१४।
३. रामचरितमानस २/१२/१-२।
४. उपर्युक्त २/११/४।
५ उपर्युक्त २/१२।
६. उपर्युक्त २/२९/१।
७. उपर्युक्त २/२९/२।
८. उपर्युक्त २/१२।
९. उपर्युक्त २/२०७/३।
१० उपर्युक्त ७/१०१।

राम-कथा में अगर कैकेयी न होती, तो राम, 'राम' न होते, भरत, 'भरत' न बन पाते, इन्हें यह बनने का सुअवसर कैकेयी द्वारा मिलता है। इसी मर्मवश लक्ष्मण ने वन से लौटने पर 'कैकई कहँ पुनि-पुनि मिले मन कर छोभु न जाइ।'[1] लक्ष्मण का क्रोध जगद्-विख्यात है, किन्तु यहाँ पर उनका आचरण प्रतिकूल प्रतीत होता है—लक्ष्मण को राम-विरोधी किसी भी दशा में स्वीकार्य नहीं है, चित्रकूट जाने पर भरत के प्रति भ्रमित, लक्ष्मण का आचरण इसका प्रबल प्रमाण है। वही लक्ष्मण माता कैकेयी से 'पुनि पुनि मिले'। कैकेयी के प्रति उनका यह आचरण इसी दृष्टिवश होता है, उन्होंने अनुभव किया कि माता कैकेयी के प्रति बहुत अन्याय हुआ है, जिसके प्रक्षालन हेतु वे यथासम्भव प्रयत्न करते हैं। वन-गमन के कारण-इन्द्रजीत-वध, रावण सहित राक्षस-कुल के विनाश से प्राप्त होने वाले यश का प्रधान कारण, वे माता कैकेयी को मानते हैं इसलिए उनके प्रति हृदय से कृतज्ञ हैं।

राम के अनुसार 'दोसु देहिं जननिहि जड़ तेई। जिन्ह गुरु-साधु सभा नहिं सेई।'[2] कैकेयी के सम्बन्ध में तुलसीदास तथा उनके राम की इतनी उदार दृष्टि है, तथापि आज भी कतिपय राम-भक्त कैकेयी का सम्बन्ध कुटिलता से जोड़ते हैं। वे भी भरत की भाँति उसकी (कैकेयी की) भर्त्सना करते हैं। कैकेयी के प्रति क्रमशः मानसकार की दृष्टि में कुछ उदारता एवं नरमी आती जाती है।[3]

सम्पूर्ण राम-कथा में एकमात्र कैकेयी का ही ऐसा चरित्र है, जो प्रशंसा के साथ-ही साथ निन्दा का भी पात्र है। कैकेयी के जीवन की पूर्वार्द्ध की मनोरम, रमणीय एवं प्रशंसनीय झाँकी प्रस्तुत करते समय, जो कवि-चातुर्य पराकाष्ठा पर दिखलाई देता है, वह उसी कैकेयी की निन्दा करते-करते सम्पूर्ण नारी-जाति का निन्दक बन जाता है। वह यह भी भूल जाते हैं कि स्वयं उनकी माँ भी उसी नारी-वर्ग में आती है। कैकेयी के चरित्र में नारी-प्रकृति की परस्परविरोधी प्रवृत्तियों का अद्भुत समन्वयात्मक रूप मिलता है। इस चरित्र के माध्यम से आलोच्यकवि ने नारी के मानसिक द्वन्द्व तथा मनोभावों के परस्पर संघर्ष का अत्यन्त सुन्दर, सजीव तथा मनोवैज्ञानिक चित्रण आलोच्यग्रन्थ में प्रस्तुत किया है।

निष्कर्ष

आलोच्यग्रन्थद्वय के प्रारम्भ में कविद्वय ने विविध उदात्त गुणों से परिपूर्ण

---

१. रामचरितमानस ७/६ख।
२. उपर्युक्त २/२६३/४।
३. उपर्युक्त २/२६३/४, ७/६ख।

अत्यन्त श्रेष्ठ नारी के रूप में कैकेयी का चरित्रांकन किया है। पश्चात्वर्ती घटना-क्रमानुसर—मन्थरा की दुर्मन्त्रणा, देवों की माया, तपस्वियों के तप, राक्षसों के पाप आदि विविध कारणोंवश इसे कुटिला और दुष्टा रूप में कवियों ने प्रस्तुत किया है, जिससे कैकेयी के जीवन के उत्तरार्द्ध की मूर्ति की छवि इतनी विकृत हो जाती है कि वह सम्पूर्ण नारी-जाति के लिए कलंक का दृष्टान्त बन जाती है।

कैकेयी के मनोरम रूप-लावण्य के प्रशंसक तथा उस पर भ्रमर-सदृश मँडराने वाले चक्रवर्ती दशरथ उसकी हृदयहीनता पर इस प्रकार कुपित होते हैं कि उसे जान से मार डालने के लिए सोचते हैं, किन्तु नारी-वध का अपयश उन्हें इससे विरत करता है।[1] रामचरितमानस में ऐसा चित्रण नहीं मिलता है।

तुलसीदास[2] की तरह कम्बन भी कैकेयी की दुष्टता के आधार पर नारी-जाति की निन्दा करने से नहीं चूकते।[3] कम्ब-रामायण में दशरथ से वर प्राप्त करने के समय कैकेयी कहती है कि अगर आप वर नहीं देंगे, तो मैं अपना प्राण त्याग दूँगी, जिससे आपको स्थायी अपयश प्राप्त होगा। रामचरितमानस में भी ऐसा चित्रण प्राप्त है।[4] इस चित्रण में कविद्वय में अद्भुत साम्य है।

कम्ब-रामायण में वन-गमन के समय कैकेयी राम को पहनने के लिए वलकल-वस्त्र दासियों द्वारा भेजती है,[5] किन्तु रामचरितमानस में यह प्रसंग इससे भिन्न रूप में प्राप्त होता है—मानस में 'तमकि उठी कैकेई' ने स्वयं 'मुनि पट भूषन भाजन आनि।'[6] कम्बन के चित्रण में दूतियों द्वारा वलकल वस्त्र भेजने में कैकेयी कुछ कम दुष्ट प्रतीत होती है, जबकि तुलसीदास की कैकेयी यह कार्य स्वयं अपने हाथों से करने के कारण अधिक क्रूर लगती है।

कैकेयी के मन में राम के प्रति सहज करुणा, स्नेह एवं वात्सल्य था, किन्तु मन्थरा की कुमन्त्रणा एवं अन्य विविध कारणों से वह प्रभावित होकर राम-वन-

---

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, कैकेयीशूळ्विनैप्पड़ळम् २/३/१५।

२. बिधिहुँ न नारि हृदय गति जानी।
सकल कपट अघ अवगुन खानी।। —मानस २/१६२/२।

३. कम्ब-रामायण २/३/१९।

४. होत प्रातु मुनिबेष धरि जौं न रामु बन जाहिं।
मोर मरनु राउर अजस नृप समुझिअ मन माहिं।।—रामचरितमानस २/३३/।

५. कम्ब-रामायण २/३/१४७।

६. रामचरितमानस २/७९/१।

गमन का कारण बनती है तथा अपनी सहज करुणा खो देती है। कम्बन कैकेयी की इस निर्घृणता को ही आज भी इस संसार के लोगों को, राम के अपार यशोमृत पान कराने का कारण मानते हैं।[१]

कम्बन की कैकेयी के बुद्धि-परिवर्तन का कारण—मुनियों के तप, देवताओं की माया, देवों से प्राप्त वर, राक्षसों के पाप तथा देवताओं का पुण्य आदि है।[२] तुलसीदास की कैकेयी के बुद्धि-परिवर्तन का कारण—देवताओं द्वारा सरस्वती के 'बार-बार गहि चरन' द्वारा उनमें निवेदन करके राक्षसों के वधार्थ कैकेयी के बुद्धि-परिवर्तन-हेतु तैयार कराते हैं।[३] सरस्वती 'हरषि हृदय दसरथपुर आई।'[४] इस प्रकार इस प्रसंग में आलोच्यग्रन्थद्वय में यह भिन्नता पायी जाती है।

कम्बन, जो नारी को सर्वदा आदरणीया एवं पूज्या मानते हैं, कैकेयी की हृदयहीनता तथा क्रूरता उन्हें उनके मार्ग से विचलित कर देती है और वे भी तुलसीदास की भाँति नारी के 'इस रूप' के आलोचक बन जाते हैं।[५]

सुमित्रा

लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न की माँ, राजा दशरथ की तीन रानियों में एक। 'धर्मे स्थिता धर्म्यं सुमित्रा'—के रूप में इनका परिचय वाल्मीकि ने दिया है।[६] बातचीत करने में कुशला, दोषरहिता तथा रमणीया के रूप में इनका उल्लेख 'रामायण' में प्राप्त होता है।[७] उदारमना, वात्सल्यसम्पन्ना तथा अनेकशः महनीय उदात्त गुणों से युक्त माता सुमित्रा का चरित्र राम-कथा में विविध दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है।

कम्ब-रामायण में सुमित्रा

लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न की माँ, राजा दशरथ की रानी सुमित्रा का चरित्र कम्ब रामायण में कवि ने अत्यन्त संक्षिप्त रूपेण चित्रित किया है। इस संक्षिप्त झाँकी में भी उनके अद्वितीय गुणों की ऐसी भव्य प्रतिमा कम्बन ने निर्मित की है, जो इसकी

१. कम्ब रामायण, अयोध्याकाण्ड, मन्थरैशूळ्च्चिप्पड़ळम् २/२/७८।
२. उपर्युक्त २/२/७८-७८।
३. रामचरितमानस २/१२ ३।
४. उपर्युक्त २/१२/४।
५. कम्ब-रामायण २/३/१७।
६. वाल्मीकि रामायण, २/४४/१।
७. उपर्युक्त २/४४/३१।

पूर्ववर्ती तथा परवर्ती प्रतिमाओं से भिन्न एवं अनुपम है। कम्बन के अनुसार दशरथ की तीन प्रमुख पटरानियाँ—कौसल्या, कैकेयी तथा सुमित्रा हैं। ये दशरथ की तीन प्रमुख पट्टमहिषियों में सबसे छोटी—तीसरे क्रम पर हैं।[१] वाल्मीकि ने 'रामायण' में सुमित्रा को मध्यम पटरानी के रूप में चित्रित किया है। भास ने भी सुमित्रा को तीसरी रानी के रूप में वर्णित किया है। छोटों के प्रति कुछ विशेष अनुराग होता है। सम्भवतः इसी कारण उन्हें दो बार 'चरु' प्राप्त होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि दो बार पायस प्राप्त करने के कारण सुमित्रा दो पुत्रों की जन्मदात्री बनीं। कम्ब-रामायण में पायस-वितरण के समय सर्वप्रथम सुमित्रा का कथा-प्रवाह में प्रवेश होता है।

कौसल्या तथा दशरथ को सान्त्वना प्रदान करने में सुमित्रा ही एकमात्र सामर्थ्यवान् है—ऐसा सोचकर ही राम उनके मेघ-स्पर्शी महल में जाते हैं।[२] इससे सुमित्रा के दिव्य तथा भव्य व्यक्तित्व का ज्ञान होता है कि वे विपत्ति के समय में भी कितनी धैर्यवान् हैं। सुमित्रा स्त्रियोचित स्वाभाविक करुणा और प्रेम की देवी हैं।[३]

कम्ब-रामायण के चित्रण में सुमित्रा स्नेह-वात्सल्य की देवी ही नहीं, अपितु त्याग की भी साक्षात् प्रतिमूर्ति हैं। कौसल्या के पुत्र राम पर उनका अपने पुत्रों से भी अधिक अनुराग है। आलोच्यकवि ने राम-वन-गमन के समय के सुमित्रा का वह रूप वर्णित किया है, जो सम्पूर्ण राम-कथा-साहित्य में बेजोड़ है। वन-गमन हेतु अनुमति प्राप्त करने हेतु आये हुए स्व-पुत्र लक्ष्मण को परामर्श एवं आदेश देते हुए सुमित्रा कहती हैं कि अब सीता-राम ही तुम्हारे माता-पिता हैं, दण्डकारण्य तुम्हारे लिये अयोध्या है। अब तुम्हारा यहाँ पर रहना अपराध होगा। सीता-राम के साथ उनके पीछे-पीछे तुम भी वन जाओ, किन्तु भाई होकर नहीं, अपितु दास होकर जाओ तथा वहाँ पर उनकी सेवा करना, अगर ये अयोध्या को लौटें तो तुम भी लौट कर आना; यदि नहीं लौटें, तो तुम उनसे भी पूर्व अपने प्राण त्याग देना।[४] कम्बन ने सुमित्रा को इस स्थल पर प्रेम, त्याग, आदर्श, वात्सल्य आदि की अनुपम देवी के रूप में चित्रित किया है।

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, तिरुअवतारप्पड़ळम्, १/५/१०५।
२. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, नगरनीङ्गुप्पड़ळम् २/४/२९।
३. उपर्युक्त २/४/१४४।
४. उपर्युक्त २/४/१४६,१४७।

राम-लक्ष्मण के वन-गमन के समय अपने दो बछड़ों से वियुक्त होकर पीड़ित धेनु-सदृश सुमित्रा व्याकुल होकर रो पड़ती हैं।[1] प्रस्तुत वर्णन में कवि ने उनके वात्सल्य एवं ममता का सुन्दर चित्रण किया है।

निषादराज गुह से सुमित्रा का परिचय देते हुए भरत कहते हैं कि करुणा की देवी, साकार धर्म जैसी ये सत्य को स्थिर रखकर, सन्मार्ग का अनुसरण करते हुए, अपने प्राण त्यागने वाले महाराजा दशरथ की छोटी पत्नी हैं। राम का एक अनुज, जो उनका सर्वदा अनुवर्ती रहता है, उस लक्ष्मण की जननी, ये माता सुमित्रा हैं।[2] कम्ब-रामायण में कवि ने सुमित्रा को इसी भाँति प्रस्तुत किया है।

रामचरितमानस में सुमित्रा

दशरथ की तीसरी पत्नी, लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न की माता—सुमित्रा का सर्वप्रथम दर्शन पायस-वितरण के समय मिलता है।[3] कम्ब-रामायण-सदृश रामचरितमानस में भी सुमित्रा का चरित्र संक्षिप्त रूप में मिलता है, किन्तु तुलसीदास ने इस चित्रण में उन्हें सर्वत्र न केवल त्यागमयी एवं विवेकशीला अंकित किया है, अपितु उनके विविध सुलक्षणों तथा अन्य उदात्त भावों का भी चित्रण इन्हीं स्थलों पर किया है।

सुमित्रा के हृदय में महारानी होने के गर्व का लेश भी न था। 'चौकें चारु सुमित्रा पूरी'[4] इसी का प्रतीक है। उन्हें इस प्रपंच से विरक्ति-सी रहती है, इसका सर्वोत्तम उदाहरण अयोध्या की वह घटना है, जिससे सम्पूर्ण अयोध्या में एक तूफान-सा आ गया, जिसमे अयोध्या का प्रत्येक नर-नारी अवगत हो चुका है, किन्तु माता सुमित्रा उससे अनभिज्ञ हैं, जब लक्ष्मण उनसे वन-गमनार्थ अनुमति प्राप्त करने जाते हैं, तो इस समाचार को सुनकर 'मृगी देखि दव जनु चहुँ ओरा'[5] वे 'सहम' जाती हैं। इस घटना से उन्हें बड़ा मानसिक आघात लगता है, किन्तु 'कुअवसर जानी'[6] धैर्य का अवलम्बन लेती हैं।

---

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, नगरनीङ्गुप्पड़ळम् २/४/१४८।
२. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, गुहप्पड़ळम्, २/१ /६८।
३. रामचरितमानस १/१९०/२।
४. उपर्युक्त २/८/२।
५. उपर्युक्त २/७३/३।
६. उपर्युक्त २/७३/१।

राम-वन-गमन के समय सुमित्रा के जीवन का सर्वाधिक उज्ज्वल पक्ष प्रकट होता है जब लक्ष्मण राम के साथ वन-गमन हेतु माता से अनुमति प्राप्त करने जाते हैं। सुमित्रा सुस्पष्ट शब्दों में कहती हैं—'जौं पै सीय रामु बन जाहीं। अवध तुम्हार काजु कछु नाहीं।'[१] सुमित्रा के शब्दों में लक्ष्मण का 'अवध तहाँ जहँ राम निवासू'[२] है – इस अवसर पर सुमित्रा की अद्भुत समसामयिक सूझ-बूझ, महान् त्याग, उदारता आदि दर्शनीय है। रामचरितमानस में इतने उदारगुणों तथा उदात्त भावों से पूरिता माता के रूप में किसी भी नारीपात्र का चित्रण मानसकार ने नहीं किया है।

सुमित्रा कितनी उदारमना, विशालमना और महामना हैं, जो अपने पुत्र लक्ष्मण को वन-गमन के पूर्व नाना भाँति समझाती हैं कि तुम्हारे साथ 'पितु मातु रामु, सिय'[३] हैं। अतः तुम्हें वन में कोई कष्ट नहीं होगा। तुम 'रागु रोषु, इरिषा, मदु मोहू'[४] से परे रहकर राम की वहाँ पर इस प्रकार की सेवा करना कि 'जेहिं न रामु बन लहहिं कलेसू।'[५] निस्सन्देह धन्य है ऐसी उदारहृदया माँ।

उक्त मन्त्रावली में सुमित्रा ने अपनी तत्त्वज्ञता तथा निष्काम सेवा-धर्म का आदेश देकर अपनी सेवापरायणता का ज्वलन्त दृष्टान्त प्रस्तुत किया है। एक शिष्य की तरह लक्ष्मण की भावी त्रुटियों की ओर संकेत करके, वे एक आदर्श गुरु की भाँति उनका समुचित मार्गदर्शन करती हैं। चौदह वर्षोपरान्त सीता-राम के साथ वन से अयोध्या वापस आने पर अत्यन्त प्रफुल्लित मन वाले लक्ष्मण सुमित्रा के चरणों में नमन करते हैं, परन्तु उन्हें आशिष न देकर 'भेटेउ तनय सुमित्राँ राम चरन रति जानि।'[६] इसमें एक विह्वल माँ का भाव नहीं है, अपितु राम के चरणों में लक्ष्मण की अनन्य भक्ति है। राम के प्रति लक्ष्मण की अटूट और गहरी आस्था वश, सुमित्रा उन्हें गद्गद होकर हृदय से लगा लेती हैं। रामचरितमानस में कवि ने सुमित्रा को सर्वथा एक महनीय माँ के रूप में इसी भाँति प्रस्तुत किया है।

निष्कर्ष

आलोच्यग्रन्थद्वय में सुमित्रा का चरित्र दोनों कवियों ने अत्यन्त संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया है, तथापि इस संक्षिप्त चित्रण में भी कविद्वय ने अपने-अपने प्रकार

१. रामचरितमानस २/७३/२।
२. उपर्युक्त २/७३/२।
३. उपर्युक्त २/७५/४।
४. उपर्युक्त २/७५/३।
५. उपर्युक्त २/७५/४।
६. उपर्युक्त ७/६क।

से उनके गुणों की भव्य प्रतिमा निर्मित की है। कविद्वय ने सुमित्रा का चरित्र-चित्रण लगभग एक समान किया है, तथापि सुमित्रा के चरित्रांकन में दोनों कवियों की दृष्टि में कुछ मूलभूत अंतर है—

तुलसीदास की सुमित्रा, कैकेयी द्वारा राम को वन भेजने का समाचार सुनकर अपना सिर धुनने लगती हैं तथा कहती हैं कि पापिनी कैकेयी ने बहुत कुघात किया।[1] किन्तु इस प्राथमिक विफलता के बाद तत्काल सँभलकर शान्त हो जाती हैं और कुअवसर जानकर उपदेश देने लगती हैं। कम्ब-रामायण की सुमित्रा इस घटना को नियतिवश मानती हैं अतएव वह कैकेयी की निन्दा नहीं करती हैं।

कम्बन की सुमित्रा को राम के साथ लक्ष्मण को वन-भेजने में, लक्ष्मण का ही कुछ हित दिखलाई देता है, क्योंकि इसमें बड़े भाई-भाभी की सेवा का अवसर है। सम्भवतः उन्हें यह भी प्रतीत होता है कि अगर राम के साथ लक्ष्मण भी वन जाता है, तो उसके साथ इसकी उग्रता नियंत्रित रहेगी, असुरों-उपद्रवियों के साथ वीरता-प्रदर्शन का अवसर मिल सकता है, मुनियों-ऋषियों के साथ सत्संग भी सुलभ होगा। अतएव वन न जाने से यह इन विविध अवसरों से वंचित हो जायेगा।

कविद्वय ने सुमित्रा के चरित्र को चार आदर्श रूपों—आदर्श पत्नी, आदर्श सपत्नी, आदर्श माता तथा आदर्श विमाता के रूप में चित्रित किया है। राम-कथा का एकमात्र यही ऐसा नारी-पात्र है, जो समग्रतः आदर्श रूप में चित्रित है। सुमित्रा के चरित्र में कहीं पर किसी प्रकार की कोई मानवीय दुर्बलता नहीं झलकती।

सुमित्रा द्वारा दिये जाने वाले आदेश, उपदेश और आशीर्वाद पूर्णतया अनुपम हैं। इसमें उनके चिन्तन-दृष्टि तथा आध्यात्मिक प्रवृत्ति की झलक मिलती है। वस्तुतः इस चरित्र के माध्यम से कम्बन और तुलसीदास ने राम-भक्ति में ही जीवन की सार्थकता को दर्शाया है। इतने उदात्त गुणों वाले इस महनीय चरित्र को, इस बहुमूल्य रत्न को, कविद्वय ने अपनी लेखनी की खराद पर चढ़ाकर इसकी कान्ति को क्यों नहीं और फैलाया? इसको आवश्यकतानुसार अत्यधिक मुखर पात्र क्यों नहीं बनाया?—परिताप होता है।

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि सुमित्रा अयोध्या के राजकुल-रूपी उद्यान की रजनीगन्धा हैं। सूर्यालोक में देखने पर, जिस प्रकार रजनीगन्धा में किसी विशिष्टता का आभास नहीं होता, किन्तु रात्रि के सघन अन्धकार में, उसकी बिखरी हुई

---

१. रामचरितमानस २/२३।

विशिष्ट, मनोरम—सुगन्ध जैसे सबके मन-मस्तिष्क को मुग्ध कर लेती है, वैसे ही सुख-शान्ति की सामान्य परिस्थितियों में सुमित्रा का व्यक्तित्व विशिष्ट रूप में हमारे सम्मुख नहीं आता, किन्तु प्रतिकूल परिस्थितियों में उसके व्यक्तित्व से त्याग की ऐसी सुरभि निःसृत हुई, जिसके आघ्राण मात्र से हृदय अतुलित श्रद्धा-आदर से उमड़ने लगता है। यद्यपि आलोच्यग्रन्थद्वय में सुमित्रा का चरित्र अत्यन्त संक्षिप्त रूप में उपलब्ध होता है, तथापि इस संक्षिप्तता में भी इनके स्वभाव की निश्छलता, धर्मनिष्टता, सहिष्णुता तथा अप्रतिम त्याग आदि अनेक वे गुण हैं जो अन्य माताओं (कौशल्या, कैकेयी) में सर्वदा दुर्लभ हैं। इतने उदात्त, महनीय एवं आदर्श रूप में सुमित्रा का चरित्र दोनों महाकाव्यों में चित्रित है।

ताटका

सुकेत नामक प्रख्यात यक्ष की पुत्री, मारीच की माँ, इच्छानुसार रूप धारण करने वाली एक यक्षिणी, एक सहस्र हाथियों की शक्तिवाली, ऋषि-मुनियों के लिए कष्टदायिनी, अत्यन्त भयानक-दुराचारिणी यक्षिणी और जम्भपुत्र सुन्द की पत्नी के रूप में ताटका का उल्लेख मिलता है।[1]

कम्ब-रामायण में ताटका

वाल्मीकि-सदृश कम्बन ने भी ताटका का उल्लेख अत्यन्त विस्तारपूर्वक किया है। आलोच्यकवि ने आलोच्यग्रन्थ के 'ताटकैवधैप्पड़ळम्' में ताटका के वंश-परिचय, राक्षस होने की घटना, इसकी दुष्टता, हृदयहीनता तथा अद्भुत बल का वर्णन विस्तारपूर्वक किया है। आदिकवि ने रामायण के तीन सर्गों के नब्बे श्लोकों में इस कथा को वर्णित किया है। कम्बन ने भी 'ताटकैवधैप्पड़ळम्' के छिहत्तर श्लोकों द्वारा इसकी कथा को प्रस्तुत किया है।

कम्बन ने ताटका को अतिबलशालिनी के रूप में चित्रित किया है। उसमें एक हजार मदमत्त हाथियों का बल है,[2] जो अच्छे-अच्छे प्राणियों को मारकर खा जाती है, जिसका रूप यमराज-सदृश है, जो मदजल बहाने वाली बड़े बड़े हाथियों को लेकर उनके शुण्डों को एक-दूसरे से बाँधकर उनका हार बनाकर अपने गले में

---

१. वाल्मीकि-रामायण, चौबीसवाँ एवं पचीसवाँ सर्ग।
२ कम्ब-रामायण।

पहनती थी। उसकी भयंकर गर्जना से देवलोक, दशों दिशाएँ, सातों लोक सभी भयभीत होकर थरथराने लगते।[१]

कम्बन ने ताटका को दुष्टा होने पर भी पतिव्रता के रूप में चित्रित किया है। जब उसने अगस्त्य ऋषि के शाप से अपने पति 'सुन्दर' की मृत्यु का समाचार सुना, तो भयंकर क्रोधाग्नि से भर उठती है।[२] ताटका ऐसी दुष्टा है कि संसार तथा देवलोक के मिलने वाले किसी भी प्राणी को मारकर खा जाती है। ताटका रावण की आज्ञा के अधीन रहती है। वह सभी प्राणियों को कुल-समेत मिटाती हुई, सम्पूर्ण अंगदेश में विचरण करती रहती है।[३] विश्वामित्र इसका परिचय राम से इस प्रकार देते हैं—जितने पाप-कृत्य हो सकते हैं, उन सबको यह कर चुकी है, इसने हम तपस्वियों को इसलिए नहीं खाया है, क्योंकि हमारे शरीर सारहीन, फीके और डंठलमात्र हैं।[४] ताटका में सब सामर्थ्य है, उसके लिए कोई भी कार्य असम्भव नहीं है।[५] कम्बन ने ताटका की भयंकरता को इसी रूप में वर्णित किया है। विश्वामित्र की आज्ञा-पालन करते हुए वह राम द्वारा मारी जाती है।[६] अन्त में धनुर्धारी काले मेघ-सदृश राम पर ताटकावधोपरान्त देवताओं ने पुष्प-वर्षा की, और उन्हें बधाइयाँ तथा शुभकामनाएँ देकर वहाँ से विदा लिये।[७] ताटका का चरित्र-चित्रण कम्ब-रामायण में आलोच्यकवि द्वारा इसी रूप में प्रस्तुत किया गया है।

रामचरितमानस में ताटका

रामचरितमानस में ताटका को आलोच्यकवि ने 'ताड़का' नाम से अभिहित किया है। आलोच्यग्रन्थ में यह प्रसंग अत्यन्त संक्षिप्त रूप में इस प्रकार वर्णित है—मुनिविरोधिनी ताटका को विश्वामित्र ने दिखलाया (राम को)। शब्द सुनते ही वह क्रोधित होकर दौड़ी। राम ने एक ही बाण से उसका अन्त कर दिया तथा

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, ताटकैवधैप्पड़ळम् १/७/४९।
२. उपर्युक्त १/७/३२।
३. उपर्युक्त १/७/४३।
४. उपर्युक्त १/७/५१।
५. उपर्युक्त १/७/४१।
६. उपर्युक्त १/७/७५।
७. उपर्युक्त १/७/७६।

दीन जानकर उसे 'निज-पद' दिया।[1] इस प्रकार रामचरितमानस में तुलसीदास ने मात्र एक चौपाई में ही ताड़का-कथा का उल्लेख करके समाप्त कर दिया है।

निष्कर्ष

कम्ब-रामायण में ताटका की कथा अत्यन्त विस्तृत रूप में मिलती है, तो मानस में—अत्यन्त ही संक्षिप्त रूप में। कम्बन ने वाल्मीकि-सदृश इसे ताटका नाम से अभिहित किया है, किन्तु रामचरितमानस ने इसे 'ताड़का' नाम से सम्बोधित किया है। इस कथा को आलोच्यकविद्वय में एक ने अत्यन्त विस्तृतरूप में तथा दूसरे ने अत्यन्त संक्षिप्त रूप में वर्णित किया है, जिसमें उनका अपना अलग-अलग दृष्टिकोण निहित है, ऐसा प्रतीत होता है। राम-कथा में सर्वप्रथम राम द्वारा किसी शत्रु पर विजय प्राप्त करने की यह प्रथम घटना है। नायक द्वारा महान् शक्तिशाली प्रतिनायक पर विजय कराने से नायक की श्रेष्ठता सिद्ध होती है, अतएव कम्बन ने ताटका को महान् दुष्टा, घोर अत्याचारी-पराक्रमी और महाबलशालिनी के रूप में चित्रित किया है, जिस पर राम की सहज विजय से उनकी श्रेष्ठता सिद्ध किया है। कम्बन ने राम को पूर्णरूपेण विष्णु का अवतार माना है। दुष्ट निग्रहार्थ तथा शिष्ट-संरक्षणार्थ ही अपने अवतार लेने का लक्ष्य, भगवान् ने बताया है।[2] वे अपने इस लक्ष्य की पूर्ति में बाल्यावस्था से ही तत्पर हैं। सम्भवतः अपने आराध्य की प्रथम विजय को अत्यन्त प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करने के लिए कम्बन ने इसे विस्तृत रूप में वर्णित किया है।

ताटका के स्त्री होने के कारण उसका वध करने में कम्बन के राम को संकोच होता है। उनके मनोभाव को समझकर चतुर्वेदज्ञ, कौशिक उनका भ्रम दूर करते हुए कहते हैं कि जूड़ा बाँधने योग्य केशों वाली, लज्जाशीला तथा भोली-भाली स्त्री का वध करने में मर्यादा भंग होती है, किन्तु अत्याचारिणी को, जिसने दुष्टता के सारे मापदण्ड तोड़ दिये हों, को भी स्त्री समझना क्या उचित है?[3] विश्वामित्र की आज्ञा-पालन करते हुए, राम ताटका का वध करते हैं। उसका वध क्यों आवश्यक था? कम्बन के राम ने किसी नारी का वध क्यों किया? इसके कारणों

---

१. रामचरितमानस १/२०९/३।

२. परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे-युगे—गीता, अध्याय ४, श्लोक ८।

३. कम्ब-रामायण १/७/५५, ६८।

को स्पष्ट करने में कथा कुछ विस्तृत हो गयी है, जो स्वाभाविक है। कम्बन के ताटका-वध-प्रसंग के विस्तृत होने का यही कारण प्रतीत होता है। ताटका-वध की कथा में कम्बन की एक श्रेष्ठ नाटकीय उक्ति मिलती है—ताटका का गिरना क्या था, दश सिरों पर मुकुट धारण करने वाल रावण को उसके सर्वनाश की ही सूचना थी, मानो उस दिन रावण की विजय-पताका ही टूटकर गिरी हो।[1] इस वर्णन में कवि ने रावण के भावी पराभव का काव्योचित ध्वनन किया है।

तुलसीदास 'सिया-राम मय सब जग' को जानने वाले हैं। वे उन्हीं बातों का विस्तारपूर्वक वर्णन करते हैं, जिनसे राम की यश-वृद्धि हो अथवा वे राम के परम-प्रिय अथवा सेवक हों, अन्य पात्रों का उल्लेख वे मात्र कथा को आगे बढ़ाने हेतु करते हैं। तुलसीदास की 'ताड़का' इसी कोटि में है। इस प्रसंग के इतने संक्षिप्त रूप में उल्लेख का यही कारण प्रतीत होता है अथवा अपने आराध्य द्वारा बाधित दुष्टा का विस्तारपूर्वक चरित्र-वर्णन सम्भवतः उन्हें युक्तियुक्त प्रतीत न हुआ हो।

कम्ब-रामायण में ताटकावधोपरान्त देवताओं द्वारा राम पर पुष्पों की वर्षा और राम को उनके द्वारा बधाई देने का वर्णन कम्बन की अपनी नितान्त मौलिक कल्पना है। यह चित्रण रामचरितमानस से सर्वथा भिन्न है। ऐसा वर्णन मानस में नहीं मिलता।

अहल्या

पंच कन्याओं में ज्येष्ठा, महर्षि गौतम की पत्नी तथा जनक के पुरोहित शतानन्द की माता। हल्य का अर्थ है कुरूपता। कुरूपता न होने के कारण अर्थात् अप्रतिम रूपवती होने के कारण इनका नाम अहल्या रखा गया था। राम के 'समाज-सुधारक' और 'पतित-पावन' स्वरूप को 'अहल्या-प्रसंग' ही चिरन्तन बनाता है। राम-कथा में 'ताटका-वध' में सर्वप्रथम राम की शक्ति और युद्ध-कुशलता का परिचय मिलता है, तो इस प्रसंग में उनके शील और अद्भुत ईश्वरीय शक्ति का प्रभाव प्रकट होता है। अहल्या राम के 'पतित-पावन' अभियान का प्रथम सोपान है, जहाँ से उनके विविध अभियानों का शुभारम्भ होता है।

कम्ब-रामायण में अहल्या

अहल्या गौतम ऋषि की पत्नी थीं। कम्ब-रामायण के बालकाण्ड के नवें 'अकळिकैपड़ळम्' में अहल्या-वृत्तान्त मिलता है। यज्ञोपरान्त विश्वामित्र के साथ

---

१. कम्ब-रामायण १/७/७३।

मिथिला जाते समय राम-लक्ष्मण ने मिथिला के समीप एक ऊँचे टीले पर एक पत्थर को देखा।[१] यह पत्थर शापग्रस्त अहल्या ही थीं। उस पत्थर पर राम की चरण-रज जा लगी। तत्क्षण वह (अहल्या) पत्थर रूप को छोड़कर एवं शापमुक्त होकर अपने पूर्व स्वरूप-अद्वितीय मनोरम रूप में उठ खड़ी हुई। विश्वामित्र, राम को उसका परिचय देते हुए कहते हैं कि विद्युत्-सदृश नारी, जो अत्यन्त आनन्द के साथ एक ओर खड़ी है, महर्षि गौतम की पत्नी अहल्या हैं। इस (महामुनि) ने दुराचारी इन्द्र को भी शाप दिया था।[२] राम द्वारा जिज्ञासा प्रकट करने पर विश्वामित्र इस वृत्तान्त को सविस्तार सुनाते हैं—अनुपम सौन्दर्य पर मुग्ध होकर इन्द्र ने इसके साथ समागम करना चाहा। गौतम की अनुपस्थिति में, गौतम के ही वेश में आकर इन्द्र, अहल्या से व्यभिचार करता है। पहले तो अहल्या को इस छल का ज्ञान नहीं था, किन्तु बाद में ये गौतम नहीं, इन्द्र हैं—यह जान कर भी वह इस दुष्कर्म में लिप्त रही। उसी समय गौतम का प्रत्यागमन होता है[३], जिनको देखकर इन्द्र भयभीत होकर काँपते हुए, वहाँ से धीरे-धीरे बिल्ली के रूप में खिसकने लगे।[४] तत्त्वज्ञानी ऋषि को सब-कुछ ज्ञात हो गया। उन्होंने इन्द्र के शरीर पर एक हजार स्त्री-जननेन्द्रिय होने का भयानक शाप दिया तथा अहल्या को पत्थर हो जाने का शाप दिया।[५] अहल्या की प्रार्थना पर शाप के अन्त का विधान करते हुए गौतम ने कहा—जब राम इस स्थान पर आयेंगे, तब उनके चरण-रज के स्पर्श से तुम्हारा उद्धार होगा।[६] अहल्या के पूर्व रूप को प्राप्त होते ही, राम उसके चरणों की वन्दना करते हैं, तथा कहते हैं, हे माता! तुम अब महान् तपस्वी गौतम मुनि की सेवा में निरत हो जाओ।[७] आलोच्यग्रन्थ के वर्णन में विश्वामित्र के साथ सभी लोग गौतम ऋषि के आश्रम पर जाते हैं। वहाँ विश्वामित्र, गौतम से अहल्या को स्वीकार करने का अनुरोध करते हुए कहते हैं कि राम की चरण-रज के स्पर्श से अहिल्या ने अब अपने पूर्व-रूप को प्राप्त कर लिया है। पूर्ववत् पवित्र मन वाली हो गयी है। आप इसे स्वीकार कर लें।[८] इसके पश्चात् राम, गौतम ऋषि के चरणों की वन्दना करके अहल्या को

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, अकलिकैपड़लम् १/९/७० ।
२. उपर्युक्त १/९/७१-७२ ।
३. उपर्युक्त १/९/७६ ।
४. उपर्युक्त १/९/७७ ।
५. उपर्युक्त १/९/७८-७९ ।
६. उपर्युक्त १/९/८१ ।
७. उपर्युक्त १/९/८३ ।
८. उपर्युक्त १/९/८४-८५ ।

उन्हें सौंप देते हैं ।[1] कम्ब-रामायण में अहल्या की कथा इसी रूप में प्राप्त होती है।

रामचरितमानस में अहल्या

महामुनि गौतम-पत्नी अहल्या की कथा रामचरितमानस के बालकाण्ड में मिलती है। 'कम्ब-रामायण' की अपेक्षा रामचरितमानस में यह प्रसंग अत्यन्त संक्षिप्त रूप में इस प्रकार वर्णित है :—

ताटका-वधोपरान्त विश्वामित्र की यज्ञ-रक्षा करके राम-लक्ष्मण महामुनि के साथ मिथिला की राजधानी जनकपुर जा रहे थे। मार्ग में उन्हें 'खग मृग जीव जंतु तहँ नाहीं'[2] स्थिति वाला एक आश्रम दिखायी पड़ा। वहाँ पर पत्थर की एक शिला को देखकर राम ने उसके विषय में पूछा।[3] विश्वामित्र उन्हें बतलाते हुए कहते हैं कि यह गौतम मुनि की पत्नी अहल्या है, जो शापवश उपलदेह बनकर बड़े धैर्यपूर्वक आपके चरण-रज की प्रतीक्षा में है। इस पर आप कृपा कीजिये।[4]

राम के चरणों का स्पर्श होते ही शापमुक्त हो तपःपुंज बनकर अहल्या प्रकट हो जाती है। अपना पूर्व रूप प्राप्त कर तुलसीदास की अहल्या हाथ जोड़कर खड़ी हो जाती है। प्रेमाधिक्य के कारण सहसा वह बोल नहीं पाती है। अत्यन्त प्रसन्न शरीर-मन वाली अहल्या राम के चरणों में लिपट जाती है,[5] जिसके नेत्रों से प्रेमाधिक्य के कारण प्रेमाश्रु प्रवाहित होने लगे।

तुलसीदास की अहल्या अपना पूर्व रूप प्राप्त करके, राम की स्तुति करते हुए कहती है 'मैं नारि अपावन प्रभु जग पावन'[6] आपकी शरण में आयी हूँ। मेरी रक्षा कीजिये।[7] रामचरितमानस की अहल्या गौतम मुनि के शाप को शुभ मानती है, जिसके कारण आज वह राम को 'भरिलोचन' देख रही है।[8] इस प्रकार बार-म्बार भगवान् के चरणों में गिरकर, इच्छित वर प्राप्त कर गौतम की पत्नी अहल्या

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, अकळिकैपड़ळम् १/९/८६।
२. रामचरितमानस—१/२०९/६।
३. उपर्युक्त।
४. उपर्युक्त १/२१०।
५. उपर्युक्त १/२११/१।
६. उपर्युक्त १/२११/२।
७. उपर्युक्त १/२११/२।
८. उपर्युक्त १/२११/३।

सानन्द पतिलोक चली जाती है।[1] रामचरितमानस में अहल्या की कथा इसी रूप में प्राप्त होती है।

निष्कर्ष

अहल्या के प्रति आलोच्यकविद्वय में अत्यधिक भिन्नता है। तुलसीदास ने अहल्या को अत्यन्त सामान्य रूप में लिया है। यही कारण है कि वे इस प्रसंग को मात्र बीस पंक्तियों में समाप्त कर देते हैं।[2] जबकि कम्बन ने अहल्या-चरित्र को अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक लिया है। कम्बन ने अहल्या का वर्णन 'रामायणम्' के पूरे एक 'अकळिकैपड़ळम्' में किया है। इस पड़ळम् के छियासी पद्यों में अहल्या की कथा को विस्तार प्रदान किया गया है।

कम्बन की दृष्टि में अहल्या सत्कुलप्रसूता, पवित्रमना और श्रेष्ठऋषि-पत्नी है, जो एक आदर्श पत्नी की भाँति मुनि के कार्यों में अपना सहयोग देती रहती है। दुर्भाग्यवश उसकी सुन्दरता पर मुग्ध होकर इन्द्र उसके साथ सम्भोग करने की इच्छा से गौतम का रूप धारण करके आते हैं। एक आदर्श धर्मपत्नी की भाँति अहल्या-पति—(गौतम के रूप में इन्द्र) की इच्छानुसार, उसे स्वयं को समर्पित करती है। कुछ समय पश्चात् उसे ज्ञात होता है कि गौतम के वेश में मेरे साथ सम्भोग करने वाला इन्द्र है, गौतम नहीं, तथापि वह इन्द्र को इस दुष्कर्म से विरत नहीं करती।[3]

कम्बन की अहल्या परिस्थितिवश पतित होती है। इसमें वह निर्दोष है। दोष उसका इन्द्र को मना न करने मात्र का है, वह इन्द्र को परिस्थितिवश मना नहीं कर पाती। अहल्या का पतन स्वाभाविक प्रतीत होता है। सामाजिक पृष्ठभूमि पर विश्लेषण करने पर यह बेमेल विवाह का परिणाम प्रतीत होता है, जिसमें गौतम तो वृद्ध और सिद्ध महात्मा हैं, जो तत्त्वज्ञान एवं दार्शनिक चिन्तन में सर्वदा लीन रहते हैं; जो निशि-वासर इन्हीं दार्शनिक कल्पनाओं-विचारों में मग्न रहते हैं, जिनकी अतीव सुन्दरी एवं कमनीय पत्नी अहल्या अल्हड़ यौवन के आँगन में क्रीड़ा करने वाली युवती है। दीर्घकाल तक उपेक्षित अहल्या का यौवन-कुसुम गौतम-रूपी माली द्वारा पूर्णतया उपेक्षित रहा। अहल्या के अद्वितीय सौन्दर्य की ओर आकृष्ट होने का उन्हें अवकाश कहाँ ? और फिर क्यों ? उसका यह सौन्दर्य भी तो अचिर-अस्थायी है, जिस पर वह अपना बहुमूल्य समय नष्ट करें।

---

१. रामचरितमानस १/२११/४।
२. उपर्युक्त १/२१०/६ से १/२११/४।
३. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, अकळिकैपड़ळम् १/९/७६।

दार्शनिकों की दृष्टि में सौन्दर्य क्षणिक है, निःसन्देह क्षणिक है, जिसे वे सर्वदा उपेक्षित करते रहे हैं, किन्तु इस सौन्दर्य के सत्त्व की मनोरम सुगन्धि एक दिन स्वर्ग को भी अपने निकट खींच लायी। रम्भा, मेनका आदि अप्सराओं के गीत, संगीत एवं नृत्य की मोहक अदाओं को भी उपेक्षित करके, इन्द्राणी की भुज-पाश से चुपके से निकलकर स्वर्ग से पृथ्वी पर आने के लिए इस सरला की सुरभि ने इन्द्र को भी विवश कर दिया। अहल्या इन्द्र के कूटनीतिकमाया-जाल में फंस जाती है, जहाँ वह सब-कुछ खोकर वास्तविकता को जान पाती है, फिर क्या ?—जब पाँव फिसले, तो फिसले और वह उस फिसलन का आनन्द लेती हुई पतन के गर्त में पहुँच जाती है और इस कुकर्म के लिए मुनि के शाप से दण्डित होती है।

कम्बन ने अहल्या के शापग्रस्त होने का कारण वर्णित किया है, जबकि तुलसीदास के वर्णन में शापग्रस्त अहल्या की शापमुक्ति हेतु विश्वामित्र, राम को आदेश देते हैं। तुलसीदास ने अहल्या के शापग्रस्त होने का कारण वर्णित नहीं किया है। वस्तुतः ऐसा प्रतीत होता है कि तुलसीदास ने अहल्या को अत्यन्त साधारण रूप में लिया है। वे अपने आराध्य राम के यश-प्रभाव वृद्धि के लिए उनके चरणों के स्पर्श द्वारा अहल्या को शापमुक्त करा देते हैं। इस रूप में तुलसीदास ने अहल्या को अधिक महत्त्व न देकर राम के प्रभाव-वृद्धि को ही महत्त्व दिया है। रामचरित-मानस के इस वर्णन के संक्षिप्त होने का यही कारण प्रतीत होता है।

कम्बन ने अहल्या को अत्यन्त श्रेष्ठ नारी के रूप में वर्णित किया है। इसी कारण इनका वर्णन विस्तृत है। कम्बन की अहल्या उनके राम द्वारा भी वन्दनीय है। आलोच्यग्रन्थ में शापमुक्तोपरान्त अहल्या के चरणों की वन्दना राम करते हैं तथा वह अहल्या को माता कहकर सम्बोधित करते हैं।[1]

रामचरितमानस में राम द्वारा अहल्या की चरण-वन्दना का प्रश्न ही नहीं पैदा होता, क्योंकि तुलसी के राम भगवान् हैं तथा अहल्या मात्र एक भक्त। सम्भवतः इसी कारण मानस की अहल्या शापमुक्त होने पर राम के चरणों में लिपट जाती है।[2] कम्बन और तुलसीदास के नारी-विषयक दृष्टिकोण की भिन्नता यहाँ स्पष्ट परिलक्षित होती है।

तुलसी की अहल्या अपने को बारम्बार 'अपावन नारि' कहती है, अपने मुक्ति-हेतु राम से निवेदन करती है कि मैं आपकी शरण में आयी हूँ, आप मेरी रक्षा

---

१. कम्ब-रामायण १/६/८३।
२. रामचरितमानस १/२११/१।

कीजिये ।[1] इसके विपरीत कम्ब-रामायण में अहल्या की पवित्रता के विषय में विश्वामित्र गौतम को आदेश देकर कहते हैं कि अहल्या ने मन से कोई पाप नहीं किया है । अब तुम इसे स्वीकार करो ।[2] इस प्रकार महामुनि विश्वामित्र जिसके चरित्र की वकालत करते हों, राम जिसके चरणों की वन्दना करते हैं, जिसे पूर्णतः पवित्र मानकर महर्षि गौतम ने स्वीकार किया, इस प्रकार राम द्वारा वन्दित तथा प्रशंसित कम्ब-रामायण की अहल्या रामचरितमानस की 'अपावन' अहल्या से अत्यन्त सुन्दर एवं आदर्शरूप में वर्णित है ।

तुलसीदास की अहल्या आत्म मुक्ति-हेतु राम से स्तुति करती है,[3] जबकि कम्बन के राम अहल्या को उसके भावी जीवन-हेतु पति-आश्रम में जाकर उनके साथ रहने के लिए निवेदन करते हैं ।

तुलसीदास के अहल्या-वृत्तान्त की समाप्ति अत्यन्त सामान्य रूप में होती है । उनकी अहल्या राम के चरणों पर बारम्बार गिरकर, इच्छित वर प्राप्त कर सानन्द पति-लोक को चली जाती है । तुलसीदास की अहल्या राम के प्रभाव से भूलोक से पति-लोक को चली जाती है जबकि कम्ब-रामायण में अहल्या को स्वीकार करने के लिए विश्वामित्र, गौतम को आदेश देते हैं । राम गौतम से इसके लिए निवेदन करते हुए कहते हैं कि मन से भी पवित्र अहल्या को आप अंगीकार करें । अतएव राम के निवेदन एवं विश्वामित्र के आदेश पर गौतम अहल्या को स्वीकार कर उसे अपने आश्रम में स्थान देते हैं । मुनि द्वारा स्वीकृत अहल्या के पुनः आश्रम में रहने के वर्णन द्वारा कम्बन उसके पातिव्रत को इस संसार में प्रतिष्ठित करके उसे पूर्ववत् पूज्या बनाते हैं ।

रामचरितमानस के वर्णन में राम की कृपा से अहल्या का उद्धार होकर यह वृत्तान्त समाप्त होता है, जिसमें राम के चरित्र पर ही कवि की विशेष अनुरक्ति है—प्रमुख पात्रा अहल्या पर नहीं । इसके विपरीत कम्ब-रामायण में अत्यन्त मर्यादित और उदात्त रूप में इस वृत्तान्त का समापन कम्बन ने पूर्वोद्धृत रूप में किया है ।

मुनि के शाप से अभिशप्त अहल्या की जड़ता को कम्बन, विश्वामित्र और राम के सत्प्रयत्न से दूर करके, उसके चरित्र को समुज्ज्वल और जाज्वल्यमान

१. रामचरितमानस १/२११/२ ।
२. कम्ब-रामायण १/९/८५ ।
३. रामचरितमानस १/२११/२ ।

बनाकर उसे पति द्वारा क्षमा प्रदान कराते हैं, जिससे गौतम उसे पुनः सहर्ष अपनी धर्मपत्नी के रूप में स्वीकार करते हैं। यह प्रसंग आज के सन्दर्भ में सर्वथा प्रासंगिक है। आज बीसवीं शताब्दी में भी यह समुदार दृष्टि पुरुष प्रधान भारतीय समाज में नहीं है। उनके लिए अहल्या का यह प्रसंग इस परिप्रेक्ष्य में अत्यन्त प्रेरक एवं अनुकरणीय दृष्टान्त है। ऋषि-शाप से अभिशप्ता हो, जगद्दृष्टि में पतिता होकर, अपने अद्वितीय छवि से स्वर्ग को भी पृथ्वी पर आने के लिए विवश करने वाली उदात्तगुणा अहल्या 'स्त्री' से 'कन्या' बनकर आज भी प्रातः स्मरणीया एवं वन्दनीया है।

सीता

'ऋग्वेद' में 'सीता' शब्द पृथ्वी पर हल से जोती हुई रेखा के लिए प्रयुक्त हुआ है। इसी आधार पर सीता को कृषि की अधिष्ठात्री देवी तथा भूमिजा की संज्ञा दी गयी। सीता के पिता जनक एक वैदिक ऋषि और मिथिला-नरेश दोनों रूपों में प्रसिद्ध रहे हैं। 'बृहदारण्यक', 'छांदोग्य' आदि उपनिषदों में जनक के सम्बन्ध में तो कथाएँ मिलती हैं, किन्तु सीता का उल्लेख नहीं मिलता। सीता का प्रथम उल्लेख 'रामायण' में हुआ है। वाल्मीकि-रामायण में उन्हें 'जनकानां कुले जाता' कहा गया है, परन्तु इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि सीता जनक की पुत्री हैं।[1]

राम-कथा में, राम जिस प्रकार सर्वश्रेष्ठ पुरुष हैं, उसी प्रकार राम की पत्नी सीता आदर्श नारी हैं। भारतवर्ष में ही नहीं, अपितु विदेशों मे भी सीता का नाम शुचिता, सुशीला, अनुपम सुन्दरी, विवेकशीला, धर्मज्ञा, पतिपरायणा, सत्कुल-प्रसूता, दृढ़संकल्पा आदि का प्रतीक बन गया है। सीता के चरित्र को सभी भाषा-भाषी अत्यन्त श्रद्धापूर्वक स्वीकार करते हैं। इस चरित्र ने जन-जीवन में तादात्म्य स्थापित कर लिया है। जिस देश की संस्कृति ने सीता को उत्पन्न किया, सम्भव है किसी की दृष्टि में वह मात्र कल्पना प्रतीत हो, तथापि इस देश की संस्कृति में नारीजाति के प्रति जितना अधिक समादर और श्रद्धा है, उसकी तुलना विश्व की किसी अन्य जाति की संस्कृति से नहीं की जा सकती।

राम-कथा के नारी-पात्रों में सीता सर्वप्रधान हैं। सम्पूर्ण राम-कथा का कथा-प्रवाह सीता रूपी स्रोत से प्रवहमान है। सम्भवतः इसी कारण महर्षि वाल्मीकि

---

१. हिन्दी साहित्य-कोश-भाग २, पृष्ठ ९९५।

ने अपने काव्य (रामायण) का नामकरण 'सीतायाश्चरितं' किया है।[1] सम्पूर्ण राम-कथा में सीता के गुणों का सर्वाधिक वर्णन हुआ है। सीता अतिशय दया-सम्पन्ना हैं। अतएव परम वैष्णव राम-कथा को 'कारागार में रहने वाली (सीता) की महिमा' के रूप में मानते हैं।[2]

कम्ब-रामायण में सीता

महर्षि वाल्मीकि-सदृश परम वैष्णव कम्बन ने भी सम्पूर्ण नारी-पात्रों में सीता को ही अपने 'रामायणम्' में सर्वाधिक प्रधानता दी है। कम्बन की सीता पातिव्रत की रानी, स्त्रीत्व की रक्षिका, सौन्दर्य को भी सौन्दर्य प्रदान करने वाली, करुणा से आन्दोलित, हृदय से धर्म को धारण करने वाली, यशोमय जीवन व्यतीत करने वाली हैं, जो प्रपंच की नारियों के लिए सर्वोत्तम एवं अनुकरणीया आदर्श हैं। कम्बन ने अपने 'रामायणम्' में सीता के चरित्र को निम्नवत् प्रस्तुत किया है—

कम्बन के अनुसार सीता लक्ष्मी हैं तथा राम क्षीराब्धिशायी नारायण (विष्णु) हैं। कम्बन की यह भावना हमें 'रामायणम्' में अनेकत्र मिलती है।[3] जब भगवान् विष्णु धर्म-रक्षार्थ क्षीर-सागर को छोड़कर अयोध्या में अवतरित हुए, तब धर्म-रक्षा में उनकी यथासम्भव सहायतार्थ लक्ष्मी (सीता के रूप में) भी अवतरित हुईं।[4] सीता, राम के सर्वथा अनुरूपा (कुल, रूप, गुण, शील आदि में राम-सदृशा) हैं। सीता सभी दृष्टियों से राम की समतुल्या हैं, अगर राम (विष्णु के अवतार) अपने हाथों में शंख धारण करते हैं, तो सीता का कर शंख की चूड़ियों से अलंकृत है, अगर सीता (लक्ष्मी) का निवास-स्थान कमल है, तो राम (विष्णु) का निवास-स्थान भक्तों का हृदय-कमल है। राम सर्वत्र व्याप्त होने के कारण सबके हृदय में निवास करते हैं, इसी प्रकार सीता अपने रूप-लावण्य, गुण-शील के कारण सबके द्वारा स्मरण की जाती हैं।[5]

---

१. 'काव्यं रामायणं कृत्स्नं सीतायाश्चरितं महत्'—वाल्मीकि-रामायण, १/४/७।
२. 'इतिहासश्रेष्ठेन श्रीरामायणेन कारागृहवासकर्त्र्या वैभव उच्यते।'—सूत्र-५। श्रीवचनभूषणम्, श्रीमद्वरवरमुनिप्रणीत व्याख्यासंवलितम्। पृष्ठ-२९-३०, पुरी-संस्करण, प्रका० वर्ष-१९२४।
३. कम्ब-रामायण १/१०/३७-३८७, १/२१/८०।
४. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, नगरनीङ्गुपड़लम् १/२/२२५।
५. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, कोळमकाणपड़लम् ६/२०/२१।

सीता के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए जनक के पुरोहित शतानन्द कहते हैं कि सभी गुण सीता जी के आश्रित हैं। सौन्दर्य ने तपस्या करके सीता का आश्रय प्राप्त किया है, इसी कारण सीता के जन्मोपरान्त अन्य स्त्रियों का सौन्दर्य नगण्य एवं उपेक्षित हो गया है।

कम्बन की सीता का अद्वितीय सौन्दर्य एवं रूप-लावण्य कुछ इस प्रकार का है कि उनसे ईर्ष्या करने वाली उनकी प्रतिद्वन्द्विनी शूर्पणखा भी उनके सौन्दर्य की प्रशंसा करने के लिए विवश हो जाती है। शूर्पणखा कहती है कि सौन्दर्य की सीमाओं का अन्त यहीं पर होता है। इस सौन्दर्य के अतिरिक्त और कुछ देखने की अब मेरी (नारी की) इच्छा नहीं करती है, तो इसे देखने वाले पुरुषों की क्या दशा होगी।[1]

कम्बन ने सीता के पातिव्रत शील आदि को अत्यन्त पराकाष्ठा पर चित्रित किया है। हनुमान् लंका से लौटने पर, राम को अपनी आख्या प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि मैंने लंका में तपस्विनी नारी को नहीं देखा, अपितु सत्कुलप्रसूता, पातिव्रत, क्षमा आदि को वहाँ पर नृत्य करते हुए देखा अर्थात् सत्कुलप्रसूता, क्षमा तथा पातिव्रत में सीता निस्सीम हैं।[2] अगर राम पुरुषों के स्पृहणीय सौन्दर्य वाले हैं, तो सीता की भी छवि स्त्रियों द्वारा स्पृहणीया है, अगर राम को देखने के लिए सीता को एक हजार नेत्रों की आवश्यकता है, तो सीता को देखने के लिए राम को भी उतने ही नेत्र चाहिए।[3] कहने का अभिप्राय यह है कि सीता का सौन्दर्य और गुण राम से किसी भी बिन्दु पर कम नहीं है। सीता में सभी स्त्रियोचित गुण पाये जाते हैं। सर्वगुणसम्पन्ना सीता क्रीड़ा आदि में भी रुचि रखती हैं। वे पशु-पक्षियों से भी अत्यन्त आत्मीय सम्बन्ध रखती हैं, यही कारण है कि वन से अयोध्या लौटने वाले सुमन्त से ऊर्मिला के लिए संदेश देती हैं कि वह शुकों का विधिवत् ध्यान रखें। इसी प्रेम-वश वे पंचवटी के जंगल में कंचन-मृग को देखकर उसे प्राप्त करने के लिए राम से आग्रह करती हैं।

सीता में अपार करुणा है। इसी कारण वे अशोक-वाटिका में अपने को सताने वाली राक्षसियों के वध से हनुमान् को विरत करती हैं। सीता उन्हें रावण से प्रेरित बताती हैं। सीता करुणार्द्र होने पर भी दृढ़मना हैं, जो हनुमान् से राक्ष-

---

१. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, शूर्पणखैप्पड़ळम् ३/६/५३।

२. कम्ब-रामायण, सुन्दरकाण्ड, तिरुवड़ितोळुँपड़ळम् ५/१५/६२।

३. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, कार्मुकप्पड़ळम् ५३।

सियों की रक्षा करती हैं, किन्तु रावण-वध के लिए दृढ़संकल्पा हैं। लंका में रावण द्वारा पूर्णतः घिरी होने पर भी उसके प्रस्तावों को अस्वीकर करती हुई, यह दृढ़मना अपने निश्चय पर अडिग रहती है तथा रावण के सम्पूर्ण विनाश की बार-बार उद्घोषणा करती हुई कहती है कि तुम्हारा विनाश राम के बाण से ही होगा। मायाजनक[१] भी इस दृढ़मना को अपने निश्चय से विचलित नहीं कर पाता है। इन्द्रजीत के ब्रह्मास्त्र से लक्ष्मण को आहत देखकर राम भी मूर्च्छित हो जाते हैं। इस अवसर पर रावण सीता को उनकी यह स्थिति देखने के लिए युद्ध-भूमि में भेजता है।[२] राम-लक्ष्मण की इस दशा को देखकर सीता उस समय अपना प्राण त्याग देना चाहती हैं, किन्तु रावण का प्रस्ताव स्वीकार नहीं करतीं।[३] इससे सीता का पातिव्रत तथा दृढ़संकल्पत्व परिलक्षित होता है।

रावण-वधोपरान्त राम की आज्ञा से सीता अशोक वन से हनुमान् तथा विभीषण द्वारा राम के पास लायी जाती हैं। राम द्वारा सीता के प्रति, उस समय किया गया व्यवहार अत्यन्त धर्म-विरुद्ध, अमर्यादित तथा अव्यावहारिक प्रतीत होता है। यह स्वयं राम की मर्यादा के भी प्रतिकूल है। उनके उस समय के आचरण से सीता ही नहीं, अपितु कोई भी मर्माहत हो सकता है। राम कहते हैं, तुम्हे अब यही करना है कि तुम मर जाओ। यदि मरना नहीं चाहती, तो किसी अन्य स्थान में जाकर रहो।[४] इसके उत्तर में सीता अपने चरित्र की परीक्षा एवं अत्युत्तम पातिव्रत को सिद्ध करने हेतु अग्नि में प्रवेश करती हैं। कवि ने यह वर्णन अत्यन्त कुशलता-पूर्वक प्रस्तुत किया है।[५]

सीता का चित्रण कम्ब-रामायण में एक आदर्श सहधर्मिणी की भाँति सुख-दुःख में सर्वदा पति के साथ रहने वाली के रूप में मिलता है। वन-गमन के समय राम सीता से कहते हैं कि माता-पिता की आज्ञानुसार चौदह वर्षों के लिए वन जा रहा हूँ। तुम अयोध्या में रहोगी तथा दुःखी मत होना—राम के इस कथन ने सीता का काम जला दिया।[६]

---

१. कम्ब-रामायण, युद्धकाण्ड, मायाजनकपड़ळम्।
२. कम्ब-रामायण ५/२२/३-४।
३. उपर्युक्त ५-२२/२१-२२।
४. उपर्युक्त ५/३६/५६-६८।
५. उपर्युक्त ५/३७/७६-८८।
६. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, नगरनीङ्गुपड़ळम्, २/४/२२२।

आलोच्यग्रन्थ में कवि ने सीता को अमृत से उत्पन्न, पातिव्रत की रानी, स्त्रीत्व की रक्षिका, एक आदर्श पतिव्रता, सौन्दर्य को भी सौन्दर्य प्रदान करने वाली, दृढ़संकल्पा, करुणामना, उदारमना आदि के रूप में प्रस्तुत किया है।

रामचरितमानस में सीता

रामचरितमानस के कथा-प्रवाह में सीता का दर्शन पार्वती-पूजा के समय मिलता है।[१] कम्बन की भाँति तुलसीदास ने भी सीता को अतीव सौन्दर्य-सम्पन्ना के रूप में प्रस्तुत किया है। पुष्प-वाटिका में सीता के "कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि"[२] राम "सिय मुख ससि भए नयन चकोरा"[३] की तरह इस अद्वितीय सौन्दर्य का पान करने लगते हैं। कम्बन की सीता को देखकर शूर्पणखा कहती है कि क्या सौन्दर्य की भी सीमा है? क्या विधाता की कुशलता की सीमा हो सकती है? वह सोचती है कि अगर मुझ स्त्री की आँखें इस सौन्दर्य से परे नहीं जा रही हैं, तो पुरुषों की क्या दशा होगी?[४] कम्बन ने सीता के सौन्दर्य की प्रशंसा एक नारी के द्वारा करके उसके सौन्दर्य का महत्त्व और भी बढ़ाया है। तुलसीदास के राम भी सोचने लगते हैं कि मानो ब्रह्मा ने "सब निज निपुनाई" को "बिस्व कहँ प्रकट देखाई" हेतु इस मूर्ति का निर्माण किया है।[५]

सीता का सौन्दर्य "सुन्दरता कहुँ सुन्दर करई। छबि गृह दं पसिखा जनु बरई" है।[६] तुलसीदास ने विवाह के अवसर पर भी इसी प्रकार का प्रशंसनीय वर्णन प्रस्तुत किया है।

सीता के जीवन का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष वन-गमन के समय प्रस्तुत होता है, जब राम के वन-गमन का समाचार सुनकर, वह भी स्वयं वन-गमन का निर्णय करती हैं। उन्हें उनके इस दृढ़ निश्चय से विरत करने हेतु कौसल्या प्रयास करती हैं। राम भी वन के विविध कष्टों की व्याख्या करके सीता को वन जाने से रोकने का यत्न करते हैं, किन्तु सीता कहती हैं—"नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे"।[७] सीता की सेवा-भावना, पति-प्रेम तथा दृढ़ निश्चय देखकर कौसल्या और राम उन्हें वन-

---

१. रामचरितमानस, १/२२८/१।
२. उपर्युक्त १/२३०/१।
३. उपर्युक्त १/२३०/२।
४. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, शूर्पणखैप्पड़ळम्, ३/६/५३।
५. रामचरितमानस, १/२३०/३।
६. उपर्युक्त १/२३०/४।
७. उपर्युक्त २/६५/४।

गमन की अनुमति देते हैं। यह सीता के व्यक्तित्व, सतीत्व तथा पातिव्रत की प्रथम विजय है।

सीता का शील-सौन्दर्य मार्ग के पथिकों, ग्राम-वधुओं आदि सभी को मुग्ध करके अपना प्रशंसक बना लेता है। सीता अत्यन्त विवेकशीला हैं। चित्रकूट-प्रसंग में सीता की विवेकशीलता दर्शनीय एवं अनुकरणीय है। सीता के अद्वितीय सौन्दर्य को देखकर कम्बन की शूर्पणखा की भाँति तुलसीदास की शूर्पणखा भी कह पड़ती है—'रूप रासि विधि नारि संवारी। रति सत कोटि तासु बलिहारी।'[1]

सीता में नारी-सुलभ गुण हैं—वे मनोहर छवि वाले कंचन-मृग को प्राप्त करने के लिए राम से निवेदन करती हैं।[2] रामचरितमानस में राम 'कछु करबि ललित नर लीला'[3] हेतु सीता को 'जौ लगि करौं निसाचर नासा'[4] अग्नि में निवासार्थ आदेश देते हैं। राम के आदेशानुसार सीता ने माया से अपनी ही छायामूर्ति राम के पास छोड़कर स्वयं 'अनल समानी'[5]। सीता की यह छायामूर्ति सीता-सदृश ही रूप-स्वभाव में विनम्र एवं शीलसम्पन्न है।[6] तुलसीदास के राम की यह योजना गोपनीय है कि उनके सर्वदा साथ रहने वाले लक्ष्मण भी 'यह मरमु न जाना।'[7]

राम-लक्ष्मण की अनुपस्थिति में रावणापहृत रामचरितमानस की सीता माया की है। इस प्रकार के वर्णन से मानसकार के जिस किसी उद्देश्य की पूर्ति हुई हो, किन्तु यह चित्रण नाटकीय प्रतीत होता है।

रावणापहृत सीता मार्ग में राम-लक्ष्मण का स्मरण करते हुए विविध विलाप करती हैं।[8] राम के वियोग में सीता 'कृस तनु' हो जाती हैं।[9] रावण 'बहु विधि' 'साम दाम भय भेद' द्वारा 'सीतहि समुझावा।'[10] वह कहता है—'तव अनुचरी

---

१. रामचरितमानस, ३/२२/५।
२. उपर्युक्त ३/२७/२-३।
३. उपर्युक्त ३,२४/१।
४. उपर्युक्त ३/२४/१।
५. उपर्युक्त ३/२४,२।
६. उपर्युक्त ३/२४/२।
७. उपर्युक्त ३/२४/३।
८. उपर्युक्त ३/२९/२।
९. उपर्युक्त ५/८/४।
१०. उपर्युक्त ५/९/२।

करऊँ पन मोरा। एक बार बिलोकु मम ओरा।'[1] सुदीप्त सतीत्व वाली सीता उसकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखती है। वह कहती है—'सठ सूने हरि आनेहि मोही। अधम निलज्ज लाज नहिं तोहीं।'[2] यह 'परुष बचन सुनि' रावण 'अति खिसिआन'।[3] वह अत्यन्त वेग से 'कठिन कृपाना' लेकर सीता का 'सिर' काटने के लिए आगे बढ़ता है।[4] 'मयतनया कहि नीति' उसे इससे विरत करती है।'[5] इस प्रकार रावण के दुर्व्यवहारों से खिन्न सीता अग्नि में प्रवेश करके आत्म-दाह करना चाहती हैं, किन्तु त्रिजटा उन्हें विविध विधि समझाकर सान्त्वना प्रदान करती है। इसी समय हनुमान् का आगमन होता है।[6]

हनुमान् द्वारा प्रदत्त राम-नामांकित 'मुद्रिका मनोहर' को 'चकित चितव मुदरी पहचानी।'[7] हनुमान् द्वारा राम का संदेश प्राप्त कर, सीता को परम संतोष होता है।

राम-रावण युद्ध में रावण की मृत्यु के विलम्ब से सीता की चिन्ता एवं उद्विग्नता बढ़ती जाती है, किन्तु त्रिजटा की बातों से सीता को सान्त्वना प्राप्त होती है।[8]

रावण के मृत्यूपरान्त सीता राम के पास लायी जाती हैं। राम उनकी पातिव्रत को लेकर 'कहे कछुक दुर्बाद'।[9] राम के आदेश पर अपनी पवित्रता एवं पातिव्रत के परीक्षार्थ सीता (छाया) अग्नि में प्रवेश करती हैं। अग्नि ने स्वयं शरीर धारण करके सीता का हाथ पकड़ कर राम को वैसे ही समर्पित किया 'जैसे छीर सागर' ने भगवान् विष्णु को 'इन्दिरा' का समर्पण किया था।[10] इस प्रकार अग्नि-परीक्षोपरान्त, सीता राम को पुनः प्राप्त करती हैं।

---

१. रामचरितमानस ५/९/३।
२. उपर्युक्त ५/९/८।
३. उपर्युक्त ५ ९।
४. उपर्युक्त ५/१०/१।
५. उपर्युक्त ५/१०/४।
६. उपर्युक्त ५/१०/११।
७. उपर्युक्त ५/१३/१।
८. उपर्युक्त ६/९९।
९. उपर्युक्त ६/१०८।
१०. उपर्युक्त ६/१०९ छन्द—२

निष्कर्ष

राम-कथा के नारीपात्रों में सीता का चरित्र सर्वाधिक उदात्त गुण सम्पन्न है। सीता के जीवन में अद्वितीय पातिव्रत पाया जाता है, जिसका उल्लेख आलोच्य-ग्रन्थद्वय में मिलता है। सीता का चरित्र-चित्रण आलोच्यकविद्वय द्वारा अतीव सुन्दरी, पतिव्रता, धर्मज्ञा, पतिपरायणा, दृढ़संकल्पा, विवेकशीला, सत्कुलप्रसूता, त्यागमयी रमणी, वीरक्षत्राणी के रूप में प्रस्तुत किया गया है। सीता के चरित्र-चित्रण में आलोच्यग्रन्थद्वय में परस्पर साम्य-वैषम्य मिलता है, यह भिन्नता कवियों की नारी-विषयक दृष्टि को इंगित करती है।

आठवीं शताब्दी से सीता-राम के पूर्वराग का वर्णन मिलता है।[१] महावीर-चरित[२], जानकीहरण[३], आनन्दरामायण[४], कृत्तिवास रामायण[५] आदि में सीता तथा राम के परस्पर आकर्षण एवं प्रेम का उल्लेख मिलता है, किन्तु कम्ब-रामायण में इस प्रकार का वर्णन सर्वप्रथम मिलता है, जब वर-वधू प्रेम-विवश होकर परस्पर विरह-वेदना से तड़पने की स्थिति में आ जाते हैं।[६] रामचरितमानस में विवाह के पूर्व सीता-राम के परस्पर दर्शन का उल्लेख तो मिलता है,[७] किन्तु कम्ब-रामायण सदृश उनके परस्पर विरह-तड़पन का उल्लेख नहीं मिलता। तमिलनाडु में यह एक अत्यन्त प्राचीन परम्परा-प्रथानुसार विवाह के पूर्व वर-वधू एक दूसरे से मिलकर परिचित हो जाते हैं, तत्पश्चात् विवाह होता है। कम्बन इसी आधार पर सीता-राम का विवाह के पूर्व दर्शन करा देते हैं और दोनों में परस्पर प्रेम हो जाता है।

आलोच्यग्रन्थद्वय में सीता अयोनिजा के रूप में चित्रित हैं। दोनों महाकाव्यों में कंचन-मृग को देखकर, वे नारी-सुलभ व्यवहार करती हुई चित्रित हुई हैं। सीता-हरण प्रसंग में आलोच्यग्रन्थद्वय में अत्यधिक भिन्नता पायी जाती है। रामचरित-मानस के वर्णन में 'क्रोधवंत तब रावन लीन्हिस रथ बैठाइ' तथा 'चला गगन पथ'[८] रावण को मार्ग में जटायु रोकता है। जटायु रावण का बाल पकड़कर, उसे

---

१. रामकथा, कामिल बुल्के, पृष्ठ—३५३।
२. महावीरचरित, अंक एक।
३. जानकीहरण, सर्ग सात।
४. आनन्द रामायण, १/३/१११-१२०।
५. कृत्तिवास रामायण, १/६०-६१।
६. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, मिथिलैकाट्चिप्पड़लम् १/१०/३५-४२।
७. रामचरितमानस, १/२३०।
८. उपर्युक्त ३/२८।

रथ से नीचे उतार लेता है। सीता को भी रावण एक ओर बैठाता है। रावण विरोध करने वाले जटायु का पंख काटकर, उसे निष्क्रिय कर देता है और सीता को रथ पर 'चढ़ाइ' चल देता है।[1] इस भांति मानस के चित्रण में रावण द्वारा सीता का कई बार स्पर्श होता है। कम्ब-रामायण में इससे सर्वथा भिन्न अत्यन्त सुन्दर रूप में इस घटना को कवि ने चित्रित किया है। इस प्रकार के चित्रण से कवि ने रावण के एक परपुरुष के स्पर्श मात्र से भी सीता को बचाया है। कम्बन ने अपने आराध्य की पत्नी को परपुरुष से अस्पृश्या रूप में प्रस्तुत किया है। कम्बन के रावण ने सीता सहित आश्रम के भूमि-खण्ड को उठाकर अपने रथ पर रख लिया।[2] मानस में तुलसीदास की सीता माया की सीता हैं। अतः रावण द्वारा उनकी माया की सीता का ही स्पर्श होता है, वास्तविक सीता को रावण स्पर्श नहीं करता है। जो भी हो, जनसामान्य तो यही जानता है कि रावण द्वारा सीता का स्पर्श होता है, क्योंकि तुलसीदास का यह रहस्य इतन गुह्या तथा गोपनीय है कि उनके सदा साथ रहने वाले लक्ष्मण भी इस तथ्य से सामान्य व्यक्तियों की तरह अनभिज्ञ हैं।[3]

कम्ब-रामायण में लक्ष्मण को राम के सहायतार्थ भेजते समय सीता कहती हैं कि अगर तुम नहीं जाओगे, तो मैं अग्नि में गिरकर अपना प्राण त्याग दूंगी। रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता। मानस की सीता लक्ष्मण को 'मरम बचन' कहती हैं।[4]

रामचरितमानस के वर्णन में राम के पास सीता की आज्ञानुसार उनकी कुशलता जानने हेतु लक्ष्मण सीता को वन और दिशाओं के देवताओं को सौंप कर जाते हैं।[5] कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन नहीं है। वहाँ यह दायित्व लक्ष्मण गृद्धराज जटायु पर सौंप कर चले जाते हैं।[6]

तुलसी की सीता अत्यन्त कोमलांगी हैं, जो 'पलँग', 'पीठ', 'गोंद', 'हिंडोरा' के अतिरिक्त कभी 'न दीन्ह पगु अवनि कठोरा'[7] वह 'चित्रलिखित कपि' को भी

---

१. रामचरितमानस ३/२९/१२।
२. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, रावणन्शूळिचपड़ळम् ३/८/७४।
३. रामचरितमानस, ३/२४ १-३।
४. उपर्युक्त ३/२८/३।
५. उपर्युक्त ३/२८/४।
६. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, रावणन्शूळिचपड़ळम् ३/८/१९।
७. रामचरितमानस, २/५९/३।

देखकर भयभीत होने वाली हैं ।[१] कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

कम्बन की सीता के रूप-लावण्य की प्रशंसा जिस रूप में शूर्पणखा ने किया है,[२] उस रूप में सीता की प्रशंसा तुलसी की शूर्पणखा नहीं करती है । कम्ब-रामायण में 'माया जनक' की कथा प्राप्त होती है । वह सीता से रावण के प्रस्तावों को स्वीकार करने की प्रार्थना करता है, जिसे सीता अस्वीकार कर देती हैं ।[3] रामचरितमानस में 'मायाजनक' की कथा नहीं मिलती ।

राम-विरह में व्याकुल सीता से कम्बन के हनुमान् कहते हैं कि यदि आप चाहें, तो मैं आपको अभी अपने कन्धे पर बैठाकर राम के पास पहुँचा सकता हूँ। ऐसा कहने पर सीता उन्हें बुरी तरह डाँटती हैं । वह कहती हैं कि तुम परपुरुष हो। इस प्रकार से तुम्हारे साथ जाने से मेरे पति का अपमान होगा । इस चित्रण में सीता का श्रेष्ठ पातिव्रत एवं कुल-गौरव के प्रति सम्मान प्रकट होता है ।[४] रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं पाया जाता ।

रामचरितमानस के चित्रण में रावण के वधोपरान्त राम के आदेश से सीता को लंका से लाने के पूर्व राक्षसियों ने सीता को 'बहु विधि मज्जन करवायो'[५] तथा 'बहु प्रकार भूषन'[६] पहनाकर 'सिबिका रुचिर साजि पुनि ल्याए'[७] रामचरितमानस से सर्वथा भिन्न. कम्ब-रायायण में यह वर्णन पवित्रता की अत्युत्तम भूमि पर कवि ने चित्रित किया है । कम्बन की सीता स्नान करने, वस्त्र-भूषण पहनने के प्रस्ताव को अस्वीकार करती हुई कहती हैं कि कुलीन पातिव्रत से युक्त दिव्य स्त्रियाँ मुझको, इसी दशा में देखें, जिस दशा में यहाँ पर अब तक रही हूँ,[८] किन्तु विभीषण द्वारा निवेदन करते हुए, वस्त्राभूषण आदि पहनकर आने के लिए राम का आदेश सुनाने पर, सीता इसके

---

१. रामचरितमानस २/६०/२ ।
२. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, शूर्पणखैप्पड़ळम् ।
३. कम्ब-रामायण, युद्धकाण्ड, मायाजनकपड़ळम् ।
४. कम्ब-रामायण, सुन्दरकाण्ड, चूड़ामणिप्पड़ळम्, ५/६/१०-१९ ।
५. रामचरितमानस, ६/१०८/३ ।
६. उपर्युक्त ६/१०८/४ ।
७. उपर्युक्त ।
८. कम्ब-रामायण, युद्धकाण्ड, मीट्चिप्पड़ळम् ६/३९/४०.

ि लए सहमत होती हैं। यह कार्य रामचरितमानस के स्थान पर मेनका, रम्भा, उर्वशी, तिलोत्तमा आदि अप्सराएँ तथा देवाङ्गनाएँ करती हैं।[१]

कम्ब-रामायण में विभीषण द्वारा सीता को राम के पास लाया जाता है, उस समय उन्हें देवताओं और मुनियों की पत्नियाँ घेरे हुए साथ-साथ आती हैं, जिन्हें देखने के लिए बन्दर तथा राक्षस दौड़े हुए आकर चारों ओर से घेर लेते हैं। विभीषण के आदेश पर इनको रोका जाता है, किन्तु राम देवों तथा अन्य लोगों को इस प्रकार से रोके जाने से मना करते हैं।[२] रामचरितमानस में सीता के चारों ओर हाथ में छड़ी लिये हुए रक्षक चलते हैं, जो सीता के दर्शनेच्छु रीछ-वानर आदि पर क्रोध करके उस ओर दौड़ते हैं, किन्तु राम उन्हें इससे विरत करते हुए कहते हैं कि 'सीतहि सखा पयादें आनहु' जिससे 'देखहुँ कपि जननी की नाईं।'[३]

कम्बन की सीता को राम के पास लाने के लिए विमान पर बैठाया जाता है,[४] किन्तु तुलसीदास की सीता के लिए 'सिबिका रुचिर' सजाकर लायी जाती है।[५]

कम्ब-रामायण के चित्रण में लंका से सीता के वापस आने के पश्चात् राम, सीता को नीति-भ्रष्ट राक्षस की विशाल लंका में निवास करने के कारण स्वीकार नहीं करना चाहते। राम कहते हैं कि इस युद्ध द्वारा राक्षस कुल का विनाश मैंने तुमको पुनः प्राप्त करने के लिए नहीं किया, अपितु अपने को अपयश से बचाने के लिए ऐसा किया है। राम कहते हैं कि षड्रस के लोभ में जीवन सुरक्षित किये रहीं, चरित्र मिट जाने पर भी तुम नहीं मरीं, असंख्य प्राणियों का मांस तुमने अमृत से भी अधिक चाव से खाया, अब भी क्या तुम मेरे योग्य भोजन दे सकोगी आदि विविध प्रकार के अत्यन्त अप्रिय तथा बेधक वचनों द्वारा सीता को बहुत प्रकार से अपमानित करते हैं।[६] राम यहाँ तक कह बैठते हैं कि तुम्हारा अनुचित आचरण मेरे मन को दुःखित कर रहा है। अब तुम मर जाओ, यदि मरना नहीं चाहती, तो किसी भी स्थान में जाकर रहो, किन्तु मेरे साथ नहीं रह सकती हो।[७] सीता अपनी

१. कम्ब-रामायण, युद्धकाण्ड, मीट्चिप्पड़लम् ६/३७/४१-४२।
२. उपर्युक्त ६/३७/४७-५३।
३. रामचरितमानस, ६/१०८/३-६।
४. कम्ब-रामायण ६/३७/४७।
५. रामचरितमानस ६/१०८/४।
६. कम्ब-रामायण, ६/३७/६१-६७।
७. उपर्युक्त ६/३७/६८।

पवित्रता सिद्ध करने के लिए अग्नि में प्रवेश करती हैं। अन्त में 'अग्नि-देव' प्रकट होकर सीता की सच्चरित्रता की वकालत करते हैं। कम्ब-रामायण में 'अग्नि-देव' और राम के संवादों में प्रचुर नाटकीयता पायी जाती है। राम, 'अग्निदेव' से पूछते हैं कि तुम कौन हो? तुमने इस दुराचारी नारी को जलने से क्यों बचाया। स्पष्ट बताओ? अग्निदेव कहते हैं कि यह परित्याग के योग्य नहीं है, अपितु अनिन्दनीय तथा दोषहीन चरित्र वाली है।[१] रामचरितमानस में ऐसी नाटकीयता नहीं पायी जाती न ही ऐसा सम्वाद। तुलसीदास के राम सीता को 'कहे कछुक दुर्बाद।'[२] राम ने सीता को क्या 'दुर्बाद' कहा—इसे तुलसीदास ने मर्यादा की यवनिका से ढंक रखा है, किन्तु महाकाव्यों में ही समान भाव से सीता को अग्नि-परीक्षा की प्रक्रिया से गुजरनी पड़ती है।

कम्ब-रामायण में सीता का परिचय राम ने गुह की भाभी के रूप में भी दिया है।[३] रामचरितमानस में सीता का परिचय इस रूप में नहीं मिलता।

कम्बन ने सीता को सच्चे अर्थों में पतिपरायणा के रूप में चित्रित किया है। कम्बन की सीता अपने शाप से रावण तथा लंका को ही नहीं, अपितु अनन्त लोकों को भी जला सकती हैं, किन्तु इससे राम का यश तथा पराक्रम कलंकित होगा, यह सोचकर वह रावण को शाप नहीं देती हैं। वह हनुमान् से कहती हैं कि अगर परपुरुष रावण मुझे स्पर्श कर लिया होता, तो क्या अब तक मैं जीवित रहती?[४] रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता है।

कम्ब-रामायण में कवि ने सीता को अनुपम रूपवती के रूप में चित्रित किया है। करवाल तथा बरछा दोनों एक साथ रखे गये हों—ऐसे नेत्रों वाली, रक्त लगे करवाल-सदृश लाल-लाल रेखाओं से युक्त नेत्रों वाली, रत्नाहार से भूषित स्तनों वाली, लवण समुद्र से उत्पन्न न होकर क्षीर-समुद्र से उत्पन्न अमृत समान, एक सूत्र युगल रत्नजटित कलशों को ढो रही हों—ऐसी सूक्ष्म कटि तथा पुष्ट स्तनों से युक्त, चन्द्रकला जैसे दन्तावलियों से शोभायमान नर्तनशील कलापी से भी सुन्दर बत्ती के बिना ही अमृत में जलने वाली अत्युत्तम दीपक-सदृश, नवपुष्प अगरु-धूम आदि सुगन्धित होकर निरन्तर वर्षा करने वाली मेघ-सदृश काले तथा दीर्घकेशों के भार से

---

१. कम्ब-रामायण, ६/३७/८६-९७।
२. रामचरितमानस, ६/१०८।
३. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, गंगैप्पड़ळम्, २/६/७३।
४. कम्ब-रामायण, सुन्दरकाण्ड, चूड़ामणिप्पड़ळम् ५/६/१८-१९।

कम्पित होने वाली सूक्ष्म कटि से युक्त मयूरी-तुल्य, रक्त स्वर्णमय गम्भीर नाभि से शोभायमान, महुवे के पुष्प तथा इन्द्रगोप के समान अधर वाली, इंगुलिक के पत्र-लेखों से चित्रित अत्युत्तम स्वर्णमय कलशों से शोभायमान हो यों शोभित होने वाली, आम्रफाक-सदृश सुन्दर नेत्रों वाली, साँप के फण एवं रथ का उपहास करने वाली विशाल जघन से युक्त, दीर्घकेशों से शोभायमान विषस्वभाव नेत्रों वाली के रूप में प्रस्तुत किया है। कम्बन की उपमाएं कालिदास, बाणभट्ट, जयदेव-सदृश अद्वितीय एवं प्रभावोत्पादक हैं। हिन्दी साहित्य में बिहारी का श्रृंगार वर्णन कम्बन के श्रृंगार चित्रण के अधिक निकट प्रतीत होता है।

कम्बन नारीसौन्दर्य के अनिन्द्य प्रशंसक हैं। वे समय-स्थान को भूलकर नारी पात्रों के प्रस्तुतीकरण के अवसर पर नारीसौन्दर्य की उपमाओं की सर्वदा झड़ी लगाते रहते हैं, जिससे कहीं-कहीं तो मर्यादा की सीमाएँ—टूटती प्रतीत होती हैं। कम्बन ने नारीसौन्दर्य की इन्हीं अद्वितीय उपमाओं से सीता का वर्णन इस रूप में किया है, जिससे मर्यादा की सीमाएं कहीं-कहीं चरमराने लगी हैं।

कम्बन ने नारी सौन्दर्य की अप्रतिम अभिनव उपमाओं, उपमानों से इस रूप में उसे प्रस्तुत किया है कि तुलसीदास उनसे इस क्षेत्र में कम्बन तुल्य प्रतीत नहीं होते।

आलोच्यकविद्वय ने आलोच्यग्रन्थद्वय में सीता को ही सर्वश्रेष्ठा कथानायिका के रूप में प्रस्तुत किया है।

ऊर्मिला

भारतीय संस्कृति की साक्षात् मूर्ति ऊर्मिला का व्यक्तित्व आलोच्यग्रन्थद्वय में कविद्वय द्वारा उपेक्षित है। चौदह वर्षों तक पति-विरह में आकुल, इस तपस्विनी का वर्णन दोनों महाकाव्यों में अत्यन्त संक्षिप्त मात्र इकाई की कुछ पंक्तियों में प्राप्त होता है।

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस—दोनों में कवियों ने ऊर्मिला को इतना उपेक्षित रखा है कि इनके ग्रन्थों से यह भी ज्ञात नहीं होता कि ऊर्मिला किसकी पुत्री है। वाल्मीकि-रामायण से ज्ञात होता है कि ऊर्मिला जनक की द्वितीय पुत्री

है ।[1] विवाह के समय इसका कन्यादान जनक ही करते हैं ।[2] इससे भी ऊर्मिला का जनक की पुत्री होना सिद्ध होता है ।

कम्ब-रामायण में ऊर्मिला

वाल्मीकि-रामायण सदृश कम्ब-रामायण में ऊर्मिला का वर्णन नहीं मिलता। कम्बन ने मात्र दो पद्यों में ही ऊर्मिला का उल्लेख किया है—

"जनक बन्धु-जनों (दशरथ आदि) से परामर्श करके अपनी दूसरी पुत्री ऊर्मिला का तथा अपने अनुज कुशध्वज की दो पुत्रियों—इन तीनों लक्ष्मी-सदृश कन्याओं का विवाह राम के तीनों भाइयों से कर दिया जाय—ऐसा दशरथ से निवेदन करते हैं ।[3]

पुष्पमालाधारी जनक और कुशध्वज नामक उनके अनुज, दोनों की तीन पुत्रियों के साथ, जो सर्वगुणसम्पन्ना एवं सभी योग्य गुणों से शोभित थीं, काजल लगी आँखों वाली थीं, सुन्दरियों के सदृश रमणीय थीं तथा प्राप्तवय थीं—से दशरथ के तीनों पुत्रों (लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न) ने विवाह कर लिया ।[4]

कम्ब रामायण में ऊर्मिला के सम्बन्ध में मात्र यही उल्लेख प्राप्त होता है ।

रामचरितमानस में ऊर्मिला

रामचरितमानस में जानकी की 'लघुभगनी' रूप में ऊर्मिला का परिचय मिलता है ।[5] रामचरितमानस में ऊर्मिला का वर्णन अत्यन्त संक्षिप्त रूप में मिलता है—

वसिष्ठ की आज्ञा पाकर जनक ने विवाह का सामान सजाकर माण्डवी, श्रुतकीर्ति और ऊर्मिला को बुलाया ।[6] जानकी की छोटी बहन ऊर्मिला को सब सुन्दरियों में शिरोमणि जानकर, उस कन्या को सब प्रकार के सम्मानित करके,

---

१. वीर्यशुल्कां मम सुतां सीता सुरसुतोपमाम् ।
द्वितीयामूर्मिलां चैव त्रिर्वदामि न संशयः ।
—वाल्मीकि रामायण, १/७१/२१, २२ ।

२. वाल्मीकि-रामायण १/७३/३०--३० १/२ ।

३. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, कड़िमणपड़ळम् ।

४. उपर्युक्त १/२१/१०२ ।

५. रामचरितमानस १/३२५/छंद ३ ।

६. उपर्युक्त १/३२५/२ ।

उसका विवाह लक्ष्मण से किया गया। रामचरितमानस में ऊर्मिला का वर्णन मात्र इसी रूप में प्राप्त होता है।

निष्कर्ष

कम्ब-रामायण में ऊर्मिला का उल्लेख अत्यन्त संक्षिप्त रूप में मिलता है। इस पात्र के माध्यम से कथा-प्रवाह में उल्लेखनीय रमणीयता न ला पाने की आशंका और कथा-प्रवाह की गति में कोई अवरोध उत्पन्न न होने की सम्भावनावश ऐसा प्रतीत होता है कि कम्बन ने 'ऊर्मिला' को विस्तार नहीं दिया है। रामचरितमानस में भी ऊर्मिला का अत्यन्त संक्षिप्त रूप में उल्लेख हुआ है। तुलसीदास की भी यही दृष्टि प्रतीत होती है।

कम्बन, जनक तथा उनके अनुज की तीन पुत्रियों का विवाह, दशरथ के तीन पुत्रों से करा करके इस प्रसंग को समाप्त कर देते हैं। वे तीनों कन्याओं का नामोल्लेख करने की भी आवश्यकता नहीं समझते। कम्ब-रामायण में अन्यत्र पुनः इनका उल्लेख नहीं मिलता है। आलोच्यकविद्वय के इस प्रसंग के वर्णन में मात्र यही भिन्नता है कि तुलसीदास ने तीनों बहनों का नामोल्लेख करते हुए दशरथ के पुत्रों से नामतः विवाह का उल्लेख किया है।

राम-कथा की अधिकांश घटनाओं-प्रसंगों से आद्योपान्त जुड़े, राम के सर्वाधिक समीपस्थ तथा राम के पश्चात् अत्यधिक मुखरित पात्र-लक्ष्मण की पत्नी ऊर्मिला का चरित्र आलोच्यग्रन्थद्वय में पूर्णतया उपेक्षित है। राम-कथा-साहित्य की इस उपेक्षिता का उद्धार सर्वप्रथम रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा किया गया। भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठ, महनीय और वरणीय रूप को रसमय बनाने में अद्भुत सामर्थ्यवान् टैगोर ने सर्वप्रथम अपनी करुण रस-ग्राहिणी दृष्टि से अद्वितीय त्यागमयी होती हुई भी घोर उपेक्षिता ऊर्मिला के श्वेत-श्याम (Black & white) चित्र को अपनी भावनाओं के दिव्य तथा बेजोड़ रंगों से ईस्टमैन कलर में परिवर्तित किया। विश्वकवि ने अपने निबन्ध में अत्यन्त भावुकतापूर्ण हृदय-स्पर्शी शैली में उपेक्षिता ऊर्मिला का स्मरण किया तथा आदिकवि वाल्मीकि और अन्य परवर्ती कवियों की ऊर्मिला-विषयक उदासीनता की आलोचना की। इस लेख से प्रेरणा प्राप्त कर महावीरप्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' में 'कवियों की ऊर्मिला विषयक उदासीनता' पर लेख लिखकर कवि-जगत् को आन्दोलित कर दिया। उन्होंने कवियों से ऊर्मिला का उद्धार करने का आह्वान किया। परिणामस्वरूप मैथिलीशरण गुप्त का 'साकेत', बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का खण्ड-काव्य- 'ऊर्मिला'-जैसी कृतियों के प्रणयनोपरान्त इस उपेक्षिता का उद्धार बीसवीं शताब्दी में हुआ।

माण्डवी और श्रुतकीर्ति

जनक के अनुज कुशध्वज की इन दोनों पुत्रियों—माण्डवी और श्रुतकीर्ति का चित्रण आलोच्यग्रन्थद्वय में अत्यन्त संक्षिप्त रूप में हुआ है। माण्डवी, भरत तथा श्रुतकीर्ति, शत्रुघ्न की पत्नी हैं। इनमें माण्डवी बड़ी तथा श्रुतकीर्ति छोटी है।

कम्ब-रामायण में माण्डवी और श्रुतकीर्ति

कम्ब-रामायण में बालकाण्ड के कड़िमणप्पड़ळम् में माण्डवी और श्रुतकीर्ति का उल्लेख बहुत ही संक्षिप्त रूप में इस प्रकार मिलता है—

जनक ने दशरथ तथा बन्धु-जनों से परामर्श करके निश्चय किया कि अपनी दूसरी पुत्री और अपने अनुजों की दो पुत्रियों (माण्डवी और श्रुतकीर्ति)—इन तीनों लक्ष्मी-सदृश कन्याओं का विवाह राम के तीनों भाइयों के साथ कर दिया जाय।[१]

पुष्पमालाधारी जनक तथा उनके अनुज कुशध्वज दोनों की तीन पुत्रियों का, जो सभी योग्य गुणों से शोभित थीं, काजल लगी आँखों वाली थीं, सुन्दरियों के सदृश रमणीय थीं और प्राप्तवय थीं, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न के साथ विवाह कर दिया।[२]

कम्ब-रामायण में इन दोनों बहनों के सम्बन्ध में यही उल्लेख प्राप्त होता है तथा अन्यत्र कहीं भी इनका उल्लेख नहीं मिलता।

मानस में माण्डवी और श्रुतकीर्ति

कम्ब-रामायण-सदृश रामचरितमानस में भी माण्डवी और श्रुतकीर्ति का वर्णन अत्यन्त संक्षिप्त रूप में इस प्रकार मिलता है—

वसिष्ठ की आज्ञा पाकर जनक ने विवाह का सामान सजाकर माण्डवी, श्रुतकीर्तिऔर ऊर्मिला—इन तीनों राजकुमारियों को बुलाया। कुशध्वज की बड़ी कन्या माण्डवी का, जो गुण, शील, सुख और शोभा की ही रूप थी, जनक ने सप्रेम सभी विधियों को पूरा करके भरत से विवाह किया।[३] जिसका नाम श्रुतकीर्ति है, जो

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, कड़िमणप्पड़ळम्, १/२१/१०१।
२. उपर्युक्त १/२१/१०२।
३. रामचरितमानस, १/३२५/२।

सुन्दर नेत्रों वाली, सब गुणों का भण्डार है, रूप-शील में उजागर है, उसका राजा ने शत्रुघ्न से विवाह किया ।[1]

मानसकार द्वारा इन दोनों बहनों के सम्बन्ध में मात्र यही उल्लेख आलोच्यग्रन्थ में किया गया है ।

निष्कर्ष

माण्डवी और श्रुतकीर्ति का चित्रण आलोच्यकविद्वय द्वारा समान भाव से उपेक्षित है । कम्बन, जनक की दूसरी पुत्री तथा उनके अनुज की दोनों पुत्रियों—इन तीनों कन्याओं का विवाह, दशरथ के अन्य तीनों पुत्रों के साथ होने का उल्लेख करते हैं । कौन किसकी पत्नी बनी तथा कौन किसका पति—इसके उल्लेख की भी कम्बन ने आवश्यकता नहीं समझी है ।[2] भारतीय परम्परा और संस्कृति के अनुसार इसे हम आयु के आधार पर स्वीकार करते हैं, किन्तु तुलसीदास ने इसका स्पष्ट उल्लेख किया है ।[3]

कम्बन और तुलसीदास के विवाह-क्रम में अन्तर पाया जाता है । कम्बन ने राम के पश्चात् तीनों भाइयों के विवाह का क्रमशः उल्लेख किया है । रामचरितमानस में सीता-राम के विवाहोपरान्त माण्डवी का भरत के साथ द्वितीय क्रम पर, लक्ष्मण का ऊर्मिला के साथ तथा तृतीय क्रम पर और अन्त में शत्रुघ्न का श्रुतकीर्ति के साथ विवाह का उल्लेख है ।[4] कम्ब-रामायण और रामचरितमानस में लक्ष्मण और भरत के विवाह-क्रम में भिन्नता पायी जाती है, किन्तु राम-शत्रुघ्न के क्रम में कोई भिन्नता नहीं है ।

कम्बन और तुलसीदास की तूलिकाओं ने माण्डवी और श्रुतकीर्ति की मूर्ति पर नाम मात्र का रंग चढ़ाया है, जिससे उनकी मूर्ति अत्यन्त फीकी है । न जाने क्यों कविद्वय ने उन्हें इतना उपेक्षित किया है ? जबकि आलोच्यग्रन्थद्वय की अन्य मूर्तियों को अत्यन्त उदारभाव से अलंकृत किया गया है, यदि कविद्वय चाहते तो अन्य मूर्तियों के रंगों एवं अलंकरणों में से थोड़ी-थोड़ी-सी कटौती करके भी इन मूर्तियुगल को देदीप्यमान स्वरूप प्रदान कर सकते थे । आज इन मूर्तियों के लिए स्वतन्त्र रचनाओं के प्रणयन की आवश्यकता है, जिससे ऊर्मिला-सदृश इनकी कुम्हलाई

---

१. रामचरितमानस १/३२५/३ ।
२. कम्ब-रामायण, कड़िमणप्पड़ळम् १/२१/१०१, १०२ ।
३. रामचरितमानस १/३२५/२,३ ।
४. उपर्युक्त ।

हुई कीर्ति-वल्लरी, पल्लवित-पुष्पित होकर अपनी दिव्य सुरभि से पाठकवृन्द को आत्म-विभोर कर प्रफुल्लित करती रहें। साहित्यकारों-रचनाकारों के लिए श्रुतकीर्ति और माण्डवी की साहित्यिक-भूमि अब भी रिक्त है। यह रिक्त भूमि इतनी उर्वर और शक्तिसम्पन्न है, जहाँ वे बौद्धिक, भावात्मक, रसात्मक आदर्श के अत्यन्त मनोज्ञ सुमन खिला सकते हैं, जिसकी दृश्यावली शोभन वस्तुओं की मनोरम स्वर्ग-स्थली सिद्ध हो सकती है।

मन्थरा

अत्यन्त वार्ता-कुशल,[१] प्रतिशोध लेने में हाथी-सदृश स्मरण शक्तिवाली[२], कैकेयी की दासी, जिसका एक नाम 'कुब्जा' भी था,[३] कैकेयी के पास रहती थी।' यह उसके मायके से आयी हुई थी। उसके माता पिता, जन्म-स्थान और देश का पता किसी को नहीं था।[४] 'मन्थरा' का शाब्दिक अर्थ है—कठिन अथवा दृढ़ मन को भी विचलित करने वाली। राम-कथा की घटनाओं से यह सिद्ध होता है कि मन्थरा 'अन्वर्थनामा' है, जो दृढ़मना कैकेयी को भी विचलित करके अपने नाम की सार्थकता सिद्ध करती है।

कम्ब-रामायण में मन्थरा

कम्ब-रामायण में मन्थरा का प्रारम्भिक उल्लेख अयोध्याकाण्ड के 'मन्थरैशूळ्-च्चिप्पड़ळम्' में मिलता है। राम के पट्टाभिषेक की घोषणा के उपरान्त अयोध्या के जन-समुदाय में एक नया उल्लास होता है। राज्याभिषेक की प्रसन्नता में अयोध्या नगरी एक नववधू की भाँति सजाने का वर्णन इस पड़ळम् में मिलता है। उन-तालीसवें पद्य में कवि मन्थरा के परिचय से उसको कथा-प्रवाह में सम्मिलित करता है। जिसका परिचय भी उसके नाम की सार्थकतानुसार पाठकों से कराता है। मन्थरा का परिचय देते हुए कम्बन कहते हैं कि उसके शरीर की तरह उसका मन भी टेढ़ा है।[५] इसी परिचय में उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की झाँकी मिल जाती है।

१. वालमीकि-रामायण, २/७/१८।
२. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, मन्थरैशूळ्च्चिप्पड़ळम्।
३. वालमीकि-रामायण, २/७/१०।
४. उपर्युक्त २/७/१।
५. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, मन्थरैशूळ्च्चिप्पड़ळम् २/२/८१।

कम्बन ने अत्यन्त सुन्दर और भावपूर्ण उपमाओं एवं विशेषणों द्वारा मन्थरा को कम्ब-रामायण में इस रूप में प्रस्तुत किया है—क्रूरकर्मा रावण के पापों के समान तथा अन्य दुर्लभ कठोरता से युक्त मन वाली मन्थरा (कुब्जा या कुबड़ी) है, जिसके शरीर की तरह उसका मन भी वक्र है, उपस्थित होती है,[१] इस प्रथम परिचयात्मक पद्य में ही कवि ने मन्थरा के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को उद्घाटित कर दिया है।

मन्थरा अत्यन्त अविवेकी व क्रोधी है। राम के राज्याभिषेक का समाचार सुनकर उसका मन तड़पने लगता है, उसका क्रोध उमड़ पड़ा तथा पीड़ा हुई, उसकी आँखें अग्नि बरसाने लगीं, यही नहीं वह कुछ विक्षिप्त होकर बड़बड़ाने भी लगती है।[२] शैशवावस्था में राम ने खेलते समय मनोविनोद में कभी मिट्टी की गोलियों को अपनी धनुष की प्रत्यञ्चा पर रखकर मन्थरा के कूबड़ पर मारा था। प्रतिशोध लेने में हाथी-सदृश स्मरण रखने वाली मन्थरा, उस घटना को सर्वदा याद रखती है, तथा प्रतिशोध लेने की अवसर की प्रतीक्षारत है, इस अवसर पर उस घटना का स्मरण करके वह क्रोध से अपना ओठ चबाने लगी और बिम्ब फल-सदृश अधरोष्ठों वाली कैकेयी के प्रासाद में प्रवेश किया।[३] वह वहाँ जाकर कैकेयी को जगाती है।[४] कम्बन की मन्थरा अत्यन्त चतुर नीति-निपुणा और अपना लक्ष्य सिद्ध करने में कुशला है। कम्बन की मन्थरा एक कुशल मनोवैज्ञानिक भी है। कौन-सी बात कब, कहाँ और किस रूप में कहना है?—इसमें वह अत्यन्त कुशल है। राम के राज्याभिषेक के प्रतिकूल कैकेयी के विभ्रान्त हेतु, वह अपनी सभी कलाओं का एक साथ प्रयोग करके कैकेयी को यह सूचना नमक-मिर्च के साथ देती है। इस सूचना से प्रतीत होता है कि मानो कैकेयी से भी बढ़कर वह भरत की हितैषिणी है।[५]

मन्थरा अत्यन्त कुशल मनोवैज्ञानिक है, वह अपनी किसी भी बात को स्पष्ट रूप में एक बार में श्रोता (कैकेयी) को नहीं सुनाती है, अपितु उसके मन में प्रबल जिज्ञासा उत्पन्न करते हुए प्रस्तुत करती है। वह कैकेयी द्वारा राम की प्रशंसा करने पर, कैकेयी की प्रतिद्वन्द्विनी—कौसल्या की बुद्धि-कुशलता की प्रशंसा करके उनके

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, मन्थरैशूळ्च्चिप्पड़ळम् २/२/३९।
२. उपर्युक्त २/२/४०।
३. उपर्युक्त २/२/४१।
४. उपर्युक्त २/२/४२-४३।
५. उपर्युक्त २/२/४५-४८।

प्रति कैकेयी के मन में ईर्ष्या उत्पन्न करती है।[१] मन्थरा अपने कुकर्म के प्रति दृढ़मना है, वह अपनी बात की उपेक्षा होने पर चिल्ला-चिल्लाकर धमकी देने लगती है। वह कैकेयी की निन्दा करते हुए रोने लगती है, अपना रूप विकृत करके रानी द्वारा प्राप्त स्वर्णमय रत्नहार को पृथ्वी पर फेंक देती है।[२] क्रोधित मन्थरा कहती है कि मैं दासी की दासी नहीं बन सकती, वह कैकेयी को मूर्खा कहने में संकोच नहीं करती।[३] मन्थरा कैकेयी के मन में अपने नाना प्रकार के तर्कों-कुतर्कों के द्वारा कौसल्या तथा राम के प्रति ईर्ष्या का भाव भरती है। दशरथ द्वारा भरत को उनके ननिहाल भेजने को मन्थरा, इस प्रसंग का एक षड्यन्त्र सिद्ध करती है।[४] वह दशरथ तथा कैकेयी दोनों को भरत के प्रति अनुदार बताते हुए अपने को ही भरत की सच्ची हितैषिणी, कैकेयी के सम्मुख सिद्ध करती है।[५] वह राम के राज्याभिषेक को कैकेयी के सर्वथा प्रतिकूल सिद्ध करती हुई, भरत-कैकेयी के भावी जीवन का ऐसा दयनीय एवं भयानक चित्र प्रस्तुत करती है कि राम-कौसल्या के प्रति अत्यन्त दृढ़मना कैकेयी विचलित हो जाती है।[६] मन्थरा का वाग्जाल इतना सशक्त, सघन एवं विशाल है, जिसमें उलझकर कैकेयी न केवल अपने निश्चय से विचलित हो जाती है, अपितु देवासुर संग्राम में दशरथ की सहायता करके उन्हें देवताओं के पक्ष से विजयश्री प्रदान करने वाली, अत्यन्त दृढ़मना एवं परम पवित्र पतिव्रता कैकेयी भ्रम-वश मन्थरा को ही अपनी तथा भरत की सच्ची हितैषिणी मान बैठती है।[७]

भरत किस प्रकार से राज्य प्राप्त करेंगे? इसके लिए कैकेयी मन्थरा से विधि पूछती है।[८] मन्थरा उत्कट-आत्मविश्वासमना है, जो कैकेयी से कहती है कि अगर कैकेयी उसकी बात मान ले तो वह सप्तलोकों के राज्य का राजा उसके पुत्र भरत को बना देगी।[९] मन्थरा अपनी योजना के कार्यान्वयन हेतु कैकेयी को शंबरासुर-युद्ध में प्राप्त दोनों वरों को दशरथ से माँगने के लिए प्रोत्साहित करती है, जिसमें प्रथम वर के अनुसार भरत को अयोध्या के राज्य का स्वामी बनाना है और दूसरे

---

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, मन्थरैशूळ्च्चिप्पड़लम् २/२/४८।
२ उपर्युक्त २/२/५३।
३. उपर्युक्त २/२/५४।
४. उपर्युक्त २/२ ५५-५९।
५. उपर्युक्त २/२/६०।
६. उपर्युक्त २/२/६८-७७।
७. उपर्युक्त २/२/७७।
८. उपर्युक्त २/२/७९।
९. उपर्युक्त २/२/८०।

वर से राम को चौदह वर्षों के लिए अरण्य, जिससे इतने दिनों में प्रजा वर्ग भी भरत के अनुकूल हो जायेगी।[१]

मन्थरा की यह चतुरता, कुटनीतिज्ञता, प्रत्युत्पन्नमतित्व है, जिससे वह निन्दा करने वाली, डाँट कर भगाने वाली, कैकेयी से अपनी बात मनवाने में सफल ही नहीं होती है, अपितु वह कैकेयी की इतनी विश्वास-पात्री बन जाती है कि गद्‌गदमना कैकेयी कहने लगती है कि तुमने भरत को समुद्र से आवृत पृथ्वी का राज्य दिया। कैकेयी मन्थरा को भरत की माता घोषित करती है।[२] इस प्रकार कम्बन-रामायण में अत्यन्त क्रूर, कूटनीतिज्ञा, निराश न होने वाली तथा अपने लक्ष्य के प्रति दृढ़संकल्पा के रूप में मन्थरा का चरित्र प्राप्त होता है।

रामचरितमानस में मन्थरा

कैकेयी की 'मंदमति चेरी' और 'अजस पिटारी' के रूप में मन्थरा का प्रथमोल्लेख रामचरितमानस के अयोध्याकाण्ड में प्राप्त होता है।[३] कम्ब रामायण की तरह मानस की मन्थरा भी राम के राज्याभिषेक का समाचार सुनकर अत्यन्त कुपित होती है।[४] मन्थरा इस उत्सव को विफल बनाने के लिए तरह-तरह के उपाय सोचने लगती है। मन्थरा के मन में ऐसा दुर्विचार सरस्वती द्वारा उसकी 'मति फेरि' देने के कारण आता है।[५] वह ऐसा अभिनय करती है जिससे दुःखित और अत्यन्त चिन्तित प्रतीत हो वह इसी रूप में कैकेयी के पास पहुँचती है। वह अपने तर्कों कुतर्कों द्वारा राम के राज्याभिषेक को अनुचित सिद्ध करती है। पहले तो कैकेयी मन्थरा को डाँटती है तथा उसे इस प्रकार के दुष्कृत्य के लिए 'घरफोरी' कहती है। कैकेयी कहती है कि अगर उसने पुनः ऐसी बात कही, तो वह उसकी जीभ कटवा लेगी।[६] इस प्रकार कैकेयी मन्थरा को 'कुटिल', 'कुचाली', 'दुष्टा', 'घरफोरी' आदि कहकर उसको डाँटती-फटकारती है, किन्तु 'सुरमाया बस' कपटपूर्ण मन्थरा के प्रिय वचनों को कैकेयी बाद में सत्य मानकर, उसे अपना शुभेच्छु जानकर उसकी बातों पर विश्वास कर लेती है।[७] नियतिवश कैकेयी मन्थरा को अपना परम हितै-

---

१. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, मन्थरैशूळ्च्चिप्पड़ळम् २/२ ८२।
२. उपर्युक्त २/२/८३।
३. रामचरितमानस २/१२।
४. उपर्युक्त २/१३/१।
५. उपर्युक्त २/१२।
६. उपर्युक्त २/१४/४।
७. उपर्युक्त २/१६।

पिणी समझने लगती है।[१] मन्थरा अपने तीर को उपयुक्त लक्ष्य पर लगा जानकर, अत्यन्त प्रसन्न होती है। मन्थरा कैकेयी को इस प्रकार समझाती है कि राम के स्थान पर भरत का राजा होना उसके लिए सब प्रकार से लाभप्रद है। इसके लिए वह रानी के पास स्थित दो वरदानों का स्मरण दिलाकर उसे राजा से प्राप्त कर अपनी छाती ठंडी करने के लिए कहती है।[२] मानस की मन्थरा कुशल-दूरदर्शी है। वह कैकेयी को यह भी परामर्श देती है कि 'भूपति-राम सपथ जब करई' तभी 'मागेहु जेहिं बचनु न टरई[३]' जिससे तुम्हें अवश्य सफलता मिले।

रामचरितमानस की मन्थरा कैकेयी को भली-भाँति समझाकर 'कोपगृह' जाने का परामर्श देती है। अन्त में वह कैकेयी को सतर्क करती हुई कहती है कि सहसा राजा की बातों को 'जनि पतिआहू'।[४] यह मन्थरा के बुद्धि-चातुर्य का परिणाम है, जिसके कारण जीभ कटवाने की धमकी देने वाली रानी की भी इतनी परम प्रिय बन जाती है, अपितु वह कैकेयी को अपनी प्रशंसक बना लेती है। कैकेयी उसे इस संसार में अपना सर्वाधिक हितैषिणी मानने लगती है। कैकेयी कहती है— हे सखी! अगर विधाता ने मेरा मनोरथ पूरा किया, तो मैं 'करौं तोहिं चख पूतरि आली'।[५] इस प्रकार स्पष्ट होता है कि रामचरितमानस में चित्रित मन्थरा न केवल अत्यन्त दुष्टा, क्षुद्रमना है, अपितु अत्यन्त कूटनीतिज्ञा भी है, जो पारिवारिक कलह उत्पन्न करने मे दक्ष है।

निष्कर्ष

आलोच्यग्रन्थद्वय में मन्थरा का चरित्र एक दुष्टा के रूप में मिलता है। आलोच्यकविद्वय ने उसे इसी रूप में प्रस्तुत किया है, तथापि उनके प्रस्तुतीकरण में भिन्नता पायी जाती है। कम्ब-रामायण में मन्थरा का परिचय अत्यन्त क्रूरमना के रूप में कवि ने किया है, सो रामचरितमानस में इसका प्रथम परिचय 'मन्द-मतिचेरी' के रूप में मिलता है। कम्बन की मन्थरा को शैशवावस्था में राम ने मिट्टी की गोलियों से कूबड़ पर मारा था। इस घटना का स्मरण करके वह क्रोध से अपने

---

१. रामचरितमानस २/१६/१।
२. उपर्युक्त २/२२/३।
३. उपर्युक्त २/२२/४।
४. उपर्युक्त २/२२।
५. उपर्युक्त २/२३/२।

ओठ को चबाने लगती है, तथापि प्रतिशोध हेतु तिलमिलाती रहती है।[१] रामचरितमानस से यह प्रसंग सर्वथा भिन्न है।

देवताओं के बार-बार निवेदन करने पर मन्थरा को 'अजस पिटारी' बनाकर सरस्वती उसकी बुद्धि फेर देती है। रामचरितमानस की मन्थरा सरस्वती द्वारा बुद्धि परिवर्तन हो जाने के कारण राम के वन-गमन में अवरोध उत्पन्न करती है।[२]

सुषुप्तावस्था में व्यक्ति में तामसगुण की प्रधानता होती है। उस समय व्यक्ति से अन्याय कराया जा सकता है, यह सोचकर कम्बन ने निद्रित अवस्था में कैकेयी को प्रस्तुत किया है। इतनी निद्रित कि, मन्थरा द्वारा पैर स्पर्श पर भी उसके दीर्घ नेत्रों से निद्रा पूर्णतया नहीं हटती।[३] कम्बन मन्थरा को इस अवस्था में कैकेयी के पास भेजते हैं—यह वर्णन सिद्ध करता है कि कवि की दृष्टि बहुत सूक्ष्म है। वह विविध क्षेत्रों का मर्मज्ञ है। कैकेयी को निद्रित अवस्था में प्रस्तुत करके कम्बन ने उस समय तमोगुणयुक्ता उसे सिद्ध किया है। इस गुण के कारण कैकेयी मन्थरा की बात को रंचमात्र प्रतिरोध करने के बाद स्वीकार कर लेती है। कम्बन पात्रों के प्रस्तुतीकरण का अनुकूल सन्दर्भ एवं समय निर्धारण करते हैं, जिससे उनका वर्णन अत्यन्त मनोवैज्ञानिक भी प्रतीत होता है। मानसकार की दृष्टि प्रस्तुत प्रसंग में इतनी परखशील प्रतीत नहीं होती। यही कारण है कि तुलसीदास की मन्थरा के पहुँचने पर कैकेयी जागृत अवस्था में है, जो हँसकर उसका स्वागत करती है।[४] कम्बन की मन्थरा पहुँचते ही कैकेयी के सोये होने के लिए एक अच्छा सा लेक्चर पिला जाती है,[५] जबकि मानस की मन्थरा पहुँचकर त्रिया-चरित्र करती हुई रोने लगती है।

कम्बन की मन्थरा तुलसी की मन्थरा की तुलना में कुछ अधिक दुःसाहसी है, जो कैकेयी द्वारा अपनी बात न मानने पर चिल्ला-चिल्लाकर उसकी निन्दा करती है, अपनी बात न मानने पर धमकी देने लगती है।[६] यह प्रसंग मानस से सर्वथा भिन्न है। मानस की मन्थरा कैकेयी से केवल निवेदन करती है।

मानस की मन्थरा 'कोउ नृप होइ हमहिं का हानी' की तटस्थ दृष्टि वाली है, किन्तु कम्ब रामायण की द्वेष से प्रेरित मन्थरा ऐसी तटस्थता नहीं निभा सकती,

---

१. कम्ब-रामायण २/२/३९।
२. रामचरितमानस २/१२।
३. कम्ब-रामायण २/२/४४।
४. रामचरितमानस २/१२/३।
५. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, मन्थरैशूळ्च्चिप्पड़ळम्।
६. उपर्युक्त २/२/५३।

क्योंकि वह कैकेयी के प्रति पूर्णतया समर्पित है । कम्बन की मन्थरा अत्यधिक आत्म-सम्मान वाली है, जो कैकेयी से कहती है कि वह दासी की दासी नहीं बन सकती।[१] मानस की मन्थरा जब कैकेयी के समीप पहुँचकर रोने लगती है, तो कैकेयी के मन में यह आशंका होती है कि सम्भवतः लक्ष्मण ने उसे मारा है ।[२] कम्ब-रामायण में यह वर्णन नहीं मिलता । कम्बन की मन्थरा रोने वाली नहीं अपितु वह तो कैकेयी को डाँटती है तथा चिल्ला-चिल्लाकर उसकी निन्दी करती है ।[३]

कम्बन की मन्थरा अत्यन्त तर्क कुशला है, जो येन-केन प्रकारेण अपनी बात को तर्क-कुतर्क से सिद्ध कर देती है यथा वह कहती है कि अगर बड़े ही राजा हो सकते हैं, तो राम दशरथ से, तो छोटे ही हैं, अगर छोटे राम राज्य को प्राप्त कर सकते हैं, तो भरत क्यों नहीं ?[४] तुलसीदास की मन्थरा इतनी चतुर एवं तर्क-कुशला नहीं है ।

कम्बन की मन्थरा भरत को ननिहाल भेजने के लिए दशरथ को दोषी बताती है.[५] जबकि मानस की मन्थरा के अनुसार राजा ने कौसल्या के परामर्श पर भरत को ननिहाल भेजा है ।[६]

रामचरितमानस में भरत मातुल-गृह से लौटने पर कैकेयी की निन्दा करते हैं । शत्रुघ्न भी उस समय उनके साथ हैं, उसी समय अनेक प्रकार के सुन्दर कपड़ों एवं गहनों से सुसज्जित कुबरी (मन्थरा) वहाँ आती है । उसे देखकर शत्रुघ्न अत्यन्त क्रोधित हो जाते हैं तथा अपनी पूरी शक्ति से उन्होने उसके कूबड़ पर लात मारी, जिससे वह चिल्लाती हुई मुँह के बल पृथ्वी पर गिर पड़ी । इस चोट से मन्थरा का कूबड़ टूट जाता है, 'कपारू' फूट जाता है, दाँत टूट जाते हैं तथा मुँह से खून बहने लगता है । शत्रुघ्न उसकी 'धरि झोंटी' 'घसीटन लगे' । भरत उस पर दया करके छुड़ा देते हैं ।[७] कम्बन के मन में मन्थरा के प्रति तुलसीदास-सदृश इतनी घृणा नहीं है । कम्ब-रामायण में कैकेयी के मन परिवर्तन के पश्चात् मन्थरा का उल्लेख नहीं प्राप्त होता है ।

---

१. कम्ब रामायण, अयोध्याकाण्ड, मन्थरैशूळ्च्चिप्पड़लम् २/२ ।
२. रामचरितमानस २/१३/४ ।
३. कम्ब-रामायण २/२/५३ ।
४. उपर्युक्त २/२/७९ ।
५. उपर्युक्त २/२/५९ ।
६. रामचरितमानस २/१८/१ ।
७. उपर्युक्त २/१६३/१-४ ।

इस प्रकार आलोच्यकविद्वय की मन्थरा दुष्टमना है, तथापि कम्बन की मन्थरा तुलसी की मन्थरा की तुलना में कुछ अधिक प्रवंचनपटु है।

शूर्पणखा

शूर्पणखा रावण की भगिनी तथा विद्युज्जिह्व की पत्नी थी।[१] विद्युज्जिह्व के मरने के बाद वह खर के पास रहती थी। ऐसा प्रतीत होता है कि यह इसका कारण-नाम है। सूप की तरह नाखून होने के कारण इसका नाम शूर्पणखा पड़ा— 'शूर्पमिवा नखं यस्याः सा शूर्पणखा।' ऐतिहासिक व आध्यात्मिक दोनों दृष्टियों से शूर्पणखा का चरित्र अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। शूर्पणखा का व्यक्तित्व राम-रावण के संघर्ष की प्रमुख प्रेरिका के रूप में हमारे सम्मुख आता है। सम्पूर्ण पृथ्वी को 'निसिचर हीन करउँ' का 'पन' करने वाले राम के उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए शूर्पणखा एक सरल-सुगम मार्ग बनकर आती है, जिससे उन्हें राक्षसाधिराज रावण के विरुद्ध कुछ करने के लिए उचित कारण तथा युक्तियुक्त आधार मिलता है।

कम्ब-रामायण में शूर्पणखा

कम्ब-रामायण में अरण्यकाण्ड के छठे शूर्पणखैप्पड़ळम् में शूर्पणखा की कथा विस्तारपूर्वक मिलती है। शूर्पणखा की कथा हेतु कम्बन ने पूरे एक पड़ळम् को रखा है, जिसके एक सौ छत्तीस पद्यों में कवि ने शूर्पणखा का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। इसके अतिरिक्त इस काण्ड के सातवें तथा दसवें पड़ळम् में भी इसकी कथा प्राप्त होती है।

कम्बन ने तुलसी के चित्रण से सर्वथा भिन्न अत्यन्त सजीव रूप में, किन्तु मनोवैज्ञानिक ढंग से शूर्पणखा का चरित्रांकन किया है। कम्बन की शूर्पणखा अत्यधिक चतुर, मायावी तथा कूटनीतिज्ञ है। वह 'लक्ष्मी-मन्त्र' द्वारा अतीव सुन्दरी एवं अप्रतिम मनोरम रमणी का लुभावनी रूप धारण करने में दक्ष है।[२] वह

---

१. क—रामायणमीमांसा, स्वामी करपात्रीजी महाराज, पृ० ५५६।

ख—शूर्पणखा विधवा थी। उसके पति विद्युज्जिह्व का वध रावण ने अपने हाथों से किया था।'—मानस-मुक्तावली, रामकिंकर उपाध्याय, पृ० ६८।

ग—द्रष्टव्य-रामकथा, फादर कामिल बुल्के, पृ० ४१२-४१७।

२. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, शूर्पणखैप्पड़ळम् ३/६/२३।

'लक्ष्मी-मन्त्र' से अतीव सुन्दरी का रूप धारण करती है।[१] कोकिल तुल्य मधुर-भाषिणी तथा बिम्ब-सदृश रक्ताधर से सुशोभित कलापी तुल्य सुन्दर रमणी का वेश धारण करने वाली शूर्पणखा के अरुण कमल-दल जैसे छोटे-छोटे पैर थे। शूर्पणखा मधुरभाषिणी, पिकवयनी-सी, कलापी-सी, हंसिनी-सदृश, उज्ज्वल 'वंजि-लता'-सी एवं विष-सी बनकर वहाँ आयी।[२]

कम्बन की शूर्पणखा अतीव रूप की मल्लिका है। स्वर्ण-पराग से युक्त कमल में वास करने वाली लक्ष्मी तथा शुक के सौन्दर्य को भी परास्त करने वाली, दो चमकते करवालों (नयन) से शोभायमान बदन के साथ वह गगन-तल से यूँ उतरी, मानो विद्युल्लता ही मेखा-भूषित, विशाल तथा मनोहर रथ (जघन-तट) से युक्ता एक मुग्धा का रूप धारण करके उतर रही हो।[३] कल्पवृक्ष से उत्पन्न अत्यन्त सुरभितलता-सदृश कान्तिमान शरीर वाली, काम से पूर्ण गन्धयुक्ता, मधु-सदृश मधुरभाषिणी, चकित हिरणी-सी चितवन वाली, मधुरभाषिणी मोरिनी-सदृश वाणी वाली कम्बन की शूर्पणखा नृत्य-गति से आ रही है, जिसके नूपुर-हार, मेखला, काले बाल के सदृश केशों में गुँथे हुए पुष्पों पर गुंजायमान भ्रमर की ध्वनि से, किसी युवती के आगमन की सम्भावना से, राम की दृष्टि उस दिशा की ओर जाती है।[४]

राम की दृष्टि में स्वर्ग से उतरने वाली शूर्पणखा अनुपम मधुर अमृत-तुल्य है, ऐसी वह सुन्दरी मानो स्तनों के भार से कमर लचकाती हुई आ रही थी।[५] कम्बन के राम शूर्पणखा के अनुपम, अनिन्द्य सौन्दर्य को देखकर विस्मित होकर सोचने लगते हैं कि सुन्दरता की भी कोई सीमा है? आभरण-भूषित सुन्दरियों में इसका उपमान कौन हो सकता है।[६] वह अपांग चितवन से दृष्टिपात करते हुए थोड़ा लज्जा-भाव प्रदर्शित करते हुए एक ओर खड़ी हो जाती है।[७] इसके पश्चात् का चित्रण कम्बन ने सभी राम-कथाओं से सर्वथा भिन्न अत्यन्त मर्यादित ढंग से प्रस्तुत किया है। राम, शूर्पणखा का हृदय से स्वागत करते हुए कहते हैं—हे लक्ष्मी-सदृश देवी! हमारे पुण्य से ही तुम्हारा आगमन हुआ। वे उससे उसका परिचय पूछते

१. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, शूर्पणखैप्पड़लम् ३/६/२२।
२. उपर्युक्त ३/६/२२,२४।
३. उपर्युक्त ३/६/२२।
४. उपर्युक्त ३/६/२५-२७।
५. उपर्युक्त ३/६/२८।
६. उपर्युक्त ३/६/२९।
७. उपर्युक्त ३/८/३०।

हैं।[१] शूर्पणखा अपना परिचय इस प्रकार देती है—ब्रह्मा के पुत्र पुलस्त्य के कुमार विश्रवसु की मैं पुत्री हूँ, त्रिपुरदाह करने वाले, शिवजी के मित्र कुबेर की भगिनी हूँ, दिग्गजों का बल चूर-चूर करने वाले, कैलाश पर्वत को उठाने वाले तथा त्रिलोक का शासन करने वाले रावण की कनिष्ठा हूँ। मैं कामवल्लि कहलाती हूँ।[२] सम्भवत: अपनी बात को अत्यधिक प्रभावशाली बनाने के उद्देश्य से शूर्पणखा ने राम को अपना परिचय इस भाँति दिया है।

राम शूर्पणखा के आगमन का कारण अत्यन्त सहज भाव से पूछते हैं—हे सुन्दरी! तुम्हारे यहाँ एकाकी आगमन का क्या प्रयोजन है? बताओ। यदि वह उचित होगा, तो मैं उसे करके तुम्हारा उपकार करूँगा।[३]

शूर्पणखा लाल-लाल रेखाओं से युक्त अनेक प्रकार की भंगिमाएँ प्रदर्शित करती हुई कान्तिमान काले रंगों तथा करवाल-सदृश नेत्रों एवं आभरणभूषित स्तनों से शोभित है।[४] वह राम से कहती है कि कुलीन स्त्रियाँ अपने हृदय के काम-भाव को स्वयं प्रकट नहीं करती हैं। मैं ऐसी हूँ कि मेरा कोई नहीं है। मैं क्या करूँ? काम नामक दुष्ट-अत्याचारी से तुम मेरी रक्षा करो।[५] वह अपने इस प्रस्ताव के अनुरोध एवं इसमें अपनी विवशता को सतर्क युक्तियुक्त सिद्ध करती है।

कम्बन की शूर्पणखा राम के सौन्दर्य को देखकर कामदेव के भ्रम में भ्रमित होने लगती है। कामदेव-सदृश दोनों भाइयों को देखकर उसे दो कामदेव के एक साथ होने का भ्रम एवं विस्मय होता है।[६]

शूर्पणखा अत्यन्त चतुर एवं कुछ हठी स्वभाव वाली है। नाना प्रकार के तर्क-कुतर्क द्वारा अपनी बात को न्याय-संगत सिद्ध करने का प्रयास करती है। सीता के अद्वितीय सौन्दर्य को देखकर वह उनके अतुलित रूप-लावण्य की प्रशंसा किये बिना नहीं रह पाती। वह सोचती है कि जब मैं इस रमणी के सौन्दर्य पर मुग्ध हो रही हूँ, तो उसे देखने वाले पुरुषों की क्या स्थिति होगी?[७]

सीता के अतुलित सौन्दर्य से उसके मन में ईर्ष्या का भाव उत्पन्न होता है, जो बाद में क्रोध का रूप धारण करता है। यही काम-क्रोध इसकी विरूपता का

---

१. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, शूर्पणखैप्पड़ळम्, ३/६/३१।
२. उपर्युक्त ३/६/३२।
३. उपर्युक्त ३/६/३५-३७।
४. उपर्युक्त ३/६/३९।
५. उपर्युक्त ३/६/३८।
६. उपर्युक्त ३/६/५।
७. उपर्युक्त ३/६, ५२-५४।

कारण बनता है। वह राम के प्रति अपने प्रेम-पथ में, सीता को बाधक मानकर उन्हें अन्यत्र ले जाने का प्रयत्न करती है। इसी समय लक्ष्मण द्वारा उसके नाक, कान तथा कठोर स्तनाग्र आदि एक-एक करके काट दिये जाते हैं।[1] इसके पश्चात् के चित्रण में कवि ने शूर्पणखा का चरित्रांकन एक सहज स्वभाव वाली नारी के रूप में किया है। वह अपने बन्धु-बान्धवों द्वारा इसके लिए राम को दण्डित कराने की धमकी देते हुए विलाप करने लगती है।[2]

कम्बन ने अन्य राम-कथाओं से सर्वथा भिन्न तथा अत्यन्त रोचक रूप में शूर्पणखा की कथा तथा उसका चरित्रांकन किया है—राम प्रातःकालीन सन्ध्या करके नदी तट से लौट रहे थे, यह देखकर शूर्पणखा उनके चरणों में गिरकर निवेदन करती है—आप के सुदर्शन शरीर से प्रेम करने के कारण, मैं इस दुर्दशा को प्राप्त हुई हूँ। कम्बन की शूर्पणखा त्रिया-चरित्र करते हुए अपने अन्तिम अस्त्र से राम को प्रभावित करने के लिए, रोने लगती है।[3]

विरूप होने—नाक-कान, स्तनाग्र कटने के कारण, अपनी कुरूपता को अपने लिए लाभप्रद सिद्ध करने के लिए सशक्त तर्क प्रस्तुत करती है। विरूप होने के बाद भी वह अपने विवाह के लिए राम से सप्रेम, निवेदन करती हुई तरह-तरह की प्रलोभन देती है, जिससे वे विवाहार्थ तैयार हो जायँ।[4] इसमें उसकी कामाग्नि का भयंकर रूप मिलता है, तो उसकी चतुराई, वाक्-चातुर्य, कूटनीति भी स्पष्ट परिलक्षित होती है।

राम द्वारा शूर्पणखा के सभी प्रस्ताव अस्वीकार कर दिये जाते हैं। वह अपने को पराजित होती हुई देखकर, एक ऐसा प्रस्ताव रखती है, जो कम्ब-रामायण के अतिरिक्त राम-कथा-विषयक किसी भी राम-काव्य में नहीं मिलता—शूर्पणखा राम से कहती है कि तुम सीता को न त्यागो, तो भी मैं क्या तुम्हारे लिए भार हो जाऊँगी ?[5] यहाँ पर शूर्पणखा नारी-सुलभ लज्जा-संकोच का परित्याग करके अपने नग्न एवं निर्लज्ज रूप में हमारे सम्मुख आती है, जिससे उसका वास्तविक राक्षसी रूप एवं स्वभाव प्रकट होता है। जब वह खर-दूषण के वधोपरान्त अपनी दुर्गति की कथा-व्यथा को लंका में रावण से निवेदन करने पहुँचती है, तो लंका-वासियों के

---

१. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, शूर्पणखैप्पड़ळम् ३/६/८६।
२. उपर्युक्त ३/६/८८-१०५।
३. उपर्युक्त ३/६/१०७।
४. उपर्युक्त ३/६/१२२-१२३।
५. उपर्युक्त ३/६/१३१।

मन में विद्रूप शूर्पणखा को देखकर अमंगल एवं अनिष्ट होने की आशंका उत्पन्न होती है।[१] इससे भी इसका दुष्ट स्वभाव ज्ञात होता है।

रामचरितमानस में शूर्पणखा

रामचरितमानस में शूर्पणखा का सर्वप्रथम उल्लेख अरण्यकाण्ड में प्राप्त होता है।[२] रावण की बहन, जिसका प्रथम परिचय ही नागिन-सदृश भयानक तथा दुष्ट हृदया के रूप में तुलसीदास ने दिया है। शूर्पणखा पंचवटी मे कुमारयुगल को देखकर 'बिकल' हो जाती है।[३] वह अत्यन्त सुन्दर रूप धारण करके राम के समीप पहुँच कर अपने विवाह का प्रस्ताव करते हुए कहती है कि "तुम्ह सम पुरुष न मो सम नारी। यह संजोग बिधि रचा बिचारी।"[४] अपने अनुकूल पुरुष' न पाने के कारण अब तक मैं "रहिउँ कुमारी"।[५] तुम्हारे सौन्दर्य से आकृष्ट होकर, अब विवाह करने की कुछ-कुछ इच्छा उत्पन्न हुई है।

राम, शूर्पणखा के प्रस्ताव पर सीता की ओर देखकर कहते हैं कि "अहइ कुमार मोर लघु भ्राता।" यह सुनकर शूर्पणखा लक्ष्मण के पास जाती है।[६] लक्ष्मण उसे राम के पास भेजते हैं। राम, शूर्पणखा को पुनः लक्ष्मण के पास भेजते हैं, जो उसको पुनः राम के पास भेजते हैं।[७] इस प्रकार फुटबाल की तरह एक पक्ष से दूसरे पक्ष की ओर फेंकी जाने वाली शूर्पणखा ने क्रोधित होकर राम के समीप पहुँच कर, उसके समक्ष अपना भयंकर रूप प्रकट किया। समीपवर्ती सीता को भयाक्रान्त देखकर, राम ने "अनुज सन सयन बुझाई" कहा। राम के संकेतानुसार लक्ष्मण ने उसे "नाक कान बिनु कीन्हि"।[८]

शूर्पणखा अपने भाई खर-दूषण के पास जाकर यह वृत्तान्त सुनाती है। बहन का दुःख सुनकर प्रतिशोध एवं उन्हें इसके लिए दण्ड देने हेतु, वे राम के पास जाते हैं, जहाँ ये दोनों भाई राम से युद्ध में मारे जाते हैं। इसके पश्चात् शूर्पणखा अपने

---

१. कम्ब-रामायण, ३/१०/२५-३०।
२. रामचरितमानस ३/१७/२।
३. उपर्युक्त, ३/१७/२।
४. उपर्युक्त, ३/१७/४।
५. उपर्युक्त, ३/१७/२-५।
६. उपर्युक्त, ३/१७/५-९।
७. उपर्युक्त, ३/१७/६-८।
८. उपर्युक्त, ३/१७/९-१०।

भाई रावण के पास जाकर विविध प्रकार से प्रशंसा करके, अपने इस अपमान का बदला लेने के लिए, उसको तैयार करती है।[1]

कम्ब-रामायण में शूर्पणखा का विस्तृत चित्रण मिलता है, किन्तु रामचरितमानस में यह उतना ही संक्षिप्त रूप में है, जो कथा-वर्णन में दोनों कवियों की शैलीगत-भिन्नता को प्रकट करता है। कम्बन का वर्णन अनेक नवीन तथा भिन्न घटनाओं के कारण विस्तृत है। कम्बन का यह वर्णन अत्यन्त मनोवैज्ञानिक होने के कारण स्वाभाविक प्रतीत होता है। इसकी स्वाभाविकता पाठक को ऊबने नहीं देती है, अपितु अब क्या घटित होने वाला है, पाठक-दर्शक वर्ग में इस जिज्ञासा को भी बनाये रहती है, जिससे उसे इस विस्तार का भान नहीं हो पाता। रामचरितमानस की शूर्पणखा कुछ अधिक नीतिज्ञा है, जो तुलसीदास के मर्यादा पुरुषोत्तम को भी असत्यकथन के लिए विवश करती है,[2] जो रावण के सम्मुख अपनी करुण-कथा को इतनी कुशलतापूर्वक प्रस्तुत करती है कि वह तत्काल राम से इस अपमान का बदला लेने हेतु उद्यत हो जाता है।

कम्ब-रामायण में शूर्पणखा राम से एकान्त में विवाह का प्रस्ताव करती है। इस कारण कम्बन के राम, उसे लक्ष्मण के पास भेजने के तुलसीदास-सदृश परिहास से सहज ही बच जाते हैं। कम्ब-रामायण में लक्ष्मण परिस्थितिवश विवश होकर शूर्पणखा का अंग-भंग करते हैं। राम के संकेत अथवा आदेश के अनुसार नहीं। इस प्रकार कम्बन के राम-लक्ष्मण दोनों ही स्त्री-विरूपण-लांछन से परे हैं। इस चित्रण में कम्बन की प्रतिभा का लोहा मानना पड़ता है। तुलसीदास ने ऐसा कोई प्रयत्न नहीं किया है।

रामचरितमानस में आलोच्यकवि ने इसी भाँति शूर्पणखा के चरित्र को रेखांकित किया है।

निष्कर्ष

शूर्पणखा की राम के प्रति आसक्ति का चित्रण आलोच्यकविद्वय ने किया है। इनके चित्रण में प्रमुख अन्तर यह है कि कम्ब-रामायण की शूर्पणखा का चित्रण कुछ अधिक यथार्थ प्रतीत होता है। कम्ब-रामायण में उसकी कामासक्ति का वर्णन विस्तृत है, जबकि रामचरितमानस में शूर्पणखा की इस उच्छृङ्खलता को कम्ब-रामायण की अपेक्षा संयत करने का प्रयास किया गया है। आलोच्यग्रन्थद्वय में

---

१. रामचरितमानस, छन्द—३/२०/३-४-५, २१ (ख)।
२. उपर्युक्त, ३/१७/६।

शूर्पणखा सीता के प्रति ईर्ष्या रखने वाली, उनके प्रति दुर्व्यवहार करने वाली, भयंकर दुष्टा-राक्षसी के रूप में चित्रित हुई है, तथापि कविद्वय के इस वर्णन में पर्याप्त भिन्नता पायी जाती है।

कम्बन ने शूर्पणखा का चित्रण अत्यन्त विस्तृत रूप में किया है। ऐसा वर्णन अकारण नहीं हुआ है। राम का लक्ष्य दुष्टों का विनाश करना है। इस विनाश का बीजारोपण शूर्पणखा द्वारा होता है। अतः इस महाकाव्य एवं महायुद्ध के अनुरूप इसके प्रारम्भिक घटनाओं के उल्लेख को विस्तारपूर्वक वर्णित करके इसे अधिक स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करना—इसमें कवि का लक्ष्य प्रतीत होता है। इसे कवि ने इस पड़ळम् के प्रथम पद्य में ही स्पष्ट कर दिया है।[१]

तुलसीदास ने शूर्पणखा का चित्रण अत्यन्त संक्षिप्त रूप में किया है। फलतः वह पाठकों-दर्शकों पर कम्ब-रामायण सदृश अस्थायी प्रभाव बनाने में सफल प्रतीत नहीं होती, क्योंकि तुलसीदास ने इसे संक्षिप्त और सामान्य रूप में वर्णित किया है। फलतः पाठकों और दर्शकों के मन-मस्तिष्क पर वह नवीनता के साथ कुछ विचारणीय प्रभाव नहीं डालता है, किन्तु घटनाओं की भिन्नता सरल, सहज, कौतूहलवर्धक-चित्रण आदि के कारण कम्बन की शूर्पणखा पाठकों के मन-मस्तिष्क पर न केवल छा जाती है, अपितु एक अमिट प्रभाव छोड़ने में अपेक्षतया अधिक सफल प्रतीत होती है।

कम्बन की शूर्पणखा एक सामान्य नारी के रूप में चित्रित होकर, सौन्दर्य की उपासिका युवती, अपने अभीष्ट को किसी भी प्रकार से सिद्ध करने में निपुण, अपने तर्कों द्वारा अपने कथन की सत्यता सिद्ध करने में प्रवीण-प्रतिपक्षी को अपने तर्कों द्वारा मूक बनाने में कुशल एवं अत्यन्त वाक्-पटु है,[२] तथापि वह नारी सुलभ-सहज गुणों-ईर्ष्या मानसिक दुर्बलताओं—'क्षणे रुष्टा क्षणे तुष्टा' आदि से भी युक्ता है। कम्बन के इस चित्रण पर कुछ दाक्षिणात्य-संस्कृति, अलंकरण आदि का प्रभाव प्रतीत होता है।[३] कम्ब-रामायण के चित्रण में कुछ प्रसंग रामचरितमानस से पूर्णतः भिन्न हैं। यथा—कम्बन की शूर्पणखा का राम के सौन्दर्य को देखकर[४] कामदेव के

---

१. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड।

२. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड-शूर्पणखैप्पड़ळम् ३/६/६८-८१।

३. उपर्युक्त ३/६/२७।

४. उपर्युक्त ३/३/६।

भ्रम में पड़ना, राम के पास विलम्ब से आने का कारण मुनियों की सेवा में अपनी व्यस्तता बताना,[१] राम द्वारा शूर्पणखा के विवाह-प्रस्ताव को जाति-परम्परा के प्रतिकूल बताना,[२] शूर्पणखा द्वारा बुद्धिमत्तापूर्वक यह सिद्ध किया जाना कि उसका विवाह क्षत्रिय से भी हो सकता है।[३] राम द्वारा उसे—हे सुन्दरी! हे स्त्रीरत्न! आदि किया सम्बोधनों से सम्बोधित जाना आदि[४] वर्णन रामचरितमानस से भिन्न है। शूर्पणखा को उसके भाई रावण अथवा कुबेर में से किसी द्वारा भी प्रदान करने पर राम द्वारा उसे स्वीकार करने का आश्वासन देना,[५] शूर्पणखा द्वारा अत्यन्त चतुराई से राम से गान्धर्व-विवाह का प्रस्ताव करना[६] तथा इस विवाह से भावी विविध लाभों को विस्तारपूर्वक बताना,[७] राम-शूर्पणखा वार्ता के समय सीता का प्रवेश[८], शूर्पणखा से भयभीता सीता का राम से लिपट जाना,[९] शूर्पणखा का पहले दिन लौट जाना,[१०] उसका अत्यन्त सहज स्त्रियोचित विस्तृत विरह-वर्णन,[११] काम से पीड़ित होकर अपनी विरहाग्नि के कम करने हेतु शूर्पणखा द्वारा अपने पुष्ट स्तनों पर शीतल हिम-खण्डों का रखा जाना, जिनका तप्त पत्थर पर रखे गये मक्खन-सदृश पिघल जाना,[१२] शूर्पणखा द्वारा सीता को पकड़ने के लिए उनका पीछा करना,[१३] सीतासहित लक्ष्मण को भी उठाकर आकाश मार्ग से उड़ जाने का प्रयत्न,[१४] लक्ष्मण द्वारा शूर्पणखा के नाक-कान के अतिरिक्त उसके कठोर स्तनाग्र को एक-एक कर काटना,[१५] शूर्पणखा

---

१. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, 'शूर्पणखैप्पड़ळम्' ३/६/४१।
२. उपर्युक्त ३/६/४२।
३. उपर्युक्त ३/६/४३।
४. उपर्युक्त ३/६/४४, ४६।
५. उपर्युक्त ३/६/४६।
६. उपर्युक्त ३/६/४७।
७. उपर्युक्त ३/६/४८-४९।
८. उपर्युक्त ३/६/५०।
९. उपर्युक्त ३/६/५९।
१०. उपर्युक्त ३/६/६४।
११. उपर्युक्त ३/६/६५-८२।
१२. उपर्युक्त ३/६/७१-८२।
१३. उपर्युक्त ३/६/८५।
१४. उपर्युक्त ३/६/८७।
१५. उपर्युक्त ३/६/८७।

द्वारा राम से अपना कष्ट निवेदन करना, कष्ट निवेदन के समय ही राम के सम्मुख शूर्पणखा का गिरना,[1] पुनः शूर्पणखा-राम का रोचक वार्तालाप[2], नाक-कान, स्तनाग्र आदि कटने के उपरान्त भी शूर्पणखा का विवाह करने हेतु, राम से पुनः निवेदन करना, अपने पूर्व रूप को पुनः सद्यः प्राप्त करने में अपने को सक्षम बताना, नाक-कान कटने को भी अत्यन्त कुशलतापूर्वक लाभकारी सिद्ध करना, विवाह के लिए विविध प्रलोभनों से राम को लुभाने का प्रयत्न,[3] सीता के रहते हुए भी राम से विवाह के लिए अपनी सहमति प्रदान करना[4] आदि आदि। इसके अतिरिक्त भी अन्य अनेक वर्णन ऐसे हैं, जो रामचरितमानस के वर्णन से सर्वथा भिन्न एवं रोचक रूप में कम्ब-रामायण में पाये जाते हैं।

रामचरितमानस के वर्णन से भिन्न कम्ब-रामायण में शूर्पणखा के नाक-कान के अतिरिक्त उसके स्तनाग्र के भी काटे जाने का वर्णन अशोभनीय प्रतीत होता है। तुलसीदास द्वारा शूर्पणखा के माध्यम से सम्पूर्ण नारी जाति पर लगाये जाने वाले आरोप मर्यादा-सम्मत प्रतीत नहीं होते।[5] शूर्पणखा का मर्यादा विरुद्ध तथा असंयमित आचरण ही कवि को यह कहने के लिए सम्भवतः विवश करता है, क्योंकि मर्यादा की यवनिका हटाते ही पूज्या नारी भी तुलसीदास की दृष्टि में निन्दित हो जाती है।

इस प्रकार आलोच्यग्रन्थद्वय में रावण को अपनी करुण-कथा-व्यथा सुनाने के पश्चात् शूर्पणखा घटनाओं के गतिशील फलक में अदृश्य हो जाती है। पुनः इसका उल्लेख आलोच्यग्रन्थद्वय में नहीं मिलता। राम के अवतार लेने के लक्ष्य को पूर्ण करने का मार्ग प्रशस्त करने वाली तथा सम्पूर्ण रावण-परिवार के विनाश का बीज वपन करने वाली, इस सूत्रधार को आलोच्यकविद्वय पूर्णतया भूल-सा गये हैं अथवा उपेक्षित कर दिये हैं। इसी रूप में कविद्वय ने शूर्पणखा के चरित्र को आलोच्यग्रन्थद्वय में रेखांकित किया है।

---

१. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, शूर्पणखैप्पड़ळम्, ३/६/१०८।
२. उपर्युक्त ३/६/११० से ११२।
३. उपर्युक्त ३/६/११९-१२६।
४. उपर्युक्त, ३/६/१३१।
५. "भ्राता पिता पुत्र उरगारी। पुरुष मनोहर निरखत नारी॥
होइ बिकल सक मनहि न रोकी। जिमि रबिमनि द्रव रबिहि बिलोकी॥
—रामचरितमानस, ३/१७/३।

शबरी

वैदिक वाङ्मय में 'शबर' (शब धातु + अरन प्रत्यय के योग से बना है, वैदिक तत्सम, जंगली या असभ्य जाति) शब्द का उल्लेख प्राप्त होता है। 'शबर' एक जंगली जाति का नाम था, जिसे ऐतरेय 'ब्राह्मण'[१] में दस्युओं के रूप में आह्नों, पुलिन्दों, मूतिवों और पुण्ड्रों के साथ वर्गीकृत किया गया है, किन्तु उत्तर-वैदिक काल के अन्त तथा वाल्मीकि-रामायण-काल में यह एक जंगली जाति थी, जो जंगलों में रहकर जीविका निर्वाह करती थी। ये जंगली जातियाँ छोटे-छोटे कबीले बनाकर जंगलों में रहती थीं। आधुनिक काल में शबरों का प्रतिनिधित्व मध्य प्रदेश की पहाड़ियों में निवास करने वाली इसी नाम की एक जाति करती है।[२]

'शबर' रामायण-काल की एक आर्येतर जाति थी, यद्यपि संख्या की दृष्टि से ये अत्यन्त अल्प थे। इस जाति के लोग प्रायः शिकारी एवं बहेलिये हुआ करते थे। सांसारिक प्रपंच से दूर अपनी परिधि में ही आनन्दित रहने वाली, विन्ध्य के वन में सुखपूर्वक निवास करने वाली, शबर जाति के एक परिवार में एक कन्या उत्पन्न हुई। इस सम्बन्ध में एक किम्वदन्ती यह भी है कि एक महात्मा ने इस कन्या को श्रमणा नाम दिया, जो बड़ी होने पर 'शबरी' कहलायी जिसकी राम में अपार भक्ति थी। रामायण में शबर जाति का परिचय 'शबरी' के माध्यम से ही प्राप्त होता है। शबरी की कथा एक ऐसी अनार्य जाति की कथा है, जो आर्यों की संस्कृति से पूर्णतः प्रभावित हो चुकी थी, जिसकी पुष्टि अपने आश्रम में शबरी द्वारा किये गये राम-लक्ष्मण के आतिथ्य सत्कार के माध्यम से होती है।

रामकथा साहित्य में शबरी रामायण के माध्यम से हमारे सम्मुख आती है। सर्वप्रथम 'शबरी-प्रसंग' हमें आदिकवि के रामायण में मिलता है, यद्यपि 'शबरी-प्रसंग' रामायण में अत्यन्त संक्षिप्त रूप में वर्णित है, तथापि अर्थवत्ता एवं भावमयता की दृष्टि से इसका महत्त्व असाधारण है। शबरी की कथा ऐसी कथा है, जो रामायण के शीर्षस्थ पात्रों एवं चरित्रों के देदीप्यमान दिव्यालोक में भी अपनी पहिचान बनाये रखती है। रामायण में प्रयुक्त अन्य साधारण पात्र अपनी प्रयुक्ति के उपरान्त रचना के गतिशील पटल पर प्रायः विलीन हो जाते हैं, किन्तु वाल्मीकि के द्वारा शबरी रामकथा में अत्यन्त उच्च भाव-भूमि प्राप्त किये हुए है। राम के उज्ज्वल चरित्र की शुभ्र आभा से सम्पृक्त होने के कारण शबरी का

---

१. ७/१८/२ शंखायन श्रौतसूत्र १५/२६/६ तुलना कीजिए मुहर : संस्कृत टेक्टस्ट्स १/४८३।

२. एस० सी० विश्वनाथ : "रेशियल सिंथेसिस आफ हिन्दू कल्चर", पृष्ठ ८६।

चरित्र और रमणीय-स्मरणीय बन गया है, जो एक ओर भक्तों के लिए प्रेरणा-भूमि है, तो दूसरी ओर साधकों के लिए साधना भूमि। वाल्मीकि से लेकर आज तक कवि-कोविदों द्वारा 'शबरी' पर विविध प्रकार की रचनाओं—नाटकों, गीति-काव्यों—खण्ड काव्यों आदि का प्रणयन हुआ है। वाल्मीकि की 'शबरी' अत्यन्त उच्च भाव-भूमि प्राप्त किये हुए है, किन्तु आज सम्पूर्ण भारतवर्ष में जनसामान्य में शबरी की कथा—राम को सप्रेम जूठा बेर खिलाने और राम द्वारा उसे प्रेमपूर्वक खाने तक सीमित है, लेकिन कुछ भाषाओं के साहित्य में बेर के वर्णन के स्थान पर जूठा फल खिलाने का भी वर्णन मिलता है। अच्छे-अच्छे कथा-वाचक, पण्डित, मानस-ज्ञाता, विद्वान् भी इसी भाव की पुष्टि कर रहे हैं। आज भी लोक-कथाओं, राम-लीलाओं, नवटंकियों, नाटकों द्वारा यही प्रचारित हो रहा है, जबकि रामकथा के प्रामाणिक ग्रन्थों में जंगली 'फल-मूल, अमृत के समान दिव्यफल, सुरस कन्द-मूल' आदि का ही उल्लेख है। बेर-फल' का उल्लेख रामकथा के किसी भी प्रामाणिक-प्राचीन ग्रन्थ में नहीं है। आदिकवि के रामायण से निःसृत होने वाली 'शबरी-कथा' में जूठे फल या बेर खिलाने का इतना व्यापक प्रचार क्यों हुआ? शबरी की कथा को 'इस रूप में' जनप्रिय बनाने का प्रयोजन क्या हो सकता है? क्या इस प्रचार के पीछे समाज-सुधार या कोई सामाजिक विचारधारा कार्य कर रही है? अथवा इसमें कोई अन्य गूढ़ रहस्य भी हो सकता है? यह अपने-आप में अनुसन्धान का एक विषय है। इस प्रसंग पर हम सर्वप्रथम आदिकाव्य वाल्मीकि-रामायण से विचार करना चाहेंगे—

संस्कृत साहित्य जैसे—महाभारत, भागवत तथा कुछ 'अन्य पुराणों'[१] में भी शबरी का उल्लेख नहीं मिलता। 'शबरी-प्रसंग' सर्वप्रथम वाल्मीकि-रामायण में तथा इसके पश्चात् 'कुछ पुराणों'[२] में मिलता है। 'रामायण' में शबरी का चित्रांकन एक तपोनिष्ठा के रूप में किया गया है। वाल्मीकि की शबरी सिद्धा, धर्मपरायणा, तपस्विनी, सिद्धों द्वारा सम्मानित और धर्मानुष्ठान में निरत रहने वाली है। रामायण में शबरी की कथा इस प्रकार वर्णित है—शबरी सिद्धा तपस्विनी थी। उन दोनों भाइयों को आश्रम पर आया देख, वह हाथ जोड़कर खड़ी हो गयी तथा उसने राम-लक्ष्मण के चरणों में प्रणाम किया।[३] पुनः पाद्य, अर्घ्य और आचमन आदि सब सामग्री समर्पित किया और विधिवत् उनका सत्कार किया।[४]

१. वामन, ब्रह्म, मत्स्य०, विष्णु०, कूर्म०।
२. पद्मपुराण, ब्रह्माण्डपुराण (अध्यात्मरामायण-खिल-अंश) आदि में।
३. वाल्मीकि-रामायण, ३/७४/६।
४. उपर्युक्त, ३/७४/७।

महर्षि मतंग के निर्देशों को सुनाते हुए शबरी ने कहा—"धर्मज्ञ महाभाग्य महर्षि मतंग ने जाते समय (दिव्य लोक को) मुझसे कहा था कि तेरे इस परम पवित्र आश्रम पर राम पधारेंगे और लक्ष्मण के साथ तेरे अतिथि होंगे। तुम उनका यथावत् सत्कार करना....। अतः पुरुषसिंह ! मैंने आपके लिए पम्पातट पर उत्पन्न होने वाले विविध वन्य फल-मूलों का संचय किया है।"[1] रामायण में हमें जूठे बेर खिलाने का उल्लेख नहीं मिलता है, अपितु इसमें शबरी राम-लक्ष्मण के लिए विविध वन्य फल-मूल ही प्रस्तुत करती चित्रित हुई है।

अध्यात्मरामायण (लगभग १३००-१४०० ई०) में शबरी का यह प्रसंग इस प्रकार वर्णित है—"जो अमृत के समान दिव्यफल उसने (शबरी) राम के लिए एकत्र कर रखे थे, वे हर्ष से लेकर भक्तिपूर्वक उन्हें दिये और उनके चरण-कमलों का चन्दनयुक्त सुगन्धित पुष्पों से पूजन किया।"[2] जूठे फल अथवा बेर खिलाने का वर्णन इस ग्रन्थ में भी नहीं है।

किन्तु संस्कृत साहित्य के पद्मपुराण (लगभग ११००-१२०० ई०) में अपने पूर्व के कथानकों से सर्वथा भिन्न सर्वप्रथम यह प्रसंग इस प्रकार वर्णित है—

'फलानि च सुपक्वानि मूलानि मधुराणि च।
स्वयमास्वाद्य माधुर्यं परीक्ष्य परिभक्ष्य च।
पश्चान्निवेदयामास राघवाभ्यां दृढ़व्रता।
फलान्यास्वाद्य काकुत्स्थस्तस्यै मुक्तिं परां ददौ।'[3]

अर्थात् अपने व्रत में दृढ़ में रहने वाली शबरी स्वयं आस्वादन करके, उनकी मधुरता की परीक्षा करने के पश्चात् सुपक्व फलों और मधुर कन्द-मूलों को राम-लक्ष्मण के लिए निवेदन किये। राघव ने फलों को ग्रहण कर उसे परम मुक्ति प्रदान की। इस प्रकार पद्मपुराण में चखकर फल खिलाने का सर्वप्रथम उल्लेख प्राप्त होता है, किन्तु यहाँ पर यह भी फलों में 'बेर' फल विशेष का उल्लेख नहीं है।

दक्षिण भारत-मुख्य रूप से तमिलनाडु में भी जनसामान्य में यही धारणा है कि शबरी ने राम को जूठे बेर खिलाये थे, किन्तु आचार्यों-मनीषियों आदि में ऐसी धारणा नहीं है, अपितु वे इस विषय में स्पष्ट हैं कि शबरी ने राम को फल-कन्द आदि खिलाये थे। तमिल भाषा एवं साहित्य में रामकथा से सम्बन्धित सर्वाधिक

१. वाल्मीकि-रामायण, ३/७४/१६-१७½।
२. अध्यात्मरामायण, ३/१०/८-९।
३. श्रीमद्वाल्मीकिरामायण, 'द्वितीयभाग' पर तनिश्लोषी टीका, पृष्ठ ४२४।

जनप्रिय एवं सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य कम्बन प्रणीत कम्ब-रामायण है। कम्ब-रामायण (लगभग १२वीं शताब्दी) के अरण्यकाण्ड के बारहवें-,शबरिरिप्पुनीङ्गुपड़ळम्' में यह कथा इस प्रकार वर्णित है—"मतंग आश्रम में शबरी ने राम की स्तुत की; फिर उसने बड़े प्रेम से एकत्र कर रखे हुए फल-कन्द आदि लाकर उन (राम-लक्ष्मण) को भोजन कराया।"[1] इस महाकाव्य में भी जूठे बेर या जूठे फल का उल्लेख नहीं है, अपितु यहाँ पर भी शबरी 'फल-कन्द' ही राम के लिए लाती है।

तेलुगु भाषी राज्य आन्ध्र-प्रदेश में अगर किसी अतिथि को कुछ जूठा खिला दिया जाय, तो वे उसे अपना अनादर न मानकर सानन्द चर्चा करते हैं कि हम शबरी के जूठे बेर खाकर आ रहे हैं। आज तेलुगु जनता में यही धारणा है कि शबरी ने राम को जूठे बेर खिलाये थे, किन्तु तेलुगु भाषा के प्राचीनतम रामकाव्य श्रीरंगनाथ रामायण (लगभग १२००-१३०० ई०) में यह कथा इस प्रकार मिलती है—

"... ऐसा कहकर उन सभी महत्त्वपूर्ण बातों को बताकर प्रेम से वनमूलफल लाकर, देने पर (उन्हें) खाकर, आनन्द से राम वहाँ उस रात को ठहर गये।[2] इस प्रकार श्रीरंगनाथ रामायण में भी राम को वनमूलफल निवेदित किये जाते हैं तथा जूठे फल अथवा बेर खिलाने का उल्लेख इसमें भी नहीं है।

मोल्ल-रामायण (लगभग १३२०-१४०० ई०)[3] में यह कथा इस प्रकार वर्णित है—"प्रणाम कर, भूमिजाकान्त की अत्यधिक सद्भक्ति से शबरी ने पूजा की।"[4] कन्दमूलफल या जूठे फल या बेर खिलाने का उल्लेख इसमें नहीं मिलता, किन्तु अठारहवीं शताब्दी में प्राप्त तेलुगु साहित्य के 'दाशरथि शतकम्' में यह प्रसंग

---

१. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, शबरिरिप्पुनीङ्गुपड़ळम्।

२. श्रीरंगनाथ रामायणम्, अरण्यकाण्ड, शबरी का सत्कार।

३. डॉ० कामिल बुल्के ने मोल्ल-रामायण को १५००-१६०० ई० (रामकथा, तृतीय संस्करण, पृष्ठ ७४६) के बीच की रचना माना है, किन्तु मोल्ल रामायण इसके पूर्व की रचना प्रतीत होती है। भुवनवाणीट्रस्ट, लखनऊ से प्रकाशित मोल्ल-रामायण के प्रकाशकीय वक्तव्य में मोल्ल-रामायण की लेखिका का जीवन-काल पुष्ट प्रमाणों के आधार पर १३२०-१४०० ई० माना गया है (देखिए पृष्ठ १६)। इस आधार पर मोल्ल-रामायण को चौदहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की रचना मानना अधिक तर्कसंगत प्रतीत होता है, न कि १५००-१६०० ई० के बीच का।

४. मोल्ल-रामायण, अरण्यकाण्ड, 'शबरी की मधुर भक्ति, पृष्ठ १०३।

इस प्रकार वर्णित है—"शबरी ने कितना पुण्य किया होगा, जिसके द्वारा जूठे किये हुए फल खिलाने पर तुमने (राम) मोक्ष दे दिया।"[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि सत्तरहवीं-अठारहवीं शताब्दी तक पहुँचते-पहुँचते तेलुगु भाषा के रामकथा साहित्य में जूठे फल खिलाने का प्रसंग प्रचलित हो गया था।

भारतवर्ष की प्रादेशिक आर्य भाषाओं में प्राचीनतम रामकथा-साहित्य; असमिया भाषा का 'माधव कन्दली-रामायण' है। माधव कन्दली-रामायण (१३००-१४०० ई०) में शबरी और राम के मिलन का प्रसंग इस प्रकार वर्णित है—"चम्पा सरोवर में एक सिद्धा बैठी हुई थी। उसका नाम शबरी था, वह बहुत वृद्धा थी। उसने राम-लक्ष्मण को आया जान, नारायण मानकर दोनों की चरण-वन्दना की। उसने उन्हें और भी कथाएँ सुनाईं और[2]..."। माधव कन्दली-रामायण के कथानक में शबरी द्वारा राम को कुछ भी भेंट किये जाने का उल्लेख नहीं है।

कृत्तिवास रामायण (लगभग १४००-१५०० ई०) बँगला-कवि कृत्तिवास प्रणीत है। इस प्रसंग की कथा इसमें इस प्रकार उल्लिखित है—"...राम को देखकर शबरी इतनी आनन्दित हुई कि वह अपने प्रेमाश्रुओं को रोक न पायी। उन्हें देखकर शबरी आनन्दित हुई और उनकी चरण-वन्दना करने के उपरान्त राम की आज्ञानुसार उनकी सेवा की। सेवा-वन्दना के पश्चात् शबरी ने मोक्ष प्राप्त करने के लिए अपनी इच्छा व्यक्त की और राम उसे आशीर्वाद देते हैं।"[3] इसमें इस प्रसंग से सम्बन्धित यही वर्णन प्राप्त होता है। जूठे फल या बेर का वर्णन कृत्तिवास रामायण में नहीं मिलता।

अध्यातमरामायण-मलयालम भाषा के इस रामकाव्य में, यह प्रसंग इस प्रकार मिलता है—"... आनन्दाश्रु से पूर्ण नेत्र वाली उसने (शबरी) आनन्द से अर्घ्य-आसन आदि देकर उनका स्वागत किया और (राम के) पादतीर्थ से अपने को अभिषिक्त करके उन्हें खाने के लिए फल-मूल दिये[4]—।" यहाँ भी जूठे बेर या किसी फल-विशेष के नाम का उल्लेख नहीं है।

---

१. दाशरथि शतकम्, रामदास, पद्य संख्या ९८।

२. माधव कन्दली रामायण, अरण्यकाण्ड; श्रीराम-लक्ष्मण का चम्पा-सरोवर-दर्शन, पृष्ठ ४२०।

३. कृत्तिवास रामायण, अरण्यकाण्ड, कबन्ध और शबरी का स्वर्ग गमन, पृष्ठ १६८।

४. अध्यात्म रामायण, शबरी के आश्रम में प्रवेश. पृष्ठ २६७।

मराठी भाषा के राम-काव्य 'श्री राम विजय' (अठारहवीं शताब्दी) में शबरी फल-मूल लाकर रघुनन्दन का श्रद्धा-भावपूर्वक पूजन करती।"[1] चित्रित हुई है। जूठे फल अथवा बेर का वर्णन इसमें नहीं मिलता, किन्तु श्रीराम विजय के वर्णन के प्रतिकूल आनन्दतनय कृत मराठी 'शवर्याख्यान' (अठारहवीं शताब्दी) में शबरी के जूठे फलों की चर्चा है।[2]

'ओड़िया बैदेहिश-विलास' में यह प्रसंग अत्यन्त रोचक ढंग से वर्णित है—"वह (शबरी) दिन-रात घूम कर सब आम खोज लाती थी और उनमें से चख-चख-कर स्वादिष्ट (जायकेदार) आमों को पहचान लेती तथा उन्हें छाँट-छाँटकर रखती थी। ̈ प्रभु के आश्रम में आने पर उसने प्रभु की ओर चुने हुए आम भोजनार्थ बढ़ा दिये। चराचर व्यापी श्रीराम ने शबरी के भक्ति के वश होकर शीघ्र ही उन्हीं आमों का भोजन किया। श्रीराम ने जिन आमों पर (शबरी के) दन्त-चिह्न नहीं थे; उन आमों को भूमि पर फेंक दिया। प्रभु ने कहा—इस आम पर दाँतों के चिह्न नहीं हैं। इसी कारण ये मेरे लिए अनुपयुक्त हैं।"[3] हम पाते हैं बहुत ही रोचक ढंग से जूठे फलों में 'आम' फल-विशेष का नामोल्लेख पहली बार इस ग्रन्थ में उपलब्ध होता है, किन्तु जूठे 'बेर' का वर्णन यहाँ पर भी नहीं आया है।

'गिरधर रामायण' (उन्नसवीं शताब्दी)—गुजराती भाषा का प्रसिद्ध राम-काव्य है। इसमें शबरी राम का पूजन करके रखे हुए फल लाकर उन्हें खाने को देती है। शीतल जल-फल, पुष्प-पत्र से उसने राम को प्रसन्न कर दिया।[4] इस रामकाव्य में भी फल देने का ही उल्लेख हुआ है, बेर का नहीं।

कन्नड भाषी राज्य कर्नाटक में भी जनसामान्य में यही प्रचलित है कि शबरी ने राम को जो फल दिये थे, वह उनके स्वाद की परीक्षा करके ही दिये थे, किन्तु कन्नड-साहित्य की रामकथा-विषयक रचनाओं में ऐसा वर्णन नहीं मिलता। कन्नड भाषा की रामकथा-विषयक रचनाओं में शबरी का यह प्रसंग इस प्रकार मिलता है—

'श्रीरामायणदर्शनम्' (१९३६-४९)—१९६७ के ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित आधुनिक कन्नड भाषा का एकमात्र महाकाव्य है। कन्नड भाषा के रामकाव्य-

---

१. श्रीराम विजय, श्रीधर स्वामी, अरण्यकाण्ड, पृष्ठ ५३०-५३१।
२. रामकथा, फादर कामिल बुल्के, पृष्ठ ४३१।
३. ओड़िया बैदेहिश-विलास, उपेन्द्र भंज, षडविश छान्द, पृष्ठ-४१४-४१५।
४. गिरधर रामायण, महाकवि गिरधर, अरण्यकाण्ड, श्रीराम-शबरी-भेंट, पृष्ठ-४८७-४८९।

परम्परा में यह अद्वितीय एवं सर्वश्रेष्ठ कृति है। के० वी० पुट्टप्पा के 'श्रीरामायण-दर्शनम्' में 'शबरिगादनु अतिथि दाशरथि' के अन्तर्गत शबरी विशेष रूप से भक्तिन नहीं, अपितु तपस्विनी और भगवान् की प्रतीक्षा करती हुई वृद्धमाता की तरह चित्रित की गयी है। इसमें राम के आतिथ्य के लिए वह फल मधु आदि रखती है।[१] राम उसके आश्रम में जाकर विश्राम करते हैं एवं उसकी सेवा स्वीकार करते हैं। के० वी० पुट्टप्पा की ही एक अन्य रचना 'जनप्रिय रामायण' में—"शबरी पम्पा सरोवर के तट पर उत्पन्न फलों को, जिन्हें वह एकत्र किये हुए थी, को स्वीकार करने के लिए राम से निवेदन करती है।"[२] इस प्रकार कन्नड-भाषा की इन दोनों ही लोकप्रिय रचनाओं में एक ही विचार व्यक्त हुआ है, जिसमें जूठे फल या बेर का वर्णन नहीं मिलता।

कर्नाटक सरकार की पाठ्य पुस्तक विभाग से प्रकाशित कन्नड़ भारती, फोर्थ बुक में वी० सीतारामाय्या की कविता—'शबरी' नामक काव्य-रचना में यह प्रसंग इस प्रकार मिलता है—"राम अपनी पूजा को स्वीकार कर लेंगे—ऐसा सोचते हुए शबरी राम के आगमन की प्रतीक्षा कर रही है।[३] जंगलों में घूम-घूम कर अच्छे फल-फूल वृक्षों से माँगते हुए; वह खिले हुए फल-फूलों का चयन करके और रस भरे स्वादिष्ट फलों को एकत्र करके लाकर, राम के आगमन की प्रतीक्षा कर रही है।" इस वर्णन में भी जूठे बेर या फल का उल्लेख नहीं मिलता।

इस प्रकार हम देखते हैं कन्नड भाषा की इन तीनों रचनाओं में जूठे फल या जूठे बेर की कल्पना नहीं मिलती।

'भानुभक्त रामायण' (उन्नीसवीं शताब्दी)—नेपाली भाषा का प्रमुख राम-काव्य है। इसमें यह प्रसंग इस प्रकार वर्णित है—"शबरी राम को देखकर तुरन्त आसन से उठ बैठी और राम के चरणों पर गिर पड़ी। अपनी शक्ति के अनुसार पूजा कर हाथ जोड़कर उसने विनती की……।"[४] इस रामकाव्य में शबरी द्वारा राम की पूजा का वर्णन तो मिलता है, किन्तु उसके द्वारा जूठे बेर या फल खिलाने का उल्लेख नहीं मिलता।

---

१. श्रीरामायणदर्शनम् : एक मूल्यांकन, डॉ० पी० एम० वामदेव, प्र० संस्करण—१९८०, पृष्ठ ६८।

२. जनप्रिय रामायण, के० वी० पुट्टप्पा, अरण्यकाण्ड; शबरी उद्धार-प्रसंग, तृतीय संस्करण—१९५८, पृष्ठ १७५।

३. प्रकाशन वर्ष १९७८, पृष्ठ ९८।

४. भानुभक्त रामायण, भानुभक्त, अरण्यकाण्ड, प्र० सं०-१९७६, पृष्ठ १०९।

हिन्दी साहित्य के रामकाव्य का अध्ययन करने पर हम यह पाते हैं कि शबरी-प्रसंग में जूठे बेर की कल्पना सर्वप्रथम सूरदास के सूरसागर से उपलब्ध होती है। सूरसागर (१५००-१६०० ई०) में शबरी-राम का मिलन निम्न प्रकार से मिलता है— 'शबरी-आश्रम रघुवर आये। अरघासन दै प्रभु बैठाये।
खाटे फल तजि मीठे ल्याई। जूठे भए सो सहज सुहाई।।
अंतरजामी अतिहित मानि। भोजन कीने, स्वाद बखानि।।[1]

इस भाँति हिन्दी साहित्य में सर्वप्रथम सूरसागर में ही शबरी द्वारा राम को जूठे फल खिलाने का वर्णन प्राप्त होता है, किन्तु किसी एक फल-विशेष बेर का उल्लेख यहाँ पर भी नहीं मिलता है।

रामचरितमानस सम्पूर्ण रामकथा साहित्य में सर्वाधिक लोकप्रिय एवं सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है। तुलसीदास (जन्म सम्वत् १५८९ वि० लगभग) ने रामचरितमानस में इस प्रसंग का वर्णन निम्न प्रकार से किया है—

'कंद मूल फल सुरस अति दिए राम कहुँ आनि।
प्रेम सहित प्रभु खाए बारंबार बखानि।।[2]

इस प्रकार तुलसीदास की शबरी 'अतिसुरस कंद-मूल और फल' लाकर राम को निवेदित करती है। मानस में जूठे फल या जूठे बेर का वर्णन नहीं मिलता है।

तुलसीदासोत्तर रामकथा-विषय हिन्दी काव्य-धारा की अधिकांश रचनाओं का चित्रण में रचनाकारों ने शबरी को, जूठा फल और उसमें भी जूठा-बेर निवेदित करते हुए चित्रित किया है। शबरी के फलों को किसी ने 'झरबेरी के बेर' के रूप में, तो किसी ने दन्त-चिह्न युक्त जूठे फल या बेर के रूप में चित्रित किया है। आज हिन्दी साहित्य की विभिन्न रचनाओं में यह वर्णन भिन्न-भिन्न रूपों में इस प्रकार मिलता है—

भक्तमाल की प्रियादास कृत टीका (अठारहवीं शताब्दी ई०) में शबरी के जूठे फलों की चर्चा है।[3]

रामस्वयंवर में शबरी राम को चख-चख कर रखे हुए फल खिलाती हुई चित्रित हुई है—

---

१. सूरसागर, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, संस्करण, नवम् स्कन्ध, रामावतार, अरण्यकाण्ड, शबरी-उद्धार. ६७/५११।
२. रामचरितमानस, ३/३४।
३. रामकथा, फादर कामिल बुल्के, पृष्ठ ४३१।

ऐहैं यहिहित शबरी फल चीखि चीखि धरि राख्यो ।
शबरीकुटी जाय रघुनन्दन प्रेमविवश फल चाख्यो ।।[1]

रसिक बिहारी कृत 'रामरसायन' में जूठे बेर का यह प्रसंग इस प्रकार मिलता है—

कबहूँ विपिनबिच जाय बीनत बेर हिय हुलसाय कै ।
तिनि चीखि मीठे जानि रघुवर हेतु धरत सुखाय कै ।।[2]

बचनेश जी तो शबरी के चखे हुए बेरों (रस चाखि धरे, फिर चाखि, खरे। मधुरे से दिये दोउ पाहुन-हातन')[3] के वर्णन में अपने को असमर्थ (नहिं सक्ति इतीहू कहौं महिमा । सबरी के चखे उन बेरन की ।[4]) पाते हैं ।

शबरी की कथा आदिवासियों में अपेक्षाकृत अधिक लोकप्रिय है। कहा जाता है कि मध्य भारत के कोल-भील अपने को शबरी का वंशज मानते हैं । उनमें प्रचलित दन्तकथा[5] इस प्रकार है—"वनवास के समय किसी दिन शबरी से राम-सीता-लक्ष्मण की भेंट हुई । तीनों भूखे थे और शबरी ने उनको जंगली बेर खिलाकर तृप्त किया" इस कथा में भी शबरी द्वारा उच्छिष्ट बेर देने की ही चर्चा है।

'कल्याण' में शबरी के बेरों का उल्लेख इस प्रकार हुआ है—"वह (शबरी) चुने हुए मीठे-मीठे बेरों को प्रतिदिन भगवान् के लिए रखती थी । उन बेरों को ले आयी । बड़े प्रेम से देने लगी ।"[6]

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी के नाटक 'शबरी' (१९५२ में प्रकाशित) में "...जूठे बेरों का ही वर्णन मिलता है—"मैंने एक-एक बेर काट-काट कर इसके लिए रखा है । राम (शबरी से)—यह तो बड़ा मीठा बेर है। कहाँ से लायी हो ?"[7] मानस-पीयूष में भी शबरी के जूठे बेरों की ही चर्चा मिलती है ।[8]

---

१. रामस्वयंवर, महाराजा रघुराज सिंह, प्रका० वर्ष १९०३ ई०, पृष्ठ ७७६ ।
२. रामरसायन, रसिकबिहारी, १९२१ ई० का संस्करण, पृष्ठ २५२ ।
३. शबरी, वचनेशजी, प्रथमावृत्ति १९३६ ई०, पृष्ठ ५४ ।
४. उपर्युक्त पृष्ठ ७६ ।
५. दि कोल ट्राइब ऑफ़ सेण्ट्रल इण्डिया : डब्लू० जी० ग्रिफित्स, कलकत्ता, प्रका० वर्ष १९४६, पृष्ठ २०७ ।
६. कल्याण, गीता प्रेस गोरखपुर, नारी-अंक १९४८, पृष्ठ ५५१ ।
७. शबरी, आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, अंक तीसरा, दृश्य-पाँचवाँ ।
८. मानस-पीयूष, अंजनीनन्दन शरण, अरण्यकाण्ड, प्रका० वर्ष-१९५८, पृष्ठ-३६ ।

हिन्दी साहित्य कोश भाग दो में 'शबरी' का उल्लेख इस प्रकार मिलता है—"वनवास के समय राम-लक्ष्मण ने शबरी के यहाँ जूठे बेर खाये थे।"[1]

मायादेवी शर्मा के खण्डकाव्य 'शबरी' का यह प्रसंग इस प्रकार वर्णित है—"प्रभु ने बदरी फल खाये/या प्रेम-अमृत में डूबे।"[2]/....और...ये बेर हमारे खाकर/प्रभु ने हमको अपनाया/इस वन्य बेर ने जीता/राजन्य नगर की माया...."।[3]

रामचरितमानस पर लिखी गयी 'विजया टीका' में शबरी-प्रसंग की व्याख्या में जूठे फलों का ही उल्लेख मिलता है।[4]

राधेश्याम रामायण में शबरी-प्रसंग की कथा इस प्रकार मिलती है—

'वे फल शबरी के जूठे थे यह लिखा सूरसागर में है।

जूठे बेरों को बेर-बेर खुश होकर (प्रभु) भोग लगाते हैं।

ला बेर-बेर क्यों देर करे ? .।[5]

धनंजय अवस्थीकृत खण्ड काव्य 'शबरी' में यह प्रसंग इस प्रकार वर्णित है—,बेरों के ढेर-ढेर,लाकर दिया बिखेर/चुन-चुन कर देती थी/बेर, बेर, बेर/झर-बेरी के/—बाँछ-बाँछ देती/क्या प्रेम से खिलाती थी/दाख से रसीले बेर/राम को न, लगती देर,/खाते/न अघाते/....'[6]।

श्रद्धेय राष्ट्रकवि श्री सोहनलाल द्विवेदी ने भी शबरी के जूठे बेरों की कथा को स्वीकार करते हुए इसका उल्लेख इस प्रकार किया है—"उत्तर भारत में शबरी की कथा राम को जूठे बेर खिलाने और उनके द्वारा उसे बड़े प्रेम से खाने तक सीमित है....'[7]।

नरेश मेहता के खण्ड 'शबरी' में यह प्रसंग इस प्रकार वर्णित है—'ये बेर जंगली केवल/ यह था प्रसाद शबरी का/—प्रभु को देगी वह चख/कर, होंगे रसाल जो मीठे/वह प्रभु की जिह्वा बनकर/चक्खेगी कड़वे-मीठे/वह सहज भाव से चखती/मीठे प्रभु को दे देती/प्रभु सहज भाव से खाते/आँखों के कृपा बरसती—[8]"।

---

१. हिन्दी साहित्यकोश भाग दो, प्रका० वर्ष-१९६३ ई०, पृष्ठ-५५८-५५९।
२. शबरी, मायादेवी शर्मा, प्रका० वर्ष १९६३ ई०, पृष्ठ ५२।
३. उपर्युक्त पृष्ठ ९५।
४. रामचरितमानस पर विजया टीका, टीकाकार, विजयानन्द त्रिपाठी, द्वितीय भाग, प्रका० वर्ष-१९८० ई०, पृष्ठ ८९७।
५. राधेश्याम रामायण, पण्डित राधेश्याम कथावाचक, सीताहरण, पृष्ठ २१।
६. शबरी, धनंजय अवस्थी, द्वितीय सं० १९८१ ई०, पृष्ठ २१।
७. शबरी, धनंजय अवस्थी, दो शब्द के अन्तर्गत, पृष्ठ ३।
८. शबरी, नरेश मेहता, संस्करण १९८३ ई०, पृष्ठ ७२, ७८।

हिन्दी-राम-कथा के सुविख्यात पंडित तथा रामचरितमानस के श्रेष्ठ व्याख्याता एवं मर्मज्ञ श्री रामकिंकर उपाध्याय शबरी के फलों के रूप में तुलसीदास द्वारा वर्णित कंदमूल-फल को ही अधिक स्वाभाविक और युक्तिसंगत मानते हैं।[1]

हम देखते हैं कि तुलसीदास-पूर्व राम-कथाओं में शबरी द्वारा राम को जूठे बेर या फल खिलाने की कथा स्वल्प रूप में दिखलाई पड़ती है, किन्तु तुलसीदासोत्तर रामकथा-विषयक अधिकांश रचनाओं में शबरी द्वारा राम को बेर खिलाने की घटना विकसित अवस्था में प्राप्त होने लगी है।

इस प्रकार रामकथा सम्बन्धी प्राचीन एवं अर्वाचीन अधिकांश ग्रन्थों तथा रचनाओं का अध्ययन करने पर यह तथ्य समक्ष आता है कि महर्षि वाल्मीकि के आदिकाव्य से निःसृत शबरी-कथा; नरेश मेहता के खण्डकाव्य 'शबरी' तक सम्पूर्ण भारतीय भाषाओं की कथाओं में ग्रहण की जाती रही है तथा आज भी शबरी की यह कथा समग्र भारत में ग्रामीण अंचलों के लोकगीतों तथा कथाओं में व्याप्त है।

अब प्रश्न यह उठता है कि तुलसीदास या उनके समसामयिक, पूर्ववर्ती एवं परवर्ती रचनाओं में कब और किन परिस्थितियों में शबरी द्वारा जूठे बेर या जूठे फल खिलाने की घटना का विकास हुआ ? इस प्रश्न का समाधान ढूँढ़ने पर विवेचन के धरातल पर यह तथ्य समक्ष आता है कि सर्वप्रथम पद्मपुराण में शबरी द्वारा राम को जूठे फल खिलाने का वर्णन प्राप्त होता है संभवतः उसी के आधार पर विविध भाषाओं की राम-कथा-विषयक रचनाओं—दाशरथिशतकमू (तेलुगु), आनन्दतनयकृत शवर्याख्यान (मराठी), वैदेहिश-विलास (ओड़िया) तथा हिन्दी में सूरसागर, भक्तमाल की प्रियादासकृत टीका, रामस्वयंवर, रामरसायन, वचनेशजी की, नरेश मेहता की तथा धनंजय अवस्थी की 'शबरी' में, कल्याण में, हिन्दी साहित्य कोश भाग-दो, रामचरितमानस पर लिखी गयी विजया टीका, राधेश्याम रामायण आदि में जूठे फल या जूठे बेर का वर्णन मिलता है। इस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी तथा आधुनिक युगीन हिन्दी भाषा की अधिकांश रचनाओं में 'जूठे बेर' का यह प्रसंग, विशेष ख्याति—प्राप्त है, यद्यपि पूर्ववर्ती किसी भी प्राचीन रचनाओं-वाल्मीकि-रामायण, कम्ब-रामायण, रंगनाथ-रामायण, मोल्ल-रामायण, माधवकन्दली रामायण, कृत्तिवास रामायण, रामचरितमानस आदि में बेर अथवा किसी अन्य फल-विशेष का नामोल्लेख नहीं किया गया है, तथापि जनसामान्य में वह शबरी के बेर (जूठे) के ही रूप में विख्यात है।

शबरी के प्रेम तथा भक्ति ने बेर-फलों को अमर बना दिया, लोकमानस में वे बेर भी जूठे बेरों के रूप में अंकित हुए हैं—बेरफल और वह भी जूठे; खिलाने का

---

१. लेखक से एक व्यक्तिगत साक्षात्कार में।

वर्णन आधुनिक युग की मानसिक उपज है। शबरी-आख्यान अछूतोद्धार, अस्पृश्यता, हरिजन-कल्याण, समाज-सेवा की दृष्टि से आज अत्यधिक सन्दर्भानुकूल तथा प्रासंगिक है। शबरी की कथा आज भारतीय समाज के प्रमुख विचारधारा-हरिजनोद्धार से भी जुड़ी है।

सामाजिक-सांस्कृतिक एकता की प्रतीक शबरी की कथा आज सम्पूर्ण भारतवर्ष को एकता के सूत्र में पिरोती है, तो वर्ण-द्वेष के भाव-सागर में भावात्मक सेतु बनकर भारतवर्ष की राष्ट्रीय एकता-अखण्डता हेतु परस्पर मैत्री का सन्देश देती है। इस कथा के मूल में सम्भवतः यही धारणा कार्य कर रही है कि बेर जैसे तुच्छ फल, किन्तु वह भी जूठा राम ने भक्तिन शबरी से ग्रहण किया। यह वर्णन सिद्ध करता है कि राम भाव के भूखे हैं, बहुमूल्य पदार्थों के नहीं—'पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति'। सम्भवतः इसी भाव को सिद्ध करने के लिए कथाकारों तथा रचनाकारों ने जूठे बेर की कल्पना कर ली हो।

शबरी-कथा में भगवद्-भक्ति की महिमा का वर्णन है, दूसरी बात इस कथा के माध्यम से यह भी स्पष्ट होती है कि निम्नकुल में उत्पन्न मूर्ख नारी भी अपनी सच्ची भक्ति और श्रद्धा द्वारा मोक्ष प्राप्ति की अधिकारिणी है।

'नोच्छिष्टं कस्यचिद् दद्यात् नाद्याच्चैव तथान्तरा'[1]—मनु के अनुसार किसी सामान्य व्यक्ति के लिए भी उच्छिष्ट देना निषिद्ध है, तो ब्राह्मण, अतिथि, आगन्तुक, देवता, राजा या ईश्वर के लिए उच्छिष्ट फल या अन्न प्रदान करना तो परम निषिद्ध है। प्रमाणविरुद्ध आख्यायिका अर्थवाद होकर भक्ति की प्रशंसा मात्र में ही पर्यवसित होती है। अतः विविध भाषाओं के राम-कथा-साहित्य में शबरी द्वारा राम को जूठे फल या बेर खिलाने का वर्णन प्रामाणिक न होते हुए भी प्रेमस्तुत्यर्थ ही है तथा शबरी ने विविध वन्य फल ही राम के लिए संचित किये थे—'मया तु संचितं वन्यं विविधम्'[2]—यही वस्तुस्थिति भी है।

तारा

बालि की पत्नी तारा का चरित्र रामकथा में विविध दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। तारा को समग्र वानर जाति की स्त्रियों का प्रतिनिधि माना जा सकता है। तारा के चरित्र में वानर जाति की स्त्रियों की सामाजिक स्थिति तथा परिवार में उनके महत्त्व की झाँकी मिलती है।

---

१. मनुस्मृति, २/५६।

२. वाल्मीकि-रामायण, ३/७४/१७।

कम्बन तथा तुलसीदास-दोनों ही अपने ज्ञान-भक्ति की दृष्टि से तारा की मूर्ति को देखने का प्रयास करते हैं, जिसे वे अपने-अपने प्रकार से वर्णित करते हैं। दोनों कवियों के दृष्टि-भेद के कारण तारा उन्हें भिन्न रूप में दृष्टिगत होती है। यही कारण है कि कम्ब-रामायण और रामचरितमानस की तारा के चरित्र-चित्रण में भिन्नता पायी जाती है।

कम्ब-रामायण की तारा राज्य-कार्य में भी गहरी रुचि लेती है तथा उस पर सूक्ष्म दृष्टि रखती है। यही कारण है कि राम-सुग्रीव की मैत्री और राम द्वारा सुग्रीव की सहायता-संधि की सूचना तारा को अपने पति बालि से भी पहले चरों द्वारा प्राप्त हो जाती है।[1] इसी प्रबल साक्ष्य के आधार पर वह बालि को सुग्रीव से युद्ध न करने की मन्त्रणा देती है। रामचरितमानस की तारा, बालि को यह परामर्श किस आधार पर देती है—इस विषय पर तुलसीदास मौन हैं।

कम्ब-रामायण में कवि ने तारा के सौन्दर्य पक्ष और दिव्य व्यक्तित्व पर भी प्रकाश डाला है। कम्बन ने तारा को अमृत समान पवित्र एवं सुखदायी, बाँस-सदृश कंधों वाली,[2] पर्वतोपम स्तन - जिनका अग्रभाग मुकुलित था,[3] मयूराभा-सदृश रूप तथा कोकिल समान मधुर भाषिणी,[4] घुँघराले काले केश, मन हर कन्धों वाली, परिशुद्ध हृदय वाली, पवित्र मन वाली तथा आयताक्षी[5] के रूप में वर्णित किया है। इस प्रकार कम्बन ने तारा के अद्वितीय सौन्दर्य पक्ष तथा महनीय व्यक्तित्व को कुशलतापूर्वक प्रस्तुत किया है। रामचरितमानस में तारा के सौन्दर्य पक्ष तथा उसके व्यक्तित्व का वर्णन नहीं मिलता।

रामचरितमानस की तारा बालि का पैर पकड़कर सुग्रीव से युद्ध न करने के लिए समझाती है।[6] कम्ब-रामायण में यह उल्लेख नहीं मिलता।

कम्ब-रामायण में तारा बालि को विविध नीतिपूर्ण तर्कों एवं दृष्टान्तों द्वारा राम से युद्ध न करने का परामर्श देती है। रामचरितमानस की तारा ने कम्ब-रामायण-सदृश परामर्श नहीं दिया है।

---

१ कम्ब-रामायण ४/७/३० ।
२. उपर्युक्त ४/७/२२ ।
३. उपर्युक्त ४/८/२ ।
४. उपर्युक्त ४/७/२१ ।
५. उपर्युक्त ४/१०/४७ ।
६. रामचरितमानस ४/७/१४ ।

कम्ब-रामायण की तारा बालि को परामर्श देते हुए कहती है कि सुग्रीव अभी कुछ समय पूर्व ही तुमसे पराजित होकर भागा था। अब उसे कुछ नयी शक्ति मिली हैं, तभी वह युद्धार्थ आया है, क्योंकि अभी वह कोई दूसरा जन्म भी नहीं पाया है; फिर उसमें युद्ध करने की शक्ति कैसे आ गयी है ? इस प्रकार वह सुग्रीव से किसी शक्तिशाली सहायक के मिलने की बात को सतर्क सिद्ध कर देती है।[१] रामचरितमानस में ऐसा प्रसंग नहीं मिलता।

रामचरितमानस में राम तारा के परामर्श की उपेक्षा करने के कारण बालि को मूढ़ तथा अभिमानी कहते हैं।[२] कम्ब-रामायण में यह वर्णन नहीं मिलता।

रामचरितमानस की व्याकुल तारा को देखकर राम उसे ज्ञान का उपदेश देते हैं तथा उसकी माया दूर करते हैं।[३] कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

कम्ब-रामायण की तारा को अपने पति बालि के अजेय पराक्रम पर पूर्ण विश्वास है। इसी गहरी आस्था के कारण राम के एक बाण से ही बालि के मारे जाने पर सहसा उसे यह विश्वास नहीं होता कि एक बाण से ही उसका महान् बलशाली पति मारा जा सकता है। राम के एक बाण से ही मृतक बालि को; वह अपना महान् पराक्रमी पति बालि मानने के लिए तैयार नहीं है।[४] वह कहती है कि यह कोई अन्य बालि है, मेरा पति नहीं। तारा को इसमें देवों की माया का आभास होने लगता है।[५] रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं है।

कम्बन की तारा का पातिव्रत उस समय मुखरित होता है जब वह बालि की मृत्यु के बाद जीने की अभिलाषा छोड़कर सहर्ष मरना चाहती है। बालि की मृत्यु के पश्चात् भी वह अभी जीवित है—इसके लिए अपनी निन्दा स्वतः करती है।[६] मानस की तारा बालि की मृत्यु के उपरान्त राम से ज्ञान प्राप्त करके, उनके चरणों को प्रणाम करके उनसे परम भक्ति का वरदान प्राप्त करती है।[७] कम्ब-रामायण में इस प्रकार का वर्णन नहीं मिलता है। चूँकि तुलसीदास एक भक्त कवि

---

१. कम्ब-रामायण ४/७/२४।
२. रामचरितमानस ४/९/५।
३. उपर्युक्त ४/११/२।
४. कम्ब-रामायण, किष्किन्धाकाण्ड, तारैपुब्बुरुप्पड़ळम्।
५. कम्ब-रामायण ४/८/१४।
६. उपर्युक्त ४/८/५, ९।
७. रामचरितमानस १/२९/३-४।

हैं और राम के प्रति उनके मन में अगाध श्रद्धा है। वह इसको अपने पात्रों के माध्यम से भी राम के प्रति अर्पित करते रहते हैं।

तुलसीदास ने बालि की मृत्यु के पश्चात् तारा को सुग्रीव की पत्नी के रूप में प्रस्तुत किया है।[1] रामचरितमानस की तारा पति के मृत्यूपरान्त अपने देवर से विवाह करके, साम्राज्ञी बनकर राज्य के विविध सुखों में लिप्त हो जाती है। वह सुग्रीव के साथ उसकी पत्नी बनकर रहने लगती है। कवि के इस चित्रण से अनन्य रामभक्त तारा और राम के परमसहायक एवं राम-भक्त सुग्रीव दोनों का ही चरित्र आलोच्य हो जाता है। तुलसीदास द्वारा इन दोनों रामभक्तों को इस रूप में प्रस्तुत करना मर्यादा-सम्मत नहीं प्रतीत होता। इसके विपरीत कम्बन ने अपनी 'रामायणम्' में तारा को आदर्श विधवा के रूप में प्रस्तुत करके न केवल इस श्रेष्ठ विधवा के चरित्र को कलंकित होने से बचाया है, अपितु राम के अनन्य भक्त, सहायक-सेवक सुग्रीव के चरित्र को भी भारतीय संस्कृति-आदर्श के अनुरूप 'तात तुम्हारि मातु वैदेही'[2] सदृश ही प्रस्तुत किया है। इस प्रकार कम्बन ने तारा तथा सुग्रीव दोनों के ही चरित्र को आलोच्य एवं कलंकित होने से बचाया है। मानसकार ने ऐसा प्रयास नहीं किया है। पंचकन्याएँ पति की मृत्यु के पश्चात् पुनः कन्या मान ली जाती हैं। तारा उन्हीं पंच-कन्याओं में से एक है। इस कारण तुलसीदास ने उसे विधवा के रूप में चित्रित नहीं किया है। तारा को सुग्रीव द्वारा पत्नी बनाना तुलसीदास की दृष्टि में 'कुचालि'[3] है। इस कार्य में तारा की भी सहमति रही होगी, तुलसीदास ने इसका कहीं पर भी उल्लेख नहीं किया है। मर्यादावादी एवं आदर्श के प्रबल समर्थक तुलसीदास को कदाचित् यह मान्य भी नहीं।

कम्ब-रामायण में लक्ष्मण के क्रोध से भयभीत वानर समुदाय, तारा को अपनी रक्षा में समर्थ समझते हैं। इसी कारण परस्पर परामर्श करके इस विपदा से मुक्ति हेतु वे तारा के पास जाते हैं। रामचरितमानस में तारा को ऐसी प्रधानता नहीं मिली है।

कम्बन की तारा हनुमान् के निवेदन पर बिना किसी सहायक के, अकेले ही (अंगद, हनुमान् आदि को मना करके) लक्ष्मण के क्रोध को शान्त करने जाती है। कम्बन ने इस चित्रण के माध्यम से तारा का अदम्य साहस, अटूट आत्मविश्वास

---

१. रामचरितमानस ४/११/३।
२. उपर्युक्त २/७४/१।
३. ऊपर्युक्त १/२९/३।

मुखरित किया है । तारा के विश्वास और अदम्य साहस को रामचरितमानस में इस रूप में चित्रित नहीं किया गया है ।

कम्ब-रामायण की पातिव्रत धर्म से युक्त उदात्त गुणों वाली अपूर्व तेजस्विनी तारा को देखकर अत्यन्त क्रोधी लक्ष्मण का भी क्रोध शान्त हो गया । मंगल-सूत्र रहित, अन्य रत्नमय आभूषणों से रहित, सुगंधित मधुपूर्ण पुष्पमालाओं से आभूषित, कुंकुम, चन्दना--आदि के रस से अलिप्त, पीन एवं तापमय स्तनों वाली तथा 'क्रमुक-वृक्ष' सदृश, अपने कण्ठ को, अपने आँचल से ढके हुए उस नारीरत्न तारा को देखकर लक्ष्मण के नेत्र अश्रुओं से भर गये । पातिव्रत धर्म से युक्त अद्वितीय ओजस्विनी तारा के मुखमण्डल को देखने का साहस खोकर लक्ष्मण आत्मग्लानि एवं लज्जा के कारण सिर झुकाकर खड़े हो जाते हैं । तारा की इस मूर्ति को देखकर उन्हें अपनी विधवा माताओं का स्मरण हो जाता है । कम्बन की तारा को लक्ष्मण अपनी माताओं सदृश दुःखी पाते हैं । फलतः इस परम साध्वी-विधवा के प्रति अपार श्रद्धा एवं करुणा लक्ष्मण के नेत्रों से उमड़ पड़ती है ।[1] रामचरितमानस में कवि ने तारा का ऐसा आदरणीय चित्र नहीं प्रस्तुत किया है । रामचरितमानस में तारा को, कम्ब-रामायण की तारा-सदृश, लक्ष्मण की श्रद्धा का पात्र नहीं बनाया गया है ।

लक्ष्मण के सम्मुख पहुँचने पर तारा एक दूरदर्शी एवं कुशल राजनेत्री की तरह, उनके आगमन का कारण अपनी संगीत-सदृश सुमधुर वाणी में पूछती है—हे वीर ! अनन्तकाल तक तपस्या करने के बाद प्राप्त होने वाला पुण्य हमें आपके दर्शन से प्राप्त हो गया । यह हम लोगों का परम सौभाग्य है । आपके आगमन से हम सब दुष्कर्म-मुक्त होकर उत्तम गति प्राप्त कर लिये । राम के चरण-युगल से कभी अलग न रहने वाले आपके आगमन के प्रयोजन से अनभिज्ञ; मेरी वानर सेना आपके आगमन का कारण जानना चाहती है ।[2] लक्ष्मण द्वारा अपने आगमन का प्रयोजन प्रकट करने पर तारा उनके प्रश्नों का उत्तर एक अत्यन्त अनुभवी-कूटनीतिज्ञ राजनेत्री की भाँति देती है । कम्ब-रामायण में तारा-लक्ष्मण-सम्भाषण में तारा का वाक् चातुर्य, नीतिज्ञता, धर्मज्ञता, राजधर्म का ज्ञान परिलक्षित होता है । रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता ।

कम्बन की तारा एक कुशल मनोवैज्ञानिक है, जो अपने क्रोधी-प्रकृति के लिए विख्यात लक्ष्मण की प्रशंसा करने के उपरान्त उनके सम्मुख अपना तर्क प्रस्तुत करते हुए कहती है—हे प्रभो ! मैंने सुना है कि अयोध्या के लोग क्रोधी नहीं होते, शान्त

---

१. कम्ब-रामायण, किष्किन्धाकांड, किट्किन्धैप्पड़ळम् ४/१०/५१-५२ ।

२. कम्ब-रामायण ४/१०/४८-४९ ।

हो जाओ। तुम्हारे सदृश क्षमाशील दूसरा कौन है ? तुम लोग शरणागत को शरण देने वाले हो। तुम शरणागतों के लिए माता से भी अधिक हितकारी हो। अपने कोध को शान्त करें।[1] रामचरितमानस में ऐसा सुन्दर वर्णन नहीं मिलता।

कम्ब-रामायण की तारा कृतज्ञ एवं न्यायप्रिय है। वह गलती करने वाले की कटु शब्दों में निन्दा करने वाली है; चाहे वह गलती करने वाला व्यक्ति उसका परम प्रिय ही क्यों न हो ? यही कारण है कि वह राम के आदेश-पालन में विलम्ब होने पर लक्ष्मण से सुग्रीव की निन्दा करती है। अप्रतिम मनोवैज्ञानिक तारा लक्ष्मण के क्रोध को शान्त करने के लिए उनसे कहती है कि सरल स्वभाव वाले आपने सुग्रीव के सन्तापक शत्रु (बालि) का वध करके उसे ससम्मान राजा बनाया। अगर वह आपकी उपेक्षा करेगा, तो अपने दोनों लोकों के सुखों से वंचित नहीं हो जायेगा ?[2] यहाँ पर कम्बन ने तारा को 'रामायणम्' के सम्पूर्ण नारी पात्रों में श्रेष्ठतम कूटनीतिज्ञा के रूप में प्रस्तुत किया है। परम साध्वी-विधवा तारा अपने जिस प्राणप्रिय पति की मृत्यु के बाद जीवित रहने के लिए स्वयं अपने को कोस रही थी, जिसकी मधुर स्मृतियों में अब अपना एक-एक पल व्यतीत कर रही है, जिस सुग्रीव के कारण आज वह विधवा बनी है, उसी के लिए अपने पूजनीय-आराध्य पति को, उसका सन्तापक कहकर, उसकी रक्षा के लिए प्रयत्नशील है। 'तात तुम्हारि मातु वैदेही'[3] की पंक्ति में यह आदर्श भाभी अपने देवर सुग्रीव की रक्षार्थ उसी तरह से प्रयत्नशील है, जैसे एक माँ अपने छोटे बच्चे के लिए। यहाँ पर कम्बन ने तारा के चरित्र को श्रेष्ठतम मानवीय—भारतीय आदर्शों के चरमोत्कर्ष बिन्दु पर चित्रित किया है। रामचरितमानस में तारा की मूर्ति को कम्ब-रामायण-सदृश विविध अनुपम-दिव्य रंगों से अलंकृत करने में मानसकार ने कदाचित् ध्यान नहीं दिया है।

तारा अत्यन्त बुद्धिमत्तापूर्वक सुग्रीव को निर्दोष सिद्ध करती हुई कहती है कि सुग्रीव राम की सहायता करने का अपना वचन भूला नहीं है, अपितु उसने सम्पूर्ण विश्व में अपने दूतों को भेजा है। यह विलम्ब उन सभी के आगमन की प्रतीक्षा में हुआ है।[4] वह आप लोगों के उपकारों को भूलकर अपने दोनों ही लोकों के सुखों से न केवल वंचित हो जायेगा, अपितु उभय लोकों में कलंकित भी होगा।[5]

---

१. कम्ब-रामायण ४/१०/५२-५६।
२. उपर्युक्त ४/१०/५७।
३. रामचरितमानस ४/७४/१।
४. कम्ब-रामायण ४/१०/५४-५५।
५. उपर्युक्त ४/१०/५७।

संगीत से भी सुमधुर कर्णप्रिय स्वरों वाली तारा के नीतियुक्त एवं धर्मसम्मत तर्कों को सुनकर लक्ष्मण करुणार्द्र होकर मन-ही-मन बहुत लज्जित होते हैं तथा उनका क्रोध शान्त हो जाता है।[1] रामचरितमानस में तारा-लक्ष्मण-सम्भाषण कम्ब-रामायण-सदृश सशक्त एवं सुन्दर रूप में नहीं उपलब्ध है। कम्ब-रामायण तथा रामचरितमानस में तारा का चित्रण, उसके प्रति दोनों कवियों के दृष्टिकोण तथा उसके प्रति उनके मन में आदर-भावना की ओर भी सूक्ष्म संकेत करता है।

रामचरितमानस में लक्ष्मण के कोप-शमन करने हेतु सर्वप्रथम अंगद जाते हैं, जो उनके सम्मुख पहुँचकर उनके चरणों पर सिर झुकाकर विनती करते हैं।[2] तत्पश्चात् हनुमान् 'तारा सहित' जाकर लक्ष्मण की चरण-वंदना करते हैं।[3] लक्ष्मण के सम्मुख पहुँचने पर तारा ने उनके कोप-शमन हेतु क्या प्रयत्न किया ?—इसका उल्लेख रामचरितमानस में नहीं मिलता। यह वर्णन कम्ब-रामायण से पूर्णतः भिन्न तथा अत्यन्त संक्षिप्त रूप में वर्णित है। रामचरितमानस की तुलना में कम्ब-रामायण में यह वर्णन विस्तृत तथा बहुत ही सुन्दर-सजीव रूप में मिलता है।

उपर्युक्त वैषम्य के होते हुए दोनों महाकवियों के वर्णन में साम्य भी है। दोनों महाकाव्यों की तारा राम के प्रभाव तथा पराक्रम से अवगत है, जो बालि को युद्ध करने से मना करती है, किन्तु दोनों महाकाव्यों में बालि, इसे नारी सुलभ कायरता मानकर इस परामर्श की उपेक्षा करता है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि कम्बन ने तुलसीदास की तुलना में तारा के चरित्र को महनीय एवं उदात्त गुणों की सुदृढ़ भाव-भूमि पर चित्रित किया है। निस्संदेह तुलसीदास की तुलना में कम्बन ने तारा को अप्रतिम सुन्दरी, आकर्षक, श्रद्धेया, आदरणीया एवं अधिक श्रेष्ठतर रूप में प्रस्तुत किया है। कम्ब-रामायण-सदृश रामचरितमानस में तारा का गौरवमय चित्रण नहीं मिलता। देश-काल-परिस्थितियों के अनुसार दोनों महाकवियों ने तारा के उदात्त एवं महनीय चरित्र को अपने-अपने महाकाव्यों में प्रस्तुत करने का स्तुत्य प्रयास किया है।

त्रिजटा

वाल्मीकि-रामायण में—'राक्षसी त्रिजटा वृद्धा'—के रूप में त्रिजटा का उल्लेख मिलता है।[4] महाभारत में त्रिजटा को 'धर्मज्ञा प्रियवादिनी' कहा गया है।[5]

---

१. कम्ब-रामायण ४/१०/५९।
२. रामचरितमानस ४/२०/१, २।
३. उपर्युक्त ४/२०/२।
४. वाल्मीकि-रामायण, ५/२७/४।
५. महाभारत, ३/२६४/४।

'भूषण' टीकाकार के अनुसार यह विभीषण की पुत्री थी।[१] बाबा हरिहर प्रसाद के अनुसार तीन गुणों (रामचरणरति, व्यवहार-निपुणता और विवेक) से जटित (भूषित) होने के कारण इसका नाम त्रिजटा हुआ।[२] कम्बन ने उज्ज्वल किरीटधारी-सत्यशील विभीषण की पुत्री के रूप में त्रिजटा का परिचय दिया है।[३] 'रामयणककविन' में भी त्रिजटा को विभीषण की पुत्री माना गया है।[४] 'सेरीराम' में विभीषण की पुत्री त्रिजटा को सीता पर पहरा देने वाली राक्षसियों का अध्यक्ष भी बताया गया है,[५] किन्तु आनन्द-रामायण मे विभीषण की पत्नी के रूप में त्रिजटा का उल्लेख प्राप्त होता है।[६] स्वयंभूदेवकृत पउमचरिउ में त्रिजटा, सीता की हितैषिणी नहीं मानी गयी है।[७] 'कृत्तिवास रामायण' के अनुसार त्रिजटा ने सीता से अनुरोध किया था कि वह रावण की शरण लेकर लंका की पटरानी बन जाये।[८]

विभीषण की पत्नी, पुत्री अथवा सीता की अधिक प्रिय एवं हितैषिणी होने के कारण त्रिजटा का अधिक सम्मानपूर्ण वर्णन प्राप्त होना, असंगत नहीं है। जैन विद्वान् प्रायः वाल्मीकि-रामायण के विरोध में अद्भुत रचना के लिए प्रस्तुत रहे हैं। अतः जैनियों के साहित्य में विस्मयकारी वर्णन अस्वाभाविक नहीं है। वाल्मीकि-रामायण से अनुप्राणित अधिकांश कथाओं में त्रिजटा का चरित्रांकन सम्माननीय एवं अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रूप में हुआ है।[९]

कम्ब-रामायण में त्रिजटा

कम्ब-रामायण में त्रिजटा का प्रथमोल्लेख सुन्दरकाण्ड के काट्चिप्पड़लम् में प्राप्त होता है। राक्षस-कुल से सम्बन्धित होने पर भी त्रिजटा सभी सद्गुणों से युक्ता है। कवि ने अलोच्यग्रन्थ में धर्मात्मा-सत्यशील विभीषण की पुत्री त्रिजटा का परिचय मधुर भाषिणी के रूप में दिया है। सीता के प्रति उसका माता से भी

---

१. मानस-पीयूष, खण्ड ६, पृ० ९९।
२. बाबा हरिहर प्रसाद, मानस-पीयूष, खण्ड-६, पृ० ९९।
३. कम्ब-रामायण, सुन्दरकाण्ड, चूड़ामणिप्पड़लम्, ५/६/२२।
४. रामायणककविन, सर्ग-२१, द्रष्टव्य-रामायण मीमांसा, स्वामी करपात्री जी, पृ० ६१६।
५. द्रष्टव्य-रामकथा, कामिल बुल्के, पृष्ठ-५०९।
६. 'त्रिजटानाम्नी विभीषणप्रियानुगा'—आनन्दरामायण, १/९/११।
७. स्वयंभूदेवकृत पउमचरिउ; ४९/१०।
८. कृत्तिवास रामायण, ५।१४, द्रष्टव्य-रामकथा, कामिल बुल्के, पृ० ५०९।
९. कम्ब-रामायण, रामचरितमानस आदि।

अधिक प्रेम है ।[१] त्रिजटा को सीता की हितकारिणी के रूप में आलोच्यकवि ने, प्रस्तुत ग्रन्थ में उसके चरित्र को रेखांकित किया है। त्रिजटा को सीता पवित्र स्वभाव वाली अपनी सहायिका के रूप में संबोधित करती हैं। सभी राक्षसियों के सो जाने पर सीता अपनी मर्म-व्यथा, उससे बताती हैं ।[२] आलोच्यकवि ने त्रिजटा का चित्रण न्याय की प्रबल समर्थिका के रूप में किया है, यद्यपि इस समर्थन में उसके बन्धु-बान्धवों का विनाश सुनिश्चित है, तथापि वह न्याय की पक्षधर है ।[३] सीता को अपनाने हेतु रावण तरह-तरह की माया का सृजन करता है। रावण इस शृंखला में जनक के वेश में एक राक्षस को सीता के पास भेजता है। वह 'माया-जनक' सीता से रावण के प्रस्ताव को स्वीकार करने हेतु परामर्श देते हुए वहाँ से चला जाता है। ऐसी दुःखमय घड़ी में त्रिजटा, रावण के आने के पश्चात् भयविह्वला सीता को विविध प्रकार के आश्वासनों से सान्त्वना प्रदान करती है। वह सीता से कहती है कि तुम्हारे पिता जनक का रूप धारण करके आने वाला व्यक्ति 'मरत्तम्' नामक एक राक्षस है ।[४]

सीता के वित्रस्त जीवन में नयी स्फूर्ति का संचार करने वाली त्रिजटा, कम्बन के अमृत का कार्य करने वाली, विशेषण की अन्वर्थनामा पात्रा है ।[५]

'युद्ध भूमिदंशर्नप्पड़ळम्' में आलोच्यकवि सीता को सान्त्वना प्रदान करने हेतु त्रिजटा को उपस्थित करता है। सीता की परम हितैषिणी त्रिजटा, वहाँ पर उपस्थित सभी राक्षसियों को हटाकर उन्हें धैर्य दिलाती है ।[६]

कष्ट-विमोचन हेतु बार-बार स्मरण किये जाने वाले देवता के उपस्थित होने पर भक्त को जैसी प्रसन्नता की अनुभूति होती है, त्रिजटा के आगमन पर ऐसी ही प्रसन्नता सीता को होती है। जिसके आगमन पर सीता को प्रसन्नता हो सकती है, तो निःसन्देह ऐसे व्यक्ति का व्यक्तित्व महनीय, वर्णनीय एवं मात्र अनुमेय है। आलोच्यग्रन्थ में त्रिजटा का चरित्रांकन दुःख दूर करने वाली परम राम-भक्ता के रूप में किया गया है। कम्बन ने त्रिजटा के चरित्र को राम-भक्ता, स्पष्टवादिनी, न्यायप्रिया के रूप में कम्ब-रामायण में प्रस्तुत किया है।

---

१. कम्ब-रामायण, सुन्दरकाण्ड, चूड़ामणिप्पड़ळम् ५/६/२२ ।
२. कम्ब-रामायण, सुन्दरकाण्ड, काट्चिप्पड़ळम्, ५/३/३०-३१ तथा ५/६/२२ ।
३. उपर्युक्त ५/३/३६-५२ ।
४. उपर्युक्त ५/३/९४ ।
५. कम्ब-रामायण, युद्धकाण्ड, मायाजनकप्पड़ळम् ६/१६/९४ ।
६. उपर्युक्त ५/२२/२२ ।

रामचरितमानस में त्रिजटा

कम्ब-रामायणवत् रामचरितमानस में भी त्रिजटा का चित्रण राम-भक्ता के रूप में हुआ है। त्रिजटा का प्रथम परिचय तुलसीदास ने राम-भक्ता के रूप में दिया है। उसकी 'रामचरन' में विशेष 'रति' है।[१] सीता को भयभीत करके कष्ट पहुँचाने वाली राक्षसियों को बुलाकर उन्हें अपना स्वप्न सुनाते हुए कहती है—रावण सहित सम्पूर्ण राक्षस जाति का विनाश अवश्यम्भावी है तथा सीता का कष्ट शीघ्र ही दूर होने वाला है। वह कहती है कि 'होइहि सत्य गएँ दिन चारी'।[२] अतएव 'जनकसुता के चरनन्हि'[३] की सेवा करके अपना कल्याण करो। त्रिजटा की बात सुनकर राक्षसियाँ भयाक्रान्त होकर सीता के चरणों पर गिरती हैं तथा वे सब यत्र-तत्र चली जाती हैं।[४]

त्रिजटा जैसी राक्षसी के उदात्त गुणों का प्रभाव है कि रामचरितमानस की नायिका उसे हाथ जोड़कर माता कहती हैं।[५] सीता, राम की विरह-वेदना से आत्म-दाह करने के लिए त्रिजटा से अग्नि माँगती हैं। यह सुनकर त्रिजटा का हृदय विदीर्ण होने लगता है। वह सोचती है कि मेरी उपस्थिति इस समय यहाँ उपयुक्त नहीं है। वह सीता को सप्रेम समझाती हुई कहती है कि 'सुनु सुकुमारी' 'निसि न अनल मिल'—इस प्रकार कहते हुए 'निज भवन सिधारी'।[६]

युद्ध का समाचार सुनकर सीता के मन में सन्देह उत्पन्न होता है कि इस युद्ध में रावण मारा भी जा सकेगा अथवा नहीं।[७] राम का स्मरण करके सीता बहुत प्रकार से विलाप करती हैं।[८] त्रिजटा के आने पर सीता पूछती हैं कि हे माता! तुम बताती क्यों नहीं कि रावण किस प्रकार मरेगा?[९] इस प्रकार राम के शौर्य-पराक्रम पर, जब सीता के मन में सन्देह होने लगता है, तब भी राम के प्रति आस्थावान् त्रिजटा, रावण-वध से सम्बन्धित स्वप्न सुनाती है, जिससे सीता को कुछ

---

१. रामचरितमानस ५/११/१।
२. उपर्युक्त ५/११/४।
३. उपर्युक्त ५/११/४।
४. उपर्युक्त ५/११, ५/११।४, ५/१२/१।
५. उपर्युक्त ५/१२/१।
६. उपर्युक्त ५/१२/१-३।
७. उपर्युक्त ६/६/९२।
८. उपर्युक्त ६/९९,७।
९. उपर्युक्त ६/९०/२।

समय के लिए सान्त्वना मिलती है।[1] त्रिजटा रावण-वध के प्रति आश्वस्त है। सीता को विविध प्रकार से समझाकर त्रिजटा सान्त्वना देकर अपने घर चली जाती है।[2] वात्सल्यसम्पन्ना, उदारमना, राम के प्रति दृढ़-आस्थावान् के रूप में कवि ने रामचरितमानस में त्रिजटा का चरित्रांकन किया है।

निष्कर्ष

आलोच्यग्रन्थद्वय में त्रिजटा का चरित्र राम-भक्ता, सीता की सहायिका तथा उदारमना राक्षसी के रूप में समान रूप से चित्रित हुआ है। वह समय-समय पर व्यथित सीता को अपने नाना प्रकार के नीति-निपुण विचारों से सान्त्वना प्रदान करती है। त्रिजटा अत्यन्त न्याय-प्रिया है। वह न्याय का समर्थन निष्पक्ष भाव से करती है। वह ऐसी न्याय-प्रिया है, जिसको बन्धु-बान्धवों का भावी हित-अहित भी न्याय-पथ से विचलित नहीं कर पाता। आलोच्यकविद्वय ने त्रिजटा को इसी रूप में प्रस्तुत किया है।

त्रिजटा सम्पूर्ण लंका में एकमात्र ऐसी नारी पात्र है, जिससे सीता को कुछ सान्त्वना मिलती है। त्रिजटा, सीता की दुखती रगों पर अपनी सरलता एवं स्नेह की मरहम-पट्टी लगाकर उनकी यथासम्भव सहायता करती रहती है।

कम्बन ने त्रिजटा के मधुर स्वभाव का उल्लेख किया है जबकि तुलसीदास ने उसके स्वभाव के विषय में कुछ नहीं कहा है। रामचरितमानस में त्रिजटा अपनी स्वप्न की बात राक्षसियों के सम्मुख सीधे-सीधे प्रस्तुत कर देती है,[3] किन्तु कम्ब-रामायण में यह चित्रण अत्यन्त मनोवैज्ञानिक रूप में मिलता है। कम्बन ने इसे प्रत्यक्षदर्शीवत् प्रस्तुत किया है।

सीता अपने शुभ-सूचक निमित्तों को त्रिजटा से बताती हैं। त्रिजटा कहती है कि तुम्हारा राम से शीघ्र ही मिलन होने वाला है,[4] पुनः त्रिजटा अपना स्वप्न-वृत्तान्त सीता को सुनाती है।[5] स्वप्न की घटना अधूरी होने के कारण सीता त्रिजटा से कहती हैं कि पूरी घटना सुनाओ। वह कहती है कि उसके पश्चात् तुमने मुझको जगा दिया। अतः स्वप्न अधूरा ही रह गया। सीता स्वप्न का शेषांश जानने हेतु

---

१. रामचरितमानस, ६/९९।
२. उपर्युक्त ६/१००/१।
३. उपर्युक्त ५/११/१, २।
४. कम्ब-रामायण, ५/३/३२-३५।
५. उपर्युक्त ५/३/३९–५२।

व्यग्र हो जाती हैं। वह बालकों सदृश मचलती हुई हाथ जोड़कर त्रिजटा से निवेदन करती हैं — हे माता ! तुम अविलम्ब सो जाओ तथा स्वप्न का शेषांश भी देखो।[१] ऐसा मनोवैज्ञानिक चित्रण रामचरितमानस में नहीं मिलता है। सीता से त्रिजटा कहती है कि अगर तुम भी सोयी होती, तो तुम्हें भी ऐसा ही स्वप्न दिखालायी देता किन्तु तुम तो सोती नहीं हो।[२] रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

त्रिजटा के मन में सीता के प्रति अपार श्रद्धा, करुणा, प्रीति, भक्ति है। वह रावण के अति गोपनीय रहस्यों को भी सीता से बता देती है।[३] सीता से अपना प्रस्ताव मनवाने के लिए रावण जनक के वेश में 'मायाजनक' को सीता के पास भेजता है। 'मायाजनक' रावण के प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए सीता को विविध प्रकार से समझाता है तथा इसके लिए निवेदन भी करता है।[४] इस अवसर पर सत्य का रहस्योद्घाटन करके त्रिजटा ने सीता को बताया कि यह जनक के रूप में तुम्हारे पास आने वाला व्यक्ति अपार मायावी 'मरत्तम्' नामक राक्षस था, तुम्हारे पिता जनक नहीं।[५] रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता है।

सीता के मन में यह सन्देह उत्पन्न होता है कि रावण युद्ध में मारा जा सकेगा अथवा नहीं ? तुलसीदास ने इस सन्देह का निवारण अत्यन्त सुन्दर रूप में किया है—त्रिजटा, सीता से कहती है कि राम, रावण के हृदय में बाण इसलिए नहीं मार रहे हैं, क्योंकि उसके हृदय में वैदेही का वास है। रावण का ध्यान सर्वदा अतीव सुन्दरी सीता पर रहता है। जानकी के हृदय में मेरा निवास है और मेरे हृदय में अनेक भुवन हैं। अतएव रावण के हृदय में बाण लगते ही सब भुवनों का विनाश हो जायेगा। राम उसके सिरों को काटकर उसे व्याकुल कर देंगे। इस व्याकुलता में तुम्हारा ध्यान रावण के हृदय से निकल जायेगा। तब सुजान राम उसके हृदय में बाण मारेंगे, जिससे उसकी मृत्यु होगी। इस प्रकार के चित्रण द्वारा कवि ने त्रिजटा की विद्वत्ता, राम-प्रभाव का ज्ञान एवं उसकी तर्क-शक्ति आदि को अत्यन्त कुशलतापूर्वक चित्रित किया है।[६] कम्ब रामायण में त्रिजटा की कुशलता का ऐसा चित्रण नहीं पाया जाता।

---

१. कम्ब-रामायण ५/३/५३।
२. उपर्युक्त ५/३/५३।
३. कम्ब-रामायण, सुन्दरकाण्ड, ५/६/२२।
४. कम्ब-रामायण, ६/१६/६१।
५. उपर्युक्त ६।१६।९३-९४।
६. रामचरितमानस, ६/९९/७।

रामचरितमानस की त्रिजटा अपनी स्वप्न की बात राक्षसियों को सुनाती है,[1] जबकि कम्ब-रामायण की त्रिजटा इसे सीता को ही सुनाती है, अन्य राक्षसियाँ वहाँ पर सोई हुई हैं ।[2] तुलसीदास की त्रिजटा अपने स्वप्न को सुनाकर सीता को भयभीत करने वाली सब राक्षसियों को भयभीत करती है, जिससे वे डर कर सीता के 'चरनन्हि परीं' ।[3] कम्ब-रामायण में ऐसा उल्लेख नहीं पाया जाता । राम की असह्य विरह-वेदना से सीता अग्नि में आत्मोसर्ग करना चाहती हैं । इसके लिए त्रिजटा से 'काठ'[4] से चिता बनाने हेतु प्रार्थना करती हैं, जिसे त्रिजटा अस्वीकार देती है और उन्हें विविध भाँति से सान्त्वना देकर 'निज भवन' चली जाती है ।[5] कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन उपलब्ध नहीं है ।

त्रिजटा के मन में राम के प्रति गहरी आस्था है । वह सीता को सताने वाली राक्षसियों को रावण के आदेश के विरुद्ध उनका उचित मार्गदर्शन करती है तथा उन्हें स्वप्न की घटना सुनाकर भयाक्रान्त करके सीता के चरणों की सेवा कर उन्हें, अपना जीवन सफल बनाने का उपदेश देती है ।[6] अपनी इन्हीं चारित्रिक विशेषताओं के कारण सीता द्वारा त्रिजटा भी कौसल्या और सुनयना-सदृश 'मातु पद' प्राप्त कर सम्मानित होती है ।

मन्दोदरी

मयदानव की पुत्री, राम के प्रमुख प्रतिनायक रावण की पत्नी, परमवीर इन्द्रजीत की माता । मन्दोदरी का अर्थ है— मन्द' उदरवाली अर्थात् क्षीणकटि । 'सामुद्रिकशास्त्र' में नारी-सौन्दर्य का लक्षण बताया गया है । इस शास्त्र के आधार पर कम्बन ने मन्दोदरी के शरीर-सौष्ठव का सुन्दर, सजीव एवं प्रशंसनीय चित्रण किया है ।

कम्ब-रामायण में मन्दोदरी

कम्ब-रामायण में मन्दोदरी का चरित्र अतीव रूपवती, पतिपरायणा, पुत्र-वत्सला, कर्त्तव्यपरायणा और नीतिज्ञा के रूप में मिलता है । कम्ब-रामायण में सुन्दर-

---

१. रामचरितमानस ४/११/२ ।
२. कम्ब-रामायण ५/३/३० ।
३. रामचरितमानस ५/११/४ ।
४. उपर्युक्त ५/१२/२ ।
५. उपर्युक्त ५/२१/३ ।
६. उपर्युक्त ५'११/४ ।

काण्ड के 'अक्ककुमारवधैपड़ळम्' में मन्दोदरी का दर्शन मिलता है। आलोच्यग्रन्थ में कवि ने मन्दोदरी को एक अतीव सुन्दरी एवं पुत्रवत्सला के रूप में सर्वप्रथम पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है।[१] कम्बन मन्दोदरी के रूप-लावण्य पर मुग्ध हैं। इन्द्रजीत के वधोपरान्त उसके शव पर विलाप करने वाली मन्दोदरी के स्तन-युगल उन्हें कच्चे नारियल-सदृश, करकमल सदृश प्रतीत होते हैं और काले घने घुंघराले केश एँड़ियों का स्पर्श करने वाले हैं तथा उसके कटि भी है, इस पर भी सन्देह होता है।[२] जब पुत्र-वध-विषाद के अवसर पर आलोच्यकवि को मन्दोदरी इतनी अद्वितीय रूपवती तथा चित्ताकर्षक प्रतीत होती है, तो हर्ष के समय का उसका अप्रतिम सौन्दर्य तो मात्र अनुभूति का ही विषय प्रतीत होता है।

मन्दोदरी पुत्रवत्सला है। वह मेघनाद का शव देखकर अग्नि पर पाँव रखने वाले की तरह तड़पकर, व्याध के तीक्ष्ण बाण से निष्प्राण हुई मयूरी की भाँति उसके ऊपर गिर पड़ती है।[३] रावण की पट्टरानी होने के कारण भोग-विलास की सुख-सुविधाओं से घिरी हुई होने पर भी, उसे उन सब की क्षणिकता तथा जीवन की नश्वरता का सम्यक् ज्ञान है।[४]

इन्द्रजीत जैसे पराक्रमी पुत्र की मृत्यूपरान्त अपने पति रावण के जीवन के प्रति मन्दोदरी बहुत सशंकित हो जाती है।[५] मन्दोदरी को सीता नामक अमृत से निर्मित विष से सम्पूर्ण लंका के विनाश की आशंका है।[६]

सीता-राम को मन्दोदरी, लक्ष्मी-नारायण का अवतार मानती है। एक श्रेष्ठ पतिपरायणा एवं कर्त्तव्यपरायणा होने के कारण, वह अपने पति से, राम से शत्रुता त्यागने का परामर्श देती हुई, सीता को लौटाने के लिए निवेदन करती है। कम्बन भारतवर्ष की आदर्श पतिव्रताओं की सरणि में ही मन्दोदरी को प्रस्तुत करते हैं, वह रावण वधोपरान्त विलाप करती हुई कहती है कि मुझे क्रूरा को क्या पति के मृत्यूपरान्त ही मरना था? वह सुमंगली (सौभाग्यवती) के रूप में ही मृत्यु की आकांक्षिणी है और अपने इस दुर्भाग्य से व्यथित है।[७]

---

१. कम्ब-रामायण, अक्ककुमारवधैपड़ळम् ५/११/४९।
२. कम्ब-रामायण, रावणं-शोकपड़ळम् ६/२८/४४।
३. उपर्युक्त ६/२८/४५।
४. उपर्युक्त ६/२८/४७।
५. उपर्युक्त ६/२८/५३।
६. उपर्युक्त।
७. कम्ब-रामायण, रावणम्ववैप्पड़ळम् ६/३६/२३८।

मन्दोदरी, रावण के सीता-हरण-कुकृत्य से पूर्णतया असहमत है। इसके लिए वह उसको मिलने वाले दण्ड को भी उचित मानती है।[१] वह रावण की मृत्यु के पश्चात् विलाप करती हुई कहती है कि ऐसा प्रतीत होता है कि राम के बाणों ने तुम्हारे मन में बसी हुई सीता रूपी कामना को ढूँढ़ते हुए अंग-प्रत्यंग को टटोला है।[२]

मन्दोदरी नैतिक मूल्यों की समर्थक है। वह सीता के सौन्दर्य एवं पातिव्रत की प्रशंसिका है। मन्दोदरी को अपने पुत्र एवं पति के पराक्रम पर प्रबल आस्था है। रावण की मृत्यु के पश्चात् उसे यह सहसा विश्वास नहीं होता कि उसका पति किसी मनुष्य द्वारा मारा गया है।[३] मन्दोदरी परम पतिव्रता है। वह ईश्वर के रूप को पहचानने वाली है। मन्दोदरी सामान्य मनुष्य के रूप में भी राम को नारायण ही मानती रही है।[४] मन्दोदरी का चित्रण आलोच्यग्रन्थ में एक श्रेष्ठ पतिव्रता के रूप में मिलता है। पति की मृत्यु के पश्चात् शोक-सन्तप्ता मन्दोदरी रावण के शरीर पर विलाप करती हुइ गिर पड़ती है तथा तत्क्षण उसके प्राण-पखेरू उड़ गये। राम-कथा के सम्पूर्ण नारी पात्रों में मन्दोदरी ही सर्वश्रेष्ठ पतिव्रता है, मृत्यूपरान्त जिसकी स्वर्ग तथा विद्याधर की नारियाँ, पाताल की नारियाँ, मुनियों की स्त्रियाँ आदि सभी उसकी प्रशंसा करने लगती हैं।

रामचरितमानस में मन्दोदरी

कम्ब-रामायण की भाँति रामचरितमानस में भी मन्दोदरी का चित्रण राम-भक्ता के रूप में हुआ है। मन्दोदरी पतिपरायणा और अत्यन्त नीतिज्ञा है, जो धर्म-सम्मत कार्यों का सर्वदा समर्थन करती है। वह रावण द्वारा सीता-हरण को धर्म-नीति-विरुद्ध मानती है। रावण से वह सीता को राम के पास लौटाने हेतु बारम्बार आग्रह करती है। मन्दोदरी को सम्पूर्ण राक्षस जाति का कल्याण सीता को ससम्मान लौटाने में दिखलाई देता है।[५] मन्दोदरी बहुत दूरदर्शी एवं विवेकशीला है। उसकी दृष्टि में रावण के कुल-कमल-विनाशार्थ सीता शीतनिशा सम हैं। राम के पराक्रम एवं ईश्वरत्व से पूर्णतः अवगत मन्दोदरी रावण से कहती है कि सीता को लौटाये

---

१. कम्ब-रामायण, रावणम्वधैप्पड़ळम् ६/३६/२३९।
२. उपर्युक्त ६/३६/२४१।
३. उपर्युक्त ६/३६/२४-२६-२८।
४. उपर्युक्त ६/३६/२४५।
५. रामचरितमानस ५/३६/३-४।

बिना तुम्हारी रक्षा ब्रह्मा और शिव के द्वारा भी नहीं हो सकती।[१] धर्मपरायणा पत्नी होने के कारण वह अपने दुष्ट पति को विविध प्रकार से समझाती है तथा उसका हित-साधन चाहती है। रावण द्वारा उसकी बार-बार उपेक्षा होने पर मन्दोदरी अपने सान्त्वनार्थ यह मान लेती है कि "भयउ कंत पर बिधि विपरीता"[२] रावण द्वारा "लक्ष्मण-रेखा" को पार न कर पाना, हनुमान् द्वारा समुद्र-लाँघना, अशोक-वाटिका-उजाड़ना, लंका-जलाना, अक्षयकुमार की मृत्यु, शूर्पणखा की दुर्दशा, खर-दूषण की मृत्यु, कबन्ध-वध, समुद्र पर पुल बाँधने की घटनाओं आदि से, वह राम की महानता एवं रावण की लघुता-विफलता सिद्ध करती है।[३] वह तरह-तरह से रावण को समझाकर उसे अपना दुर्निर्णय बदलने के लिए प्रेरित करती है।[४]

रावण के हठ और दुराग्रह पर मन्दोदरी को उसका अन्त अवश्यम्भावी लगता है। वह अपने परामर्शों एवं निवेदनों का रावण पर कोई प्रभाव न देखकर उससे कहती है—"निकट काल जेहिं आवत साईं। तेहि भ्रम होइ तुम्हारिहि नाईं।"[५] मन्दोदरी का यह कथन सिद्ध होता है और रावण अपने सपरिजन युद्ध में मारा जाता है। पति के मृत शरीर को देखकर मन्दोदरी बहुविधि विलाप करने लगती है।[६] मन्दोदरी विलाप करते हुए कहती है कि हे नाथ! विधाता की सम्पूर्ण सृष्टि तुम्हारे वश में थी, किन्तु "रामविमुख अस हाल तुम्हारा। रहा न कोउ कुल रोवनिहारा॥[७] तथा उसकी दृष्टि में "राम विमुख यह अनुचित नाही।"[८]इस पतिपरायणा की विलाप की बातें भी क्या किसी धर्मज्ञ एवं तत्त्वज्ञानी के उपदेश अथवा सन्त-वाणी से कम हैं? यह पतिव्रता अपने विलाप में ही हमारी मुक्ति का सूत्र छोड़ जाती है। मानव-जीवन और तुलसीदास के मानस-प्रणयन का लक्ष्य इसके विलाप में स्पष्ट परिलक्षित होता है।

मन्दोदरी कहती है कि ब्रह्मा, शिव आदि जिसको प्रणाम करते हैं, उसको तुमने मनुष्य मानकर अवहेलना की, तब भी वह तुम्हें योगि समाज को दुर्लभ "निज

---

१. रामचरितमानस ५/३६/५।
२. उपर्युक्त ५/३६।
३. उपर्युक्त ६/३६।
४. उपर्युक्त ६/३६/१।
५. उपर्युक्त ६/३७/४।
६. उपर्युक्त ६/१०४/२।
७. उपर्युक्त ६/१०३/५-६।
८. उपर्युक्त ६/१०४/६।

धाम" दिया, वह कितना उदारमना है। रामचरितमानस की मन्दोदरी उस उदारमना को प्रणाम करती है।[1]—मन्दोदरी के इस करुण विलाप को सुनकर देवता, मुनि, सिद्ध, तपस्वी, शंकर, ब्रह्मा, नारद, सनकादि और जो भी "परमारथ-वादी" श्रेष्ठ मुनि थे, सभी ने सुख माना।[2] विभीषण अपने परिवार की स्त्रियों को देखकर अत्यन्त भारी मन से जाकर सबको सान्त्वना प्रदान करते हैं।[3] राम की आज्ञा से विभीषण रावण की अन्त्येष्टि क्रिया विधि-पूर्वक करते हैं। अन्त में मन्दोदरी रावण को तिलांजलि देकर मन में राम के गुणों का चिन्तन करती हुई, अपने भवन को चली जाती है।[4] रामचरितमानस में रावण के मृत्यूपरान्त मन्दोदरी अपने देवर से विवाह करके साम्राज्ञी बनकर राज्य के विविध सुखों में लिप्त हो जाती है। वह विभीषण के साथ उसकी पत्नी बनकर रहने लगती है। इस उल्लेख से अनन्य राम-भक्त विभीषण तथा श्रेष्ठ रामभक्ता मन्दोदरी—दोनों का ही चरित्र सामान्यतया आलोच्य हो जाता है, किन्तु तुलसीदास इसका समर्थन करने के पक्ष में नहीं हैं। उन्होंने इन घटनाओं का उल्लेख राम की शरणागतवत्सलता तथा भक्तदोषादर्शन हेतु ही किया है।

इस प्रकार मन्दोदरी एक श्रेष्ठ पतिव्रता, नीतिज्ञा, तत्त्ववेत्ता, धर्मज्ञा, देशकालानुसार व्यवहारविदा के रूप में रामचरितमानस में चित्रित है।

निष्कर्ष

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस में कविद्वय ने अपनी-अपनी दृष्टि रूपी कैमरे से मन्दोदरी का चित्र लिया है। कम्बन ने मन्दोदरी को अत्यन्त रूपवती, अनिन्द्य सुन्दरी तथा पातिव्रत धर्म की पराकाष्ठा पर चित्रित किया है। राम-कथा के सम्पूर्ण नारी पात्रों में इतनी सुदीप्त पातिव्रत वाली कोई भी नारी नहीं है। कौसल्या, सुमित्रा, कैकेयी, तारा आदि में किसी का भी पातिव्रत मन्दोदरी के पातिव्रत की समता नहीं कर पाता। कम्ब-रामायण में रावण के मृत शरीर पर विलाप करते हुए मन्दोदरी के प्राण पखेरू उड़ गये।[5] कम्ब-रामायण में विभीषण द्वारा रावण और मन्दोदरी के मृत शरीरों का एक साथ अन्तिम संस्कार किया जाता है, किन्तु रामचरितमानस में मन्दोदरी पति की मृत्यूपरान्त अपने देवर विभीषण

---

१. रामचरितमानस ६/१०७।
२. उपर्युक्त ६/१०४।
३. उपर्युक्त ६/१०५/२-३।
४. उपर्युक्त ६/१०५/४।
५. कम्ब-रामायण, मन्दोदरी पुलम्बूरूपड़ळम्, ६/३८/२९।

से विवाह करके साम्राज्ञी बनकर राज्य के विविध सुखों में लिप्त हो जाती है।[१] वह विभीषण के साथ उसकी पत्नी बन कर रहने लगती है, वह कम्बन की मन्दोदरी सदृश पति सहगामिनी नहीं हो जाती है। तुलसीदास के इस चित्रण से अनन्य राम-भक्त मन्दोदरी और राम के मित्र, सहायक एवं परम राम-भक्त विभीषण— दोनों का ही चरित्र आलोच्य हो जाता है। कम्बन की तुलना में तुलसीदास द्वारा इन दोनों राम-भक्तों को इस रूप में प्रस्तुत करना मर्यादा-सम्मत नहीं प्रतीत होता। इसके विपरीत कम्बन ने अपनी 'रामायणम्' में मन्दोदरी को आदर्श विधवा के रूप में प्रस्दुत करके न केवल उसके चरित्र को कलंकित होने से बचाया है, अपितु राम के अनन्य भक्त, सहायक-सेवक विभीषण के चरित्र को भी भारतीय-संस्कृति-आदर्श के अनुरूप-'तात तुम्हारि मातु बैदेही'[२] सदृश ही प्रस्तुत किया है। इस प्रकार कम्बन ने मन्दोदरी तथा विभीषण दोनों के ही चरित्र को आलोच्य एवं कलंकित होने से बचाया है। मानसकार ने ऐसा प्रयास नहीं किया है। पंचकन्याएँ पति की मृत्यु के पश्चात् पुनः कन्या मान ली जाती हैं। मन्दोदरी उन्हीं पंच-कन्याओं में से एक है। सम्भवतः इसी कारण से तुलसीदास ने उसे विधवा के रूप में चित्रित नहीं किया। तुलसीदास की दृष्टि में विभीषण की यह 'करतूति' एवं 'कुचालि' है।[३] इस कार्य में मन्दोदरी की भी सहमति रही होगी, तुलसीदास ने इसका कहीं पर भी उल्लेख नहीं किया है। मर्यादावादी एवं भारतीय आदर्श के प्रबल समर्थक-पोषक-रक्षक तुलसीदास को कदाचित् यह मान्य भी नहीं।

रामचरितमानस की मन्दोदरी राम को शिव, ब्रह्मा आदि द्वारा वन्दित मानकर, उनके भजनार्थ रावण को परामर्श देती है,[४] किन्तु कम्ब-रामायण की मन्दोदरी, राम की रावण से प्रशंसा इस रूप में नहीं करती। कम्ब-रामायण में रावण की मृत्यु के पश्चात् मन्दोदरी विलाप करते हुए कहती है कि मैंने तुम्हें राम से युद्ध न करने के लिए बार-बार मना किया, किन्तु तुम नहीं माने। वह किस रूप में तथा कहाँ पर रावण को मना करती रही, इसका उल्लेख कम्ब-रामायण में मन्दोदरी के विलाप के पूर्व नहीं मिलता। रामचरितमानस की मन्दोदरी कई प्रसंगों पर स्फुटवाणी में रावण से सीता को लौटा देने का निवेदन करती है। वह रावण को राम-भजन की भी परमर्श देती है।[५]

---

१. 'जेहि अघ बधेउ व्याध जिमि बाली। फिरि सुकंठ सोइ किन्हीं कुचाली॥
सोई करतूति विभीषण केरी। सपनेहूँ सोइ न राम हियं हेरी॥
—रामचरितमानस १/२९/३-४।

२. रामचरितमानस २/७४/१।

३. उपर्युक्त १/२९/३।

४. उपर्युक्त ६/१०४/७।

५. उपर्युक्त ५/३६/४, ६/१५ ख, ६/३१/१-७, ६/३७।

सौन्दर्य अनिन्द्य है। कम्बन अनिन्द्य सौन्दर्यवादी हैं। उन्होंने नारी-सौन्दर्य को सर्वदा सुःख-दुख की रेखा से ऊपर देखा है। वे नारी को कभी भी अवसाद-ग्रस्ता नहीं देखना चाहते। सम्भवतः इसी कारण पुत्र की मृत्यु के समय भी मन्दोदरी के सौन्दर्य की प्रशंसा अद्वितीय उपमानों तथा विविध उपमाओं से अलंकृत करके उसे विलाप करने के लिए उपस्थित करते हैं[1] जबकि तुलसीदास ने रावण की मृत्यु के समय अत्यन्त स्वाभाविक रूप में उसके विलाप का ही चित्रण किया है,[2] सौन्दर्य का नहीं।

आलोच्यग्रन्थद्वय में मन्दोदरी रावण को सीता-हरण-प्रसंग में अपराधी मानती है, उसे राम को वापस करने की परामर्श देती है और निवेदन करती है। दोनों ही राम को नारायण मानती हैं तथा उनके अद्भुत प्रभाव के प्रति आस्थावान् हैं।

---

१ कम्ब-रामायण ५/११/४९।

२. रामचरितमानस ६/१०४/२।

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस के नारी पात्र : चरित्र-चित्रणगत साम्य-वैषम्य

कम्बन और तुलसीदास के जीवन-काल में लगभग चार सौ वर्षों के समय तथा पच्चीस सौ किलोमीटर की दूरी का अन्तर है। स्वभावतः कविद्वय की धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक परिस्थितियों में प्रभूत भिन्नता है। कम्बन-कालीन चोल शासक वेदों में गहरी आस्था रखने वाले हिन्दू थे, तो तुलसीदास-कालीन यवन शासकों की आस्था कुरान में थी। चोल सम्राट् सब प्रकार से प्रजा को सुखमय बनाने में तत्पर एवं सचेष्ट थे, तो यवन सब प्रकार से जनता का शोषण कर रहे थे। अतएव कविद्वय के वर्णनों एवं पात्रों के चरित्रांकन में भिन्नता-प्राप्ति स्वाभाविक है।

भक्ति-भावना, पारमार्थिक, ऐहिकामुष्मिक तथा कल्याण-दृष्टि दोनों कवियों के मूल चेतना में समाविष्ट है। प्रस्तुत अध्याय में आलोच्यग्रन्थद्वय के नारी पात्र-चरित्र-चित्रणगत साम्य-वैषम्य तथा तद्धेतुओं का विश्लेषण उपस्थित किया जा रहा है।

साम्य

कम्बन तथा तुलसीदास दोनों ही वेदों में गहरी आस्थावाले हैं। अलोच्य-कविद्वय वेद-विरोधियों की निन्दा समानभाव से करते हैं। कम्बन ने वेद की निन्दा करने वाले को नरकगामी कहा है।[1] तुलसीदास ने भी वेद-विरोधियों की भर्त्सना करते हुए उन्हें रौरव नरकगामी कहा है।[2]

---

१. कम्ब-रामायण, २/४/१७८।

२. क. अतुलित महिमा वेद की तुलसी किएँ विचार।
जो निंदत निंदित भयो बिदित बुद्ध अवतार।।
—दोहावली, ४६४।

ख. रामचरितमानस ७/१००/२।

ग. 'सुर श्रुति निंदक जे अभिमानी।
रौरव नरक परहिं ते प्रानी।।'
—रामचरितमानस ७/१२१/१३।

कम्बन और तुलसीदास दोनों में समन्वय की भावना पायी जाती है। आलोच्यकविद्वय ने इसी भावना से शिव तथा राम को अपने काव्यों में समान रूप से प्रशंसा करते हुए प्रस्तुत किया है। कम्बन में विष्णु के समान ही शिव को भी महान् रूप में वर्णित किया है[१] तथा शिव एवं विष्णु को एक-दूसरे से छोटा बताने वालों की निन्दा की है।[२] तुलसीदास ने भी शैव और वैष्णव मतावलम्बियों के बीच के गहरे अन्तराल को समाप्त करने के उद्देश्य से राम (विष्णु) को शिव-भक्त तथा शिव को राम-भक्त के रूप में अनेकत्र चित्रित किया है।[३]

कम्बन और तुलसीदास दोनों ही परम वैष्णव हैं तथा दोनों ही रामानुज-मतावलम्बी हैं।

कम्बन के नारी-विषयक दृष्टिकोण के ही निकट तुलसीदास की भी नारी-विषयक दृष्टि है। कम्बन और तुलसीदास ने समानभाव से 'वेद विरोधी' आचरणरत तथा भारतीय संस्कृति के प्रतिकूल आचरण करने वाली नारियों की निन्दा की है।[४] नारियों को आलोच्यकविद्वय ने सहजरूप में अज्ञानता का प्रतीक माना है,[५] किन्तु कम्बन ने सत्कर्मा तथा धर्मोन्मुखी नारी को सदैव आदरणीया तथा श्रद्धा का पात्र माना है।[६] तुलसीदास भी ऐसी नारी के प्रति अत्यधिक उदार हैं।[७] कम्बन की तरह तुलसीदास नारियों के वेदानुकूल आचरण के प्रशंसक हैं।[८] कौसल्या के चरित्रांकन में आलोच्यकवियों ने उन्हें एक आदर्श माता के रूप में चित्रित किया है, जिनका भरत तथा राम पर समान स्नेह है। मातुल-गृह से वापस आने पर, निष्कलंकता प्रकट करने के उपरान्त भरत को देखकर कम्बन और तुलसीदास की कौसल्या का

---

१. कम्ब-रामायण, ४/१२/२४. युद्धकाण्ड, वीडणन्अडैक्कळपड़ळम्, ६/४१/२३, १/१९, १/१९/१६।
२. कम्ब-रामायण, ४/१३/२४।
३. 'सेवक स्वामि सखा सिय पी के'—रामचरितमानस—१/१५/२, १/१०४/४, १/२६/१, १/११६/१, ६/२/३, ६/२/४, ६/२, २/१०३/१, २/१०४, ७/४५।
४. कम्ब-रामायण, २/३/१७, ३/५/४४।
रामचरितमानस, २/१६२/२, ६/१६/१।
५. कम्ब-रामायण, ४/७/३१।
रामचरितमानस, २/४७/४।
६. कम्ब-रामायण, १/२/५९।
७. रामचरितमानस, ४/९/४।
८. उपर्युक्त १/१०२/२।

ऐसा मातृत्व उमड़ पड़ा कि उनके पीन-स्तनों से पयः स्रवित होने लगा। आलोच्यकविद्वय के इस वर्णन में अद्भुत साम्य है।[1]

'कार्येषु दासी, करणेषु मन्त्री, शय्यासु रम्भा' के रूप में आलोच्यग्रन्थद्वय में कौसल्या को भारतीय आदर्शों के सर्वथानुकूल आदर्श माता, आदर्श पत्नी, आदर्श पति-परायणा, स्नेहपूरिता, आदर्श सास, आदर्श राजमाता और श्रेष्ठ गृहिणी के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

दोनों महाकाव्यों की तारा राम के प्रभाव तथा पराक्रम से अवगत है, जो बालि को युद्ध करने से मना करती है, किन्तु दोनों महाकाव्यों में बालि, इसे नारी-सुलभ कायरता मानकर इस परामर्श की उपेक्षा करता है।

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस के प्रारम्भ में कविद्वय ने विविध उदात्त गुणों से परिपूर्ण अत्युत्तम नारी के रूप में कैकेयी का चरित्रांकन किया है, किन्तु कैकेयी के जीवन की उत्तरार्द्ध की मूर्ति को दोनों कवियों ने समान रूप से निन्द्य माना है।

तुलसीदासवत्,[2] कम्बन[3] भी कैकेयी की दुष्टता के आधार पर नारी-जाति की निन्दा करने से नहीं चूकते।

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस में मन्थरा का चरित्र समान रूप से दुष्टा के रूप में मिलता है। दोनों कवियों की मन्थरा क्रूरमना है।

ऊर्मिला का चरित्र-चित्रण दोनों महाकाव्यों में संक्षिप्त रूप में मिलता है। इसी भाँति माण्डवी और श्रुतकीर्ति का भी उल्लेख आलोच्यग्रन्थद्वय में संक्षिप्त रूप में ही हुआ है।[4] इस प्रकार तीनों पात्र कविद्वय द्वारा समान भाव से उपेक्षित हुए हैं।

सुमित्रा का चरित्र-आदर्श पत्नी, आदर्श सपत्नी, आदर्श माता तथा आदर्श विमाता के रूप में कम्ब-रामायण तथा रामचरितमानस में समान रूप से चित्रित हुआ है। राम-कथा का यही एक मात्रनारी पात्र है, जिसका चरित्र आद्योपान्त आदर्श रूप में चित्रित है, जो सभी प्रकार के मानवीय दुर्बलताओं से भी मुक्त है। सुमित्रा

---

१. कम्ब-रामायण, २/९/११८, ११९।
   रामचरितमानस, २/१६९/३।
२. रामचरितमानस, २/१६२/२।
३. कम्ब-रामायण, २/३/१६।
४. कम्ब-रामायण, १/२१/१०१-१०२।
   रामचरितमानस, १/३२५/छन्द-२-३।

द्वारा दोनों महाकाव्यों में दिया जाने वाला उपदेश पूर्णतया अनुपम तथा दिव्य है। आलोच्यकविद्वय द्वारा सुमित्रा का चरित्र समान रूप से वंदित तथा प्रशंसित रूप में वर्णित है।

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस में मन्दोदरी, सीता-हरण हेतु रावण को समान भाव से अपराधी मानती है। उन्हें राम के पास वापस करने का परामर्श देती है।[1] दोनों ही महाकाव्यों में मन्दोदरी राम के प्रति आस्थावान् रूप में प्रस्तुत की गयी है।[2]

त्रिजटा का चरित्रांकन आलोच्यग्रन्थद्वय में समान भाव से राम-भक्ता, सीता की सहायिका तथा उदारमना के रूप में हुआ है।[3] त्रिजटा समय-समय पर अपने नीति-निपुण वचनों से सीता को सान्त्वना प्रदान करती है। त्रिजटा रावण-पक्ष की एकमात्र ऐसी पात्रा है, जिससे सीता को कुछ सान्त्वना प्राप्त होती है।[4]

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस में शबरी का चरित्रांकन समरूपेण राम-भक्ता के रूप में हुआ है। आलोच्यग्रन्थद्वय में शबरी ने राम के लिए समान रूप से प्रेम-पूर्वक कन्दमूल-फल ही प्रस्तुत किया है।[5]

शूर्पणखा की राम के प्रति आसक्ति का चित्रण आलोच्यकविद्वय ने समान भाव से प्रस्तुत किया है। आलोच्यग्रन्थद्वय की शूर्पणखा-समानरूप से राम के सौन्दर्य पर आकृष्ट होकर, उनकी प्रशंसा करती है। वह दोनों कवियों द्वारा अत्यन्त सुन्दर रूप धारण करकर राम के सम्मुख भेजी गयी है।[6]

आलोच्यग्रन्थद्वय में सीता समान रूप से अयोनिजा के रूप में चित्रित हुई हैं। दोनों महकाव्यों में कंचन-मृग को देखकर, सीता नारी-सुलभ व्यवहार करती हुई चित्रित हैं।[7] सीता का चरित्रांकन दोनों महाकाव्यों में सर्वाधिक उदात्त गुण सम्पन्ना के रूप में हुआ है। आलोच्य कवियों द्वारा अतीव सुन्दरी, आदर्श पतिव्रता, अत्युत्तम धर्मज्ञा, दृढ़संकल्पा, विवेकशीला, सत्कुलप्रसूता, त्यागमयीरमणी, वीरक्षत्राणी

---

१. कम्ब-रामायण, ६/३१/३८-४०, रामचरितमानस, ५/३६/३-४।
२. रामचरितमानस, ६/१०४/७, कम्ब-रामायण, ६/३६/२४५।
३. कम्ब-रामायण, ५/६/२२, रामचरितमानस, ५/११/१।
४. कम्ब-रामायण, ५/३/९४, रामचरितमानस, ५/१२/३।
५. कम्ब-रामायण, ३/१२/३, रामचरितमानस, ३/३४।
६. रामचरितमानस, ३/१७/४, कम्ब-रामायण, ३/६/२२-२५।
७. रामचरितमानस, ३/२७/२-३, कम्ब-रामायण, ३/७।

के रूप में सीता का चरित्रांकन कम्ब-रामायण तथा रामचरितमानस में प्राप्त होता है।

इसके अतिरिक्त कम्ब-रामायण और रामचरितमानस में प्रबलतम रूप से कहा गया है कि विष्णु-राम-कथा कलिमलहारी और परम-विश्रामदायिका है। आलोच्यग्रन्थद्वय में सीता का पूर्वराग वर्णित है।[1] कम्बन एवं तुलसी ने इन्द्रादि देवताओं को समान रूप से स्वार्थी, ईर्ष्यालु, मलिन आदि माना है। आलोच्यकवि-द्वय की कविता विषयक मान्यताएँ भी प्रायः एक सदृश हैं, वे हरियशगान में ही वाणी की सार्थकता मानते हैं। उनकी दृष्टि में हरियशविहीन विविध काव्यांगों-रसछन्दालंकारयुक्त श्रेष्ठ रचना भी सुन्दर नहीं है। कम्ब-रामायण और रामचरितमानस में प्राप्त दर्शन एवं भक्ति-विषयक विचारों में अत्यधिक साम्य है। शकुन-अपशकुन, देवताओं द्वारा पुष्प वर्षा आदि समान रूप से मिलते हैं।

वैषम्य

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस पौराणिक महाकाव्य हैं। अतएव उनके वर्णन, शिल्प, प्रस्तुतीकरण, विस्तारादि में अन्तर होना स्वाभाविक ही है। आलोच्य-ग्रन्थों में प्राप्त कुछ विशेष वैषम्य यहाँ रेखांकित किये जा रहे हैं—

नारी के अंग-प्रत्यगों से सम्बन्धित विविध उपमाएं कम्ब-रामायण के वरैक्काट्चिप्पड़ळम् पूक्कोयपड़ळम्, पुनल्विळैयाट्टुप्पड़ळम्, उण्डाट्टुप्ड़ळम् स दृश मानस में सर्वथा अनुपलब्ध हैं।

तुलसीदास-कालीन समाज में सौभाग्यवती नारियाँ 'विभूषन हीना' थीं, तथा विधवाएं नित्य नवीन शृंगार करती थीं,[2] किन्तु कम्बन-कालीन समाज में नारियाँ आदर्श वैधव्यजीवन व्यतीत करती थीं।

दक्षिण भारत में सुमंगली महिलाएँ मंगल-सूत्र पहनती थीं, कम्ब-रामायण में सुमंगली नारियों का चित्रण इसी रूप में प्राप्त होता है, किन्तु पति की मृत्यु के पश्चात् वे मंगल-सूत्र नहीं पहनतीं तथा बालों में पुष्पमाला धारण नहीं करतीं, क्योंकि उनका क्षौर हो जाता है। कम्ब-रामायण में विधवाओं का चित्रण इसी रूप में मिलता है।

कम्ब-रामायण के वर्णन में दक्षिण भारत की परम्परा तथा संस्कृति के अनुसार राम सहित उनके भाइयों के विवाह में उनकी माँ तथा अयोध्या की अन्य

---

१. रामचरितमानस में कम्ब-रामायण सदृश पूर्वराग-प्रसंग नहीं मिलता है, किन्तु इस तरह का संकेत प्राप्त होता है—द्रष्टव्य रामचरितमानस, १/२२८-२३२।
२. रामचरितमानस, ७/९९/२।

स्त्रियाँ भी पुरुषों के साथ बारात में सुसज्जित होकर मिथिला जाती हैं।[1] यह प्रथा तमिलनाडु में अद्यावधि विद्यमान है। उत्तर भारत में ऐसी परम्परा न होने के कारण रामचरितमानस में इसे स्थान नहीं मिल सका है।

दक्षिण भारत में सुमंगली महिलाएँ 'मंगल-सूत्र' तथा केशों में पुष्प-माला बाँधती हैं। यह उनके लिए अनिवार्य है। वह अत्यन्त शुभ माना जाता है। कम्ब-रामायण में इसका अनेकत्र वर्णन मिलता है, किन्तु उत्तर भारत में इस प्रथा के न होने के कारण मानस में ऐसा वर्णन उपलब्ध नहीं होता है।

तमिलनाडु में वहाँ की परम्परा एवं प्रथा के अनुसार, विवाह दिन में होता है और वह भी पूर्वाह्न में ही। इसी कारण कम्ब-रामायण में कवि ने विवाह के पूर्व सूर्योदय का वर्णन किया है।[2] यह प्रथा तमिलनाडु में अद्यावधि विद्यमान है। इस प्रकार का वर्णन रामचरितमानस में नहीं मिलता।

उत्तर भारत की प्रथानुसार विवाह के समय महिलाएँ 'गाली' गाती हैं, राम-चरितमानस में यह वर्णन मिलता है।[3] दक्षिण भारत की संस्कृति में ऐसी प्रथा नहीं है, इसी कारण कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

दक्षिण भारत की संस्कृति में महिलाओं को कुछ अधिक स्वतंत्रता प्राप्त है—कन्दुक-क्रीड़ा, नृत्य-शालाओं में नृत्य-शिक्षा प्राप्त करना, जल-क्रीड़ा आदि के वर्णन से यह सिद्ध होता है।[4] रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता है।

दक्षिण भारत में 'मंगल-सूत्र' एवं बालों के पुष्प-मालाओं को तोड़कर फेंकना, महिलाओं के क्रोध की पराकाष्ठा को प्रकट करता है।[5] उत्तर एवं दक्षिण की देशीय संस्कृतिवश ऐसा वर्णन रामचतिमानस में नहीं मिलता।

उत्तर भारत में सौभाग्यवती नारियों द्वारा ललाट तथा सिर ढँकना कुली-नता, श्रेष्ठता और शिष्टता का प्रतीक माना जाता है, किन्तु दक्षिण भारत में ऐसा आचरण मात्र विधवाएँ करती हैं। सौभाग्यवती नारियों के लिए यह दक्षिण भारत में अत्यन्त अशुभ है।

---

१. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, एळुच्चिप्पड़ळम्।
२. कम्ब-रामायण, बालकाण्ड, कड़िमणपड़ळम्।
३. रामचरितमानस, १/३२९/१।
४. कम्ब-रामायण, १/३/४६।
५. उपर्युक्त, १/१६/२५।

कम्बन-कालीन समाज में पर्दा-प्रथा नहीं थी, किन्तु मानस-कालीन समाज में थी, जिसका वर्णन मानसकार ने अनेकत्र किया है।[1] दक्षिण भारत में तत्कालीन परम्परानुसार पुरुष भी अपने केशों में पुष्पमाला धारण करते थे। पुष्पमालाधारी जनक का उल्लेख मिलता है।[2] मानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

कम्ब-रामायण में 'वीर-वलयधारी' के रूप में कम्बन ने दशरथ, रावण, राम आदि का वर्णन अनेकत्र किया है।[3] मानस में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता।

दक्षिण भारत में नारियों के मद्यपान को उत्तर भारत सदृश हेयदृष्टि से नहीं देखा जाता। कम्ब-रामायण के बालकाण्ड में उण्डाट्टुप्पड़ळम् (मद्य-पान पटल) में कवि ने स्त्रियों के मद्य-पान का सुन्दर चित्रण किया है। उत्तर भारत में इसे दक्षिण भारण सदृश मान्यता प्राप्त नहीं है, जिसका कारण तत्तत्कालीन संस्कृति का प्रभाव है। रामचरितमानस में सम्भवतः इसी कारण ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

कम्बन-कालीन समाज में सती-प्रथा प्रचलित थी। सम्भवतः इसी कारण दशरथ की मृत्यु के पश्चात् उनकी साठ सहस्र पत्नियों के सती होने का उल्लेख मिलता है।[4] कम्ब-रामायण सदृश यह वर्णन रामचरितमानस में नहीं मिलता है।

कम्बन-कालीन समाज सुसमृद्ध तथा धन-धान्य से परिपूर्ण था। तत्कालीन समाज में स्त्रियाँ समादृत थीं। वे अत्यन्त पवित्र आचरण वाली[5] तथा अपने प्रासादों में अगरू-धूम प्रसारित करती रहती थीं।[6] उनका सर्वाधिक समय धार्मिक-कृत्यों में व्यतीत होता था।[7] कम्बन-कालीन समाज की स्त्रियाँ सर्वथा सम्माननीया थीं, जिनके केश, पुष्प कस्तूरी, केसर आदि अनेक सुगन्धित द्रव्यों से सुवासित रहता था। तुलसी-कालीन नारी की स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी। तत्कालीन नारी के केश ही एकमात्र उनके अब आभूषण रह गये थे। वे सर्वदा भूख से पीड़ित रहती थीं। कम्बन-कालीन नारी सर्वदा धार्मिक कृत्यों में लगी रहती थीं, नारी तुलसीदास-कालीन समाज में साधनहीना होने के कारण अनेक प्रकार से दुःखी थीं।[8]

---

१. रामचरितमानस, १/२२०/२, २/११७/३।
२. कम्ब-रामायण, १/२१/१०२।
३. पैरों में पहना जाने वाला श्रेष्ठ योद्धाओं का एक आभूषण, २ २/३७, ३/११/५७, ५/३/६६, ५/१५/५८, ३/१२/६।
४. कम्ब-रामायण, ८/६/१४०, १४१।
५. उपर्युक्त १/२/५६।
६. उपर्युक्त १/३/४२।
७. उपर्युक्त, १/२/३६।
८. रामचरितमास ७/१०२/१।

कम्बन-कालीन अत्यन्त समृद्ध समाज में विलासिता पल्लवित-पुष्पित होकर सर्वत्र अपनी हरीतिमा बिखेरे हुई थी। समाज में गणिकाओं का स्थान भी गौरव-पूर्ण था। तुलसीदास-कालीन समाज में घोर अनैतिकता व्याप्त थी। कम्बन-कालीन समाज में सर्वत्र समृद्धि थी, किन्तु तुलसीदास-कालीन समाज में सर्वत्र विपन्नता का ही बोलबाला था, तुलसीदास ने 'कलि बारहिं बार दुकाल परैं। बिनु अन्न दुखी सब लोग मरैं।'[1] रामचरितमानस में किया है।

कम्बन-कालीन समाज में वेदोक्त विधि से सभी कार्य सम्पन्न होते थे। सभी लोग सदाचारी थे तथा सत्कर्मों में निरत थे। इसमें स्त्रियों की दशा उत्तम थी। वे सर्वथा सम्माननीया थीं। तुलसी-कालीन समाज में सर्वत्र निर्धनता का बोलबाला था। नैतिकता का पतन इस रूप में हो चुका था कि 'नहिं मानत को अनुजा तनुजा।'[2]

तुलसीदास-कालीन समाज में वैदिक-कर्मों के प्रति लोगों की ऐसी धारणा थी कि—'श्रुति विरोध रत सब नर नारी।'[3] पापाचार, कदाचार, मिथ्याडम्बर, पाखण्ड, स्तेय, आदि का सर्वत्र बोलबाला था।[4] पुरुष, स्त्रियों के संकेत पर 'मरकट की नाईं' नृत्य कर रहे थे। सभी 'सब नर काम लोभ रत क्रोधी' थे तथा 'देव बिप्र श्रुति संत' के विरोधी थे।[5] स्त्रियों की स्थिति ऐसी थी कि 'सौभागिनी विभूषन हीना। बिधवन्ह के सिंगार नवीना।'[6]

तुलसीदास ने जिस रूप में नारियों के लिए नीति वचन रामचरितमानस में कहे हैं, ऐसे नीति-वाक्य कम्ब-रामायण में नहीं मिलते, क्योंकि कम्बन-कालीन नारी की सामाजिक स्थिति, आचार-विचार, क्रिया-कलाप रामचरितमानस-कालीन नारी से भिन्न थे। इसी कारण विधवाओं के प्रति कविद्वय की नारी दृष्टि में भी भिन्नता है। कम्बन-कालीन समाज में विधवाओं की जीवन-पद्धति शास्त्रोक्त विधि-विधानानुसार थी। कम्ब-रामायण में तारा का चित्रण इसका श्रेष्ठ दृष्टान्त है। तुलसीदासकालीन समाज में विधवाओं का आचरण शास्त्रसम्मत नहीं था। फलतः वे कम्बन-सदृश तुलसीदास का स्नेह-भाजन नहीं बन पायी हैं।

---

१. रामचरितमानस ७/१०१/५।
२. उपर्युक्त ७/१०२/३।
३. उपर्युक्त ७/९८/१।
४. उपर्युक्त ७/९८।
५. उपर्युक्त, ७/९९/२।
६. उपर्युक्त, ७/९९/३।

कम्बन अत्यन्त प्रगतिशील विचारधारा के कवि हैं। नारियों के प्रति उनका यही दृष्टिकोण है। कम्ब-रामायण में अहल्या, कैकेयी, तारा आदि के चरित्रांकन में कवि की यह दृष्टि परिलक्षित होती है। तुलसीदास इन बिन्दुओं पर कम्बन-तुल्य प्रतीत नहीं होते हैं।

ऊर्मिला, माण्डली और श्रुतकीर्ति के विवाह-प्रसंगों में, कम्बन ने इन तीनों कन्याओं का विवाह दशरथ के तीनों पुत्रों (राम के अतिरिक्त) से होने का उल्लेख किया है। कौन किसका पति तथा कौन किसकी पत्नी बनी, इसका उल्लेख कम्ब-रामायण में नहीं मिलता है,[1] किन्तु तुलसीदास ने स्पष्टरूप में इनके विवाह का नामतः उल्लेख किया है।[2]

तुलसीदास की सुमित्रा कैकेयी द्वारा राम-वन-गमन का समाचार प्राप्त कर, अपना सिर धुनने लगती हैं तथा कैकेयी को पापिनी कहती हैं।[3] कम्बन की सुमित्रा इस घटना को नियतिवश मानती हैं।[4]

कम्बन ने मन्दोदरी का चरित्रांकन अत्युत्तम पातिव्रत की पृष्ठभूमि पर किया है। रामकथा के सम्पूर्ण नारी-पात्रों में मन्दोदरी के पातिव्रत की समता वाला कोई चरित्र नहीं है। कम्ब-रामायण के चित्रण में रावण के मृत-शरीर पर विलाप करते हुए मन्दोदरी के प्राण पखेरू उड़ जाते हैं।[5] रावण और मन्दोदरी के मृत शरीरों का अन्तिम संस्कार विभीषण द्वारा एक साथ सम्पन्न किया जाता है। रावण के मृत्यूपरान्त विभीषण से विवाह करके एवं सामाज्ञी बनकर राज्य के विविध सुखों में मन्दोदरी के लिप्त होने की ध्वनि रामचरितमानस से निकलती है।[6] कम्बन की मन्दोदरी सदृश तुलसीदास की मन्दोदरी पति की सहगामिनी नहीं बनती है। कम्बन ने इस प्रकार के चरित्रांकन से मन्दोदरी तथा विभीषण दोनों के चरित्र को आलोच्य एवं कलंकित होने से बचाया है। मानसकार ने ऐसा प्रयास नहीं किया।

कम्बन की तारा को अपने अजेय पति 'बालि' के पराक्रम पर पूर्ण विश्वास है। अपनी इसी प्रबल आस्था के कारण, राम के एक बाण से बालि के मारे जाने पर, उसे इस पर सहसा विश्वास नहीं होता। इस 'बालि' को वह अपना महान्

---

१. कम्ब-रामयण, १/२१/१०१, १०२।
२. रामचरितमानस १/३२५/२,३।
३. उपर्युक्त २/७३।
४. कम्ब-रामायण, अयोध्याकाण्ड, नगरनीङ्गुपड़ळम्।
५. कम्ब-रामायण ६/३८/२९।
६. रामचरितमानस १/२९/३७४।

पराक्रमी पति 'बालि' मानने को तैयार नहीं है।[1] इसमें तारा को देवों की माया का संदेह होने लगता है।[2] रामचरितमानस में ऐसा वर्णन उपलब्ध नहीं है।

कम्ब-रामायण की तारा राज्य-कार्य में भी गहरी अभिरुचि रखती है। उसकी राज्य की गतिविधियों पर भी सूक्ष्म दृष्टि रहती है। राम-सुग्रीव की मैत्री तथा सहायता-सन्धि की सूचना, उसे चरों द्वारा बालि से पूर्व प्राप्त हो जाती है। इसी प्रबल साक्ष्य के आधार पर, वह अपने पति को सुग्रीव से युद्ध न करने का परामर्श देती है।[3] तुलसीदास की तारा अपने पति को यह परामर्श किस आधार पर देती है, इसका उल्लेख मानस में नहीं मिलता।

कम्ब-रामायण में कवि ने तारा के अप्रतिम सौन्दर्य-पक्ष और दिव्य व्यक्तित्व को भलीभाँति एवं विस्तारपूर्वक प्रस्तुत किया है। कवि ने तारा को अमृत-तुल्य पवित्र-सुखदायी, बाँस-सदृश कन्धों वाली[4] पर्वतोपम-स्तन जिनका अग्रभाग मुकुलित था,[5] मयूराभातुल्य रूप एवं कोकिल-समान मधुरभाषिणी,[6] घुँघराले काले केश, मोहक कन्धे, परिशुद्ध हृदय, पवित्रमन एवं आयताक्षी[7] के रूप में प्रस्तुत किया है। तारा के अप्रतिम सौन्दर्य पक्ष एवं व्यक्तित्व-पक्ष को इस रूप में रामचरितमानस में प्रस्तुत नहीं किया गया है।

रामचरितमानस की तारा, बालि का पैर पकड़कर, सुग्रीव से युद्ध न करने के लिए निवेदन करती है। कम्ब-रामायण में ऐसा उल्लेख प्राप्त नहीं होता है।

कम्बन की तारा अपने नीतिपूर्ण वचनों तथा युक्तियुक्त तर्कों-दृष्टान्तों द्वारा, बालि को राम से युद्ध न करने हेतु परामर्श देती है। रामचरितमानस की तारा ने इस रूप में बालि को परामर्श नहीं दिया है।

कम्बन की तारा अपने पति को परामर्श देती हुई समझाती है कि अभी कुछ ही समय पूर्व जो सुग्रीव तुमसे पराजित होकर भागा था, वही युद्धार्थ आया है। तारा को आभास होता है कि सुग्रीव को किसी शक्तिशाली व्यक्ति से सहायता प्राप्त हुई है।[8] रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

---

१. कम्ब-रामायण, किष्किन्धाकाण्ड, तारैपुळंबुरूप्पड़ळम् ४/९।
२. उपर्युक्त ४/८/१४।
३. उपर्युक्त ४/७/२८-३२।
४. कम्ब-रामायण ४/७/२२।
५. उपर्युक्त ४/८/२।
६. उपर्युक्त ४/७/२७।
७. उपर्युक्त ४/१०/४७।
८. उपर्युक्त ४/७/२४।

रामचरितमानस में बालि-बधोपरान्त तारा को व्याकुल देखकर, राम उसे ज्ञान का उपदेश देते हैं[१] तथा उसकी माया दूर करते हैं।[२] कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

कम्बन की तारा का अत्युत्तम पातिव्रत उस समय मुखरित होकर सम्मुख आता है, जब वह बालि की मृत्यूपरान्त अपने जीवित होने की निन्दा स्वतः करती है।[३] रामचरितमानस की तारा बालि की मृत्यु के पश्चात् राम से ज्ञान प्राप्त कर उनके चरणों को प्रणाम करके, उनसे परम भक्ति का वरदान प्राप्त करती है।[४] कम्ब-रामायण में इस प्रकार का वर्णन नहीं मिलता है।

रामचरितमानस की तारा, बालि-वधोपरान्त सुग्रीव की पत्नी बन जाती है; रामचरिमानस में इसका संकेतात्मक उल्लेख मिलता है।[५] तुलसीदास के इस चित्रण से अनन्य राम-भक्त तारा तथा राम के सहायक एवं भक्त सुग्रीव—दोनों का चरित्र आलोच्य बन जाता है। इसके प्रतिकूल कम्बन ने तारा को आदर्श विधवा के रूप में प्रस्तुत करके, इस चरित्र को, भारतीय-संस्कृति के सर्वथा आदर्शानुकूल 'तात तुम्हारि मातु बैदेही,[६] सदृश प्रस्तुत किया है।

कम्ब-रामायण में लक्ष्मण के क्रोध से भयभीत वानर-वृन्द, अपनी रक्षा में तारा को ही समर्थ समझते हैं। अतएव परस्पर परामर्श द्वारा इस आपदा से मुक्ति हेतु, वे तारा के पास जाकर निवेदन करते हैं।[७] रामचरितमानस की तारा को कवि ने ऐसी प्रधानता नहीं दी है।

कम्ब रामायण की तारा लक्ष्मण के कोप को शान्त करने हेतु हनुमान् के निवेदन पर अकेले (अंगद, हनुमान् आदि को मना करके) ही जाती है।[८] कम्बन ने इस चित्रण के द्वारा तारा का अदम्य साहस-अटूट आत्मविश्वास मुखरित किया है। रामचरितमानस में तारा के विश्वास और अदम्य साहस को इस रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया है।

१.-२. रामचरितमानस, ४/११/२।
३. कम्ब-रामायण, किष्किन्धाकाण्ड, ४/८।
४. रामचरितमानस, ४/११/३।
५. उपर्युक्त, १/२९/३–४।
६. उपर्युक्त, २/७४/१।
७. कम्ब-रामायण, ४/१०।
८. उपर्युक्त ४/१०/४२।

मंगल-सूत्र विहीन, अन्य रत्नमय आभूषणों से रहित, सुरभित मधुपूर्ण पुष्प-मालाओं से अभूषित, कुंकुम, चन्दन आदि रस से अलिप्त, पीन एवं तापमय स्तनी, 'क्रमुकवृक्ष' सदृश, अपने कण्ठ को अपने आँचल से ढँके हुए, अत्युत्तम पातिव्रत धर्म से युक्त, उदात्त गुणों वाली, अपूर्व तेजस्विनी-तारा को देखकर अत्यन्त कुपित लक्ष्मण का कोप शान्त हो जाता है। नारीरत्न तारा को देखकर उनके नेत्र अश्रु-पूरित हो गये। पातिव्रत धर्म से युक्त अप्रतिम ओजस्विनी तारा के मुखमण्डल को देखने का साहस खोकर लक्ष्मण आत्मग्लानि तथा संकोचवश सिर झुकाकर खड़े हो जाते हैं। उन्हें तारा की इस मूर्ति को देखकर अपनी विधवा माताओं का स्मरण हो जाता है। कम्ब-रामायण में लक्ष्मण अपनी माताओं के सदृश तारा को दुःखित पाते हैं। फलतः इस परमसाध्वी-विधवा के प्रति उनके नेत्रों से करुणा एवं श्रद्धा अश्रु के रूप में छलक पड़े।[1] तुलसीदास ने तारा को कम्ब-रामायण-सदृश श्रद्धेया के रूप में प्रस्तुत नहीं किया है।

कम्बन की तारा एक दूरदर्शी एवं कुशल राजनेत्री की भाँति लक्ष्मण से उनके आगमन का कारण अपनी सुमधुर-संगीतमय वाणी में पूछती है तथा उनके प्रश्नों का उत्तर एक अत्यन्त अनुभवी कूटनीतिज्ञ राजनयिक के सदृश देती है।[2] कम्ब-रामायण में लक्ष्मण-तारा-सम्भाषण में तारा का वाक्-चातुर्य, धर्मज्ञता, नीति-ज्ञता तथा राजधर्म का ज्ञान स्पष्टतः परिलक्षित हुआ है। रामचरित मानस में ऐसा वर्णन उपलब्ध नहीं है।

कम्ब-रामायण की तारा कुशल मनोवैज्ञानिक है। वह लक्ष्मण के क्रोध शमन हेतु उनकी प्रशंसा करते हुए कहती है—मैंने सुना है कि आप लोग शरणागतों के लिए माता से भी अधिक हितकारी हैं। कृपया अपने क्रोध को शान्त करें।[3] रामचरितमानस में ऐसा उल्लेख उपलब्ध नहीं है।

कम्बन की तारा न्याय-प्रिया एवं कृतज्ञा है। वह अपने देवर सुग्रीव की, लक्ष्मण से उसी तरह से रक्षा के लिए प्रयत्नशील है जैसे एक माँ अपने अबोध शिशु के लिए।[4] 'तात तुम्हारि मातु बैदेही'[5] की पंक्ति में तारा को कम्बन ने प्रस्तुत करके उसके चरित्र को श्रेष्ठ भारतीय अदर्शानुरूप चित्रित किया है। कम्बन-सदृश तारा

---

१. कम्ब-रामायण, ४/१०/५०-५४।
२. उपर्युक्त, ४/१०/४७-४९।
३. उपर्युक्त, ४/१०/५२-५६।
४. उपर्युक्त ४/१०/१७।
५. रामचरितमानस, २/७४/१।

की मूर्ति को तुलसीदास ने विविध-दिव्य रंगों से अलंकृत करने की ओर कदाचित् ध्यान नहीं दिया है।

रामचरितमानस में लक्ष्मण के कोप शमनार्थ सर्वप्रथम अंगद जाकर उनके चरणों पर सिर झुकाकर विनती करते हैं, तत्पश्चात् हनुमान् "तारा सहित" जाकर लक्ष्मण की चरण-वन्दना करते हैं।[१] रामचरितमानस की तारा लक्ष्मण के सम्मुख पहुँचकर उनके कोप-शमन हेतु क्या प्रयत्न किया—कम्ब-रामायण-सदृश रामचरितमानस में इसका उल्लेख नहीं है। रामचरितमानस में कम्ब-रामायण के समान तारा का गौरवमय चित्रण नहीं मिलता है।

कैकेयी के मनोरम रूप-लावण्य पर भ्रमर-सदृश गुंजार करने वाले दशरथ राम-वनगमन के लिए उत्तरदायी कैकेयी पर कुपित होकर, उसे जान से मार डालने के लिए सोचते हैं, किन्तु नारी-वध का अपयश उन्हें इससे विरत करता है।[२] रामचरितमानस में ऐसा उल्लेख उपलब्ध नहीं है।

कम्बन की कैकेयी दासियों के द्वारा वन-गमन हेतु राम को पहनने के लिए वल्कल वस्त्र भेजती हैं,[३] जबकि तुलसीदास की कैकेयी ने यह कार्य स्वयं अपने हाथों किया है।[४]

कम्बन की कैकेयी के बुद्धि-परिवर्तन का कारण मुनियों का तप, देवताओं की माया, राक्षसों के पाप तथा देवताओं के पुण्य हैं,[५] जबकि तुलसीदास की कैकेयी के बुद्धि-परिवर्तन का कारण मन्थरा एवं सरस्वती हैं।[६]

कम्ब-रामायण में मन्थरा का परिचय अत्यन्त क्रूरमना के रूप में मिलता है,[७] जबकि मानस में इसका प्रथम परिचय कवि ने "मंदमति चेरी" के रूप में दिया है।[८]

कम्बन की मन्थरा को शैशवावस्था में राम ने मिट्टी की गोलियों से उसके कूबड़ पर मारा था। इस घटना को याद करके, वह सर्वदा प्रतिशोध लेने हेतु प्रतीक्षा

---

१. रामचरितमानस ४/२०/१-२।
२. कम्ब-रामायण २/३/१५।
३. उपर्युक्त, २/३/१४७।
४. रामचरितमानस, २/७९/१।
५. उपर्युक्त, २/२/७७-७८।
६. उपर्युक्त, २/१२।
७. उपर्युक्त, २/२/३९।
८. उपर्युक्त, २/१२।

में रहती है तथा इसके लिए वह तिलमिलाती रहती है। रामचरितमानस से यह प्रसंग सर्वथा भिन्न है।

कम्बन की मन्थरा उस समय कैकेयी के पास पहुँचती है, जब वह निद्रित अवस्था में है, इतनी निद्रित है कि मन्थरा द्वारा पैरों का स्पर्श होने पर भी, उसके दीर्घ नेत्रों से निद्रा पूर्णतया नहीं हटती है।[१] वह कैकेयी के सोने हेतु उसे अधिकार-पूर्वक डाँटती है,[२] जबकि रामचरितमानस की मन्थरा के पहुंचने पर कैकेयी जागृत अवस्था में है, जो हँसकर उसका स्वागत करती है। मानस की मन्थरा वहाँ पहुंचते ही त्रिया-चरित्र करती हुई रोने लगती है।[३]

कम्ब-रामायण की मन्थरा, रामचरितमानस की मन्थरा की अपेक्षा कुछ अधिक दुस्साहसी प्रतीत होती है, जो कैकेयी द्वारा अपनी बात अस्वीकार होने पर, कैकेयी को धमकी देने लगती है तथा चिल्ला-चिल्ला कर उसकी निन्दा करती है।[४] रामचरितमानस से यह प्रसंग भिन्न रूप में कम्ब-रामायण में वर्णित है। मानस की मन्थरा कैकेयी से केवल निवेदन करती है।[५]

तुलसीदास की मन्थरा "कोउ नृप होउ हमहि का हानी"[६] की तटस्थ दृष्टि रखती है, किन्तु कम्बन की मन्थरा कैकेयी से कहती है कि वह दासी की दासी नहीं बन सकती।[७]

कम्ब-रामायण की मन्थरा, भरत को ननिहाल प्रेषित करने हेतु, दशरथ को दोषी मानती है,[८] जबकि रामचरितमानस की मन्थरा के अनुसार राजा ने यह कार्य कौसल्या के परामर्श पर किया है।[९]

कम्ब-रामायण में कैकेयी के मन परिवर्तन के पश्चात् मन्थरा का उल्लेख प्राप्त नहीं होता है, किन्तु रामचरितमानस में मातुल-गृह से लौटने पर, भरत कैकेयी की निन्दा करते हैं। शत्रुघ्न भी उनके साथ हैं, उसी समय मन्थरा वहाँ सुन्दर परि-

---

१. कम्ब-रामायण, २/२/४४।
२. उपर्युक्त २/२।
३. रामचरितमानस, २/१३/३।
४. कम्ब-रामायण, २/२/५४।
५. रामचरितमानस, २/१८/२०।
६. उपर्युक्त, २/१६/३।
७. कम्ब-रामायण, २/२/५४।
८. उपर्युक्त, २/२/५९।
९. रामचरितमानस, २/१८/१।

धान एवं अलंकारों से सुसज्जित होकर आती है। शत्रुघ्न ने उसके कूबड़ पर अपनी पूरी शक्ति से लात मारा, जिससे उसके कूबड़ एवं दाँत टूट जाते हैं, 'कपारू' फूट जाता है। वे उसका बाल पकड़ कर घसीटने भी लगते हैं।[1] कम्ब-रामायण में ऐसा उल्लेख उपलब्ध नहीं है।

कम्ब-रामायण में ताटका की कथा विस्तृत रूप में मिलती है,[2] तो रामचरितमानस में तुलसीदास ने इसकी कथा को अत्यन्त संक्षिप्तरूप में-मात्र एक चौथाई में ही समाप्त कर दिया है।[3]

कम्बन ने वाल्मीकि-सदृश इसे 'ताटका' नाम से अविहित किया है किन्तु तुलसीदास ने इसे तद्भवरूप 'ताड़का' नाम से सम्बोधित किया।

कम्बन के राम को ताटका के स्त्री होने के कारण, उसका वध करने में संकोच होता है, उनके मनोभावों को समझते हुए विश्वामित्र उसके निवारणार्थ कहते हैं कि जूड़ा बाँधने वाली, लज्जाशीला, भोली-भाली स्त्री का वध करने से मर्यादा अवश्य भंग होती है, किन्तु अत्याचारिणी को, दुष्टा को, जिसने दुष्कर्मों के सम्पूर्ण मानदण्ड तोड़ दिये हों, को भी क्या स्त्री समझना चाहिए।[4] कम्ब-रामायण में राम द्वारा किये गये नारी-वध के हेतु एवं औचित्य को स्पष्ट करते हुए यह कथा विस्तृत रूप में प्रस्तुत की गयी है, किन्तु रामचरितमानस में यह कथा इस रूप में उपलब्ध नहीं है।

ताटका-वध की कथा में कम्बन ने एक श्रेष्ठ नाटकीय उक्ति कही है—ताटका का गिरना क्या था, दसों सिरों पर मुकुट धारण करने वाले दशानन के सर्वनाश की सूचना थी, मानो उस दिन रावण की विजय-पताका ही टूटकर गिरी थी।[5]

कम्बन का यह वर्णन उनकी नितान्त मौलिक कल्पना है। यह वर्णन रामचरितमानस से सर्वथा भिन्न है। मानस में ऐसा वर्णन नहीं प्राप्त होता है।

अहल्या के चरित्रांकन में आलोच्यकविद्वय की दृष्टि में अत्यन्त भिन्नता है। कम्बन ने अहल्या के चरित्र को बहुत गम्भीरतापूर्वक लिया है। इसकी कथा का

---

१. रामचरितमानस, २/१६३/१-४।
२. सम्पूर्ण एक पटल—'ताटकैवधैप्पड़ळम्' में ७६ श्लोकों में कवि ने ताटका की कथा प्रस्तुत किया है।
३. रामचरितमानस, १/२०९/३।
४. कम्ब-रामायण, १/७/५५, ६४।
५. उपर्युक्त, १/७/७३।

उल्लेख उन्होंने ८६ पद्यों में विस्तारपूर्वक किया है, जबकि तुलसीदास ने मात्र २० पंक्तियों में इसे समाप्त कर दिया है।[1] कम्बन ने अहल्या के पत्थर होने के कारण को विस्तारपूर्वक प्रस्तुत किया है, जबकि तुलसीदास के वर्णन में शापग्रस्ता अहल्या की मुक्ति के लिए विश्वामित्र, राम को आदेश देते हैं। तुलसीदास ने अहल्या के शाप-ग्रस्त होने का कारण वर्णित नहीं किया है।

कम्बन के राम शापमुक्ता अहल्या को माता सम्बोधित कर उसकी चरण-वन्दना भी करते हैं,[2] किन्तु रामचरितमानस में राम द्वारा अहल्या की चरण-वन्दना का प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि तुलसीदास के राम भगवान हैं, मर्यादा पुरुषोत्तम हैं तथा अहल्या मात्र एक भक्त। इसी कारण तुलसीदास की अहल्या शाप-मुक्त होने पर राम के चरणों में लिपट जाती है।[3] प्रस्तुत चित्रण से कविद्वय की नारी-विषयक दृष्टि स्पष्ट परिलक्षित होती है। रामचरितमानस की अहल्या अपने को 'अपावन-नारि' कहती हुई राम से निवेदन करती है कि मैं आप की शरण में हूँ, मेरी रक्षा कीजिये।[4] इससे सर्वथा भिन्न कम्ब-रामायण में अहल्या की पवित्रता की प्रशंसा करते हुए महामुनि विश्वामित्र गौतम को आदेश देते हैं कि अहल्या मन से भी पवित्र है, तुम इसे स्वीकार करो।[5]

कम्बन की अहल्या के चरण-वन्दना राम करते हैं तथा उसे पूर्णतः पवित्र मानकर विश्वामित्र स्वीकार कराते हैं।

तुलसीदास की अहल्या आत्म-मुक्ति हेतु राम से स्तुति करती है,[6] जबकि कम्बन के राम अहल्या को उसके भावी जीवन हेतु उसके पति के आश्रम में जाने के लिए निवेदन करते हैं।

रामचरितमानस की अहल्या राम के प्रभाव द्वारा भूलोक से पति लोक को चली गयी, जबकि कम्ब-रामायण में अहल्या को स्वीकार करके गौतम उसे अपने

१. रामचरितमानस, १/२१०/६ से १/२११/४।
२. कम्ब-रामायण १/९/८३।
३. रामचरितमानस १/२११/१।
४. उपर्युक्त १/२११/२।
५. कम्ब-रामायण १/९/८५।
६. रामचरितमानस १/२११/१।

आश्रम में स्थान देते हैं, जिससे उसके अत्युत्तम पातिव्रत को संसार में प्रतिष्ठित करके उसे पूर्ववत् पूज्या बनाते हैं।

रामचरितमानस में कौसल्या वन-गमन-हेतु अनुमति माँग रहे राम से कहती हैं कि यदि तुम्हें माता-पिता दोनों ने वन जाने के लिए कहा है तो वन तुम्हारे लिए सैकड़ों अयोध्या-सदृश है।[१] कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन नहीं प्राप्त होता है।

कौसल्या राम को समझाती हुई कहती हैं कि वन-देवता तुम्हारे पिता, वन-देवियाँ तुम्हारी माता और पशु-पक्षी तुम्हारे सेवक होंगे। कम्ब-रामायण में ऐसा उल्लेख अप्राप्त है।

कौसल्या को मानस में शतरूपा का अवतार कहा गया है।[२] कम्ब-रामायण में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता। अपनी सुकोमला पुत्रवधू से दीपवर्तिकावर्धन तक का कार्य न लेने वाली कौसल्या नहीं चाहतीं कि वह वन के विविध कष्टों को सहन करे।[३] कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन नहीं प्राप्त होता है।

कम्बन ने त्रिजटा के मधुर स्वभाव का उल्लेख किया है, जबकि तुलसीदास ने रामचरितमानस में इसके स्वभाव के विषय में कुछ नहीं कहा है।

रामचरितमानस में त्रिजटा ने अपने स्वप्न की बात राक्षसियों के सम्मुख यथावत् प्रस्तुत कर देती है,[४] किन्तु कम्ब-रामायण में यह चित्रण अत्यन्त मनोवैज्ञानिक रूप में मिलता है। कम्बन की त्रिजटा ने इसे प्रत्यक्षदर्शिकावत् प्रस्तुत किया है।

तुलसीदास ने त्रिजटा का प्रथम परिचय रामभक्ता के रूप में दिया है।[५] कम्बन ने त्रिजटा को विभीषण की पुत्री के रूप में परिचय दिया है,[६] किन्तु मानसकार ने उनके सम्बन्ध का कोई उल्लेख नहीं किया है।

कम्बन की त्रिजटा अपने स्वप्न की बात सीता को बताती है। स्वप्न अधूरा होने के कारण सीता बालकों की तरह मचलती हुई, उससे स्वप्न की पूरी बात सुनाने हेतु हाथ जोड़कर निवेदन करती है। पुनः वह कहती है कि तुम अविलम्ब

---

१. रामचरितमानस २/५६/१।
२. उपर्युक्त २/५९/३।
३. उपर्युक्त २/५९/३।
४. उपर्युक्त ५/११/१,२।
५. उपर्युक्त, ५/११/१
६. कम्ब-रामायण ५/६/२२।

सो जाओ तथा स्वप्न का शेषांश भी देखो। कम्बन की त्रिजटा कहती है कि तुम तो सोती नहीं हो, अगर तुम भी सोई होती, तो तुम्हें भी यही स्वप्न दिखलायी पड़ता।[1] रामचरितमानस में ऐसा मनोवैज्ञानिक वर्णन नहीं मिलता।

सीता से अपनी बातें स्वीकार कराने हेतु रावण, 'माया-जनक' के वेश में अपार मायावी 'मरुत्तन' नामक राक्षस को सीता के पास भेजता है। वह माया निर्मित जनक रावण के प्रस्ताव को स्वीकार कराने हेतु सीता को समझाते हुए उससे अनेकविध निवेदन करता है। सीता उसकी बात अस्वीकार कर देती है। रावण 'माया-जनक' के वध की धमकी देते हुए उसे पकड़कर ले जाता है।[2] रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता है।

रामचरितमानस में त्रिजटा अपने स्वप्न की बात राक्षसियों को सुनाती है।[3] कम्ब-रामायण में त्रिजटा इसे सीता को ही सुनाती है, अन्य राक्षसियाँ वहाँ पर सोई हुई हैं।[4] तुलसीदास की त्रिजटा अपने स्वप्न को बात से सीता की त्रासिका राक्षसियों को सुनाती है, जिससे वे भयाक्रान्त होकर सीता के 'चरन्हि परी'।[5] कम्ब-रामायण में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता है।

तुलसीदास की सीता आत्मोत्सर्ग-हेतु चिता-बनाने एवं उसमें आग लगाने के लिए त्रिजटा से निवेदन करती हैं, जिसे वह अस्वीकार कर देती है।[6] कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन उपलब्ध नहीं है।

कम्बन और तुलसीदास के शूर्पणखा के चरित्रांकन में अत्यधिक भिन्नता है। कम्ब-रामायण में कुछ प्रसंग रामचरितमानस से सर्वथा भिन्न हैं, यथा—कम्बन की शूर्पणखा का राम के अप्रतिम सौन्दर्य को देखकर कामदेव के भ्रम में पड़ना,[7] राम के पास विलम्ब से आने का कारण मुनियों की सेवा में अपनी व्यस्तता बताना,[8] राम द्वारा शूर्पणखा के विवाह-प्रस्ताव को जाति-परम्परा के विरुद्ध मानना,[9] जिसे

---

१. कम्ब-रामायण ५/३/३९-५३।
२. उपर्युक्त, ६/१६/६१, ९३, ९४।
३. रामचरितमानस ४/११/२।
४. कम्ब-रामायण, ५/३/३०।
५. रामचरितमानस ५/११/४।
६. उपर्युक्त, ५/१२/२-३।
७. कम्ब-रामायण, ३/६/६।
८. उपर्युक्त, ३/६/४१।
९. उपर्युक्त, ३/६/४२।

शूर्पणखा द्वारा बुद्धिमत्तापूर्वक सिद्ध किया जाना कि उसका विवाह क्षत्रिय से भी हो सकता है,[1] राम द्वारा उसे—"हे सुन्दरी, हे स्त्रीरत्न" इत्यादि सम्बोधनों से सम्बोधित किया जाना,[2] रामचरितमानस से सर्वथा भिन्न हैं। शूर्पणखा को उसके भाई कुबेर अथवा माता-पिता द्वारा राम को प्रदान करने पर, राम द्वारा उसे स्वीकार करने का आश्वासन देना,[3] शूर्पणखा द्वारा बुद्धिमत्तापूर्वक गन्धर्वविवाह का प्रस्ताव करना,[4] इस विवाह से प्राप्त होने वाले विविध लाभों को विस्तारपूर्वक बताना,[5] शूर्पणखा-वार्ता के समय सीता का प्रवेश[6] करना, शूर्पणखा से भयभीता सीता का राम से लिपट जाना,[7] शूर्पणखा का पहले दिन लौट जाना,[8] उसका अत्यन्त सहज स्त्रियोचित विस्तृत विरह-वर्णन,[9] काम-पीड़ित होकर अपनी कामाग्नि को कम करने हेतु शूर्पणखा द्वारा अपने पुष्ट स्तनों पर शीतल हिम-खण्डों को रखना, जो उष्ण पत्थर पर रखे गये मक्खन-सदृश पिघल जाते हैं,[10] शूर्पणखा द्वारा सीता को पकड़ने के लिए दौड़ाना,[11] सीता सहित लक्ष्मण को भी पकड़कर आकाश में उड़ने का प्रयत्न,[12] इससे कुपित लक्ष्मण द्वारा शूर्पणखा के नाक-कान तथा कठोर स्तनाग्र को एक-एक कर काटना,[13] शूर्पणखा द्वारा राम से अपना कष्ट निवेदन करना, तथा इसी समय राम के सम्मुख गिर पड़ना,[14] शूर्पणखा-राम का रोचक सम्वाद,[15] नाक-कान, स्तनाग्र आदि के कटने पर भी शूर्पणखा का राम से विवाहार्थ

---

१. कम्ब-रामायण, ३/६/४३।
२. उपर्युक्त, ३/६/४४, ४६।
३. उपर्युक्त, ३/६/४६।
४. उपर्युक्त, ३/६/४७।
५. उपर्युक्त, ३/६/४८, ४९।
६. उपर्युक्त, ३/६/५०।
७. उपर्युक्त, ३/६/५९।
८. उपर्युक्त, ३/६/६४।
९. उपर्युक्त, ३/६/६५-८२।
१०. उपर्युक्त, ३/६/७१।
११. उपर्युक्त, ३/६/८५।
१२. उपर्युक्त, ३/६/८७।
१३. उपर्युक्त, ३/६/८७।
१४. उपर्युक्त, ३/६/८८।
१५. उपर्युक्त, ३/६/११०-११२।

नाक-कान कटने पर इनको भी अपने लिए लाभकारी सिद्ध करना, विवाह के लिए पुनः निवेदन करना, अपने पूर्वरूप को सद्यः प्राप्त करने में अपने को सक्षम बताना, विविध प्रलोभनों से राम को लुभाना,[१] सीता के रहते हुए भी राम से विवाह के लिए अपनी सहमति प्रदान करना,[२] राम के सम्मुख पहली बार पहुँचने पर शूर्पणखा द्वारा राम के चरणों का स्पर्श करना[३] इत्यादि कम्ब-रामायण में अन्य अनेक प्रसंग ऐसे हैं जो रामचरितमानस के वर्णन से सर्वथा भिन्न एवं रोचक रूप में शूर्पणखा के सम्बन्ध में पाये जाते हैं।

कम्ब-रामायण में सीता-हरण-प्रसंग रामचरितमानस की तुलना में भिन्न है। मानस में रावण सीता को रथ पर बैठाकर, "चला गगन पथ"।[४] रामचरितमानस के चित्रण में रावण द्वारा सीता का कई बार स्पर्श होता है। कम्ब-रामायण में यह वर्णन इससे भिन्न है। कम्बन का रावण उस आश्रम के स्थान को ठीक नीचे से एक योजन पर्यन्त खोदकर उठाकर अपने रथ पर रख लेता है।[५] इस प्रकार कम्बन ने सीता को अस्पृश्या के रूप में प्रस्तुत किया है। रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता। कम्ब-रामायण में लक्ष्मण को राम के सहायतार्थ भेजते समय सीता कहती हैं कि यदि तुम नहीं जाओगे तो मैं आत्मदाह कर लूँगी तथा वह निष्करुण होकर लक्ष्मण के प्रति कठोर शब्द कहने लगीं।[६] रामचरितमानस की सीता लक्ष्मण को "मरम बचन" कहती हैं।[७] रामचरितमानस के वर्णन में राम के पास सीता की आज्ञानुसार जाते हुए लक्ष्मण, सीता को वन और दिशाओं के देवताओं को सौंपकर जाते हैं।[८] कम्ब-रामायण में यह दायित्व लक्ष्मण गृद्धराज जटायु पर सौंपकर जाते हैं।[९]

तुलसीदास की सीता ऐसी कोमलांगी हैं, जो "पलंग पीठ तजि गोंद हिंडोरा" के अतिरिक्त उन्होंने कभी कठोर भूमि पर चरण नहीं रखी हैं।[१०] वह "चित्रलिखित

---

१. कम्ब-रामायण, ३/६/११९-१२६।
२. उपर्युक्त, ३/६/१३१।
३. उपर्युक्त, ३/६/३०।
४. रामचरितमानस, ३/२८।
५. कम्ब-रामायण, अरण्यकाण्ड, रावणन्शूळियपड़ळम्, ३/८/७४-७५।
६. उपर्युक्त, ३/८ १२-१३।
७. रामचरितमानस, ३/२४/१-३।
८. उपर्युक्त ३/२८/४।
९. कम्ब-रामायण, ३/८/७९।
१०. रामचरितमानस, २/५९/३।

कपि'' को भी देखकर भयभीत होने वाली हैं। कम्ब-रामायण में ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

राम-विरह में सीता को व्याकुल देखकर कम्बन के हनुमान् कहते हैं कि यदि आप चाहें, तो मैं आपको अभी अपने कन्धे पर बैठाकर राम के पास पहुँचा सकता हूँ। ऐसा करने पर सीता उन्हें बुरी तरह से डाँटती हैं। वह कहती हैं कि तुम पर-पुरुष हो। मैं इस प्रकार तुम्हारे साथ नहीं जा सकती, क्योंकि तुम्हारे साथ जाने से मेरे पति का अपमान होगा। इस चित्रण में सीता का श्रेष्ठ पातिव्रत एवं कुल-गौरव के प्रति सम्मान प्रकट होता है।[१] रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता है।

रामचरितमानस के चित्रण में रावण के वधोपरान्त राम के आदेश से सीता को लंका से लाने के पूर्व राक्षसियाँ ने 'बहुविधि' मंज्जन कराती हैं तथा अनेक प्रकार के आभूषण को पहनाकर 'रुचिर शिविका' (पलँग) में लाती हैं,[२] रामचरित-मानस से सर्वथा भिन्न, कम्ब-रामायण में यह वर्णन पवित्रता की अत्युत्तम भूमि पर कवि ने चित्रित किया है। कम्बन की सीता का स्नान राक्षसियों के स्थान पर मेनका, रम्भा, उर्वशी, तिलोत्तमा आदि अप्सराएँ तथा देवांगनाएँ कराती हैं।[३]

कम्बन की सीता को राम के पास लाने के लिए विमान पर बैठाया जाता है,[४] किन्तु तुलसीदास की सीता के लिए 'रुचिर शिविका' सजाकर लायी जाती है।[५]

कम्ब-रामायण में सीता की सच्चरित्रता की परीक्षा ली जाती है। कम्ब-रामायण के वर्णन में अग्निदेव प्रकट होकर सीता के पवित्रता की वकालत करते हुए, उन्हें निष्कलंक सिद्ध करते हैं।[६] कम्ब-रामायण में अग्निदेव और राम के सम्वादों में प्रचुर नाटकीयता पायी जाती है। रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं मिलता।

कम्ब-रामायण में सीता का परिचय राम ने गुह की भाभी के रूप में भी दिया है।[७] रामचरितमानस में सीता का परिचय इस रूप में नहीं मिलता।

---

१. कम्ब-रामायण, ५/६/१०-१९।
२. रामचरितमानस, ६/१०८/४।
३. कम्ब-रामायण, ७/३७/४१-४२।
४. कम्ब-रामायण, ७/३७/४७।
५. रामचरितमानस, ६/१०८/४।
६. कम्ब-रामायण, ६/३७/८६-९७।
७. उपर्युक्त, २/६/७३।

कम्बन की सीता अपने शाप से लंका को ही नहीं, अपितु अनन्त लोकों को भी जला सकती है, किन्तु इससे राम कलंकित होंगे, यह सोचकर वह रावण को शाप नहीं देती है। वह हनुमान् से कहती हैं कि अगर पर-पुरुष रावण मुझे स्पर्श कर लिया होता, तो क्या अब तक मैं जीवित रहती ?[1] रामचरितमानस में ऐसा वर्णन नहीं है।

कम्बन ने नारी-सौन्दर्य को अप्रतिम-अभिनव उपमाओं, रूपक, उपमान आदि से प्रस्तुत किया है, किन्तु तुलसीदास ने इस क्षेत्र में अपनी मर्यादावादी दृष्टि के कारण कम्बनवत् अभिरुचि नहीं ली है।

रामचरितमानस में राम ने शबरी को नवधा भक्ति का उपदेश दिया है।[2] कम्ब-रामायण में ऐसा उल्लेख अप्राप्य है।

कम्बन ने नारियों के सुडौल, मनोरम, आकर्षक कन्धों की उपमा चिकने बाँसों से दिया है। इसके अनेकत्र दृष्टान्त कम्ब-रामायण में मिलते हैं।[3] हिन्दी-साहित्य के लिए यह उपमा सर्वथा अनूठी है। रामचरितमानस ही नहीं, अपितु हिन्दी साहित्य में किसी कवि भी ने नारियों के आकर्षक-मनोरम कन्धों की उपमा, बास से नहीं दिया है।

वैषम्य के विविध हेतु

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस में प्राप्त-वैषम्य के कुछ सम्भावित कारण इस प्रकार हैं—

१. युग-भेद और तत्तत्कालीन परिस्थितियाँ

कम्बन और तुलसीदास के स्थितिकाल में सुदीर्घ अन्तराल है। अतएव तत्त-त्कालीन धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक परिस्थितियों में अन्तर होना स्वाभाविक है और यह सुनिश्चित भी है कि रचनाकार युगीन समाज तथा परि-स्थितियों से प्रभावित होता है। इसी कारण कम्बन और तुलसीदास-कालीन समाज में नारियों की स्थिति में प्रभूत भिन्नता दृष्टिगत होती है, इन्हीं भिन्नताओं के कारण आलोच्यग्रन्थद्वय में नारियों की विभिन्न स्थितियों का चित्रण भी भिन्न-भिन्न रूपों में हुआ है।

२. दक्षिण-उत्तर की परम्परा

यह कहा जा चुका है कि कम्ब-रामायण का रचनास्थल भारत का दक्षिण-प्रदेश (तमिलनाडु) हैं, जबकि रामचरितमानस का रचनाक्षेत्र उत्तर-भारत

---

१. कम्ब-रामायण, ५/६/१८-१९।
२. रामचरितमानस, ३/३५-३६।
३. कम्ब-रामायण, ३/६/१३१, ३११/५७, ४/७/२२, १/१६/६।

(उत्तर प्रदेश) है। अतएव आलोच्य विद्वद्द्वय के वर्णनों पर देशीय संस्कृति एवं वातावरण का प्रभाव स्पष्टतः परिलक्षित होता हैं।

३. भाव भूमिगत भेद

कम्बन और तुलसीदास राम-कथा के गायक हैं। कम्बन में लक्ष्मीनारायण का सर्वत्र प्राधान्य बना रहता है। वे कभी भी राम को विष्णु से श्रेष्ठ चित्रित नहीं करते हैं, किन्तु तुलसीदास राम-सीता को विष्णु-लक्ष्मी का अवतार मानते हुए भी उन्हें अनेकत्र विष्णु एवं लक्ष्मी से महत्तर तथा उच्चतर सिद्ध किया है।[1]

कम्बन और तुलसीदास की भावभूमि पृथक् पृथक् है। तुलसीदास 'सिय राममय सब जग' की धारणा रखते हैं, जबकि कम्बन लक्ष्मी-नारायण के अवतार सीता-राम के प्रशंसक भक्त हैं। इसी प्रकार कम्बन में दास्य-भाव उतना प्रधान नहीं है, जितना कि तुलसीदास में।

४. स्वभाव एवं मौलिकता

ग्रन्थकार का स्वभाव निश्चित रूप से उसकी रचना में अन्तर्व्याप्त रहता है, जिसका स्पष्टतः प्रभाव उसके ग्रन्थ में अनेकत्र परिलक्षित होता है। अतएव 'वैयक्तिक भिन्नता' के सिद्धान्तानुसार दो ग्रन्थकारों के ग्रन्थों में वैषम्य होना अपरिहार्य है। इसी भाँति 'मौलिकता' भी भेद का कारण है। आलोच्यग्रन्थद्वय में प्राप्त वैषम्य में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है।

---

१. (क) बिष्नु कोटि सम पालन कर्ता। —रामचरितमानस –७/९२/३।
ख. जयुं पेखन तुम्ह देखिनिहारे। बिधि हरि संभु नचावनिहारे।
—रामचरितमानस २/१२७/१
ग. देखे सिव बिधि बिष्नु अनेका। अमित प्रभाउ एक तें एका।।
—रामचरितमानस, १/५४/४
घ. संभु बिरंचि बिष्नु भगवाना। उपजहिं जासु अंस तें नाना।।
—रामचरितमानस, १/१४४/३
ङ. हरि हित सहित रामु जब जोहे। रमा समेत रमापति मोहे।।
—रामचरितमानस, १/३१७/२
च. राम बिरोध न उबरसि सरन बिष्नु अज ईस।।
—रामचरितमानस, ५/५६क
झ. जाकें बल बिरचि हरि ईसा। पालत सृजत हरत दससीसा।।
—रामचरितमानस, ५/२१।३

५. भाषा एवं संस्कृतिगत भेद—

कम्ब-रामायण की भाषा तमिळ है, जबकि रामचरितमानस की भाषा अवधी है। अतः भाषा की प्रकृति के कारण भी वैषम्य होना स्वाभाविक है।

कम्बन और तुलसीदास की वैयक्तिक-पारिवारिक जीवन, सामाजिक स्थि-तियों, उनके दार्शनिक मन्तव्य आदि का भी उनकी रचनाओं पर प्रभाव पड़ा है। फलतः वैषम्य होना स्वाभाविक है।

निष्कर्ष—

उपर्युक्त समस्त विवेचनोपरान्त कहा जा सकता है कि कम्ब-रामायण और रामचरितमानस के नारी-पात्रों का चित्रण तत्तत्कालीन संस्कृति से प्रभावित है। दोनों महाकाव्यों के नारी पात्र-चित्रण पर देशीय संस्कृति की भी सर्वत्र परिलक्षित होती है। नारी पात्रों के चरित्रांकन में पाये जाने वाले वैषम्य मूलतः न होकर, देश-काल परिस्थितिगत प्रतीत होते हैं। कम्बन और तुलसीदास में वैष्णव-भक्ति की मूल चेतना एवं पारमार्थिक प्रवृत्ति का ऐसा प्राबल्य है कि दोनों महाकाव्यों में पाये जाने वाले वैषम्य, साम्य के सम्मुख उभर नहीं सके हैं।

उपसंहार एवं प्रस्तुत अध्ययन की उपलब्धियाँ

जिन काव्य-कथाओं ने विश्व-साहित्य पर सर्वाधिक गहरी एवं अमिट छाप अंकित की है, उनमें राम-कथा का स्थान सर्वोपरि है। राम-कथा ने भारतीय वाङ्मय को ही नहीं, अपितु विश्व-वाङ्मय को भी प्रभावित किया है। आदि कवि से अद्यावधि यह कथा विविध रूपों में हमारे सम्मुख आयी है। प्रायः सभी भारतीय भाषाओं में इस अनुपम कथा का समय-समय पर प्रणयन् तथा अनेक देशी-विदेशी भाषाओं में इसका अनूदित होना—इसकी अप्रतिम लोकप्रियता-जनप्रियता, महनीयता, विलक्षणता आदि के व्यापक प्रभाव का स्पष्ट प्रमाण है। राम के वृत्त ने अनेक प्रतिभाओं—वाल्मीकि, कम्बन, रंगनाथ, तुलसीदास, मैथिलीशरण गुप्त, के० वी० पुट्टप्पा आदि को कवि-रूप में विकसित किया है।

हिन्दी साहित्य तथा हिन्दी-भाषी क्षेत्रों में जो लोकप्रियता तुलसीदास तथा उनके महाकाव्य 'रामचरितमानस' को प्राप्त है, वही जनप्रियता तमिळभाषा-साहित्य में कम्बन तथा उनके महाकाव्य 'कम्ब-रामायण' की है। रामचरितमानस हिन्दी साहित्य का सर्वोत्कृष्ट महाकाव्य है, तो कम्ब-रामायण को भी तमिळ-भाषा एवं संस्कृति का गौरवग्रन्थ होने का सुयश प्राप्त है। वाल्मीकिरामायण सदृश कम्ब-रामायण और रामचरितमानस शताब्दियों से विद्वजनों की प्रशंसा सहित सुलोक-प्रियता अर्जित किये हुए हैं।

राम-कथा का वातावरण सर्वदा व्यावहारिक आदर्श, मर्यादामय और पार-मार्थिक भक्ति-भावनामय रहा है। रामचरितमानस के अनुशीलन से जनसामान्य एवं सन्तों को आनन्द ही नहीं मिला, उसके पाठ से बहुत से साधारण लोग ऊँचे भक्त बन गये।[1] रामभक्ति का यह चमत्कार स्वाभाविक है, किन्तु वह रामभक्ति वेदादि-शास्त्रों में वर्णित अनादि-नित्य है। भक्ति के प्रभाववशात् कालुष्य तथा अहंकारयुक्त उग्रता नष्ट होकर सहृदयता, सरलता, सहजता, विनम्रता के रूप में परिणत होती ही है—'पाई न केहिं गति पतित पावन राम भजि सुनु सठ मना'।[2]

१. रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय—डॉ० भगवती प्रसाद सिंह, पृ० १६०।
२. रामचरितमानस, ७/१३०/छंद–१।

कम्बन और तुलसीदास को जनप्रियता के उत्तुंग शिखर पर प्रतिष्ठित कराने का श्रेय उनके इन्हीं ग्रन्थों—कम्ब-रामायण और रामचरितमानस को है। कम्ब-रामायण और रामचरितमानस का तमिळ और हिन्दी साहित्य की रामकाव्य-धारा में कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं है भाव-पक्ष एवं कला-पक्ष—दोनों दृष्टियों से आलोच्यग्रन्थ-द्वय राम-काव्य-धारा के श्रेष्ठ महाकाव्य हैं। इन दोनों महाकवियों की काव्य-मर्मज्ञता, कलात्मकता, भावुकता, गम्भीरता, रचना-कुशलता आदि अत्युत्तमता के प्रमाण हैं। विषय का प्रतिपादन, सद्गुणों का विकास, दुर्गुणों के प्रति कुत्साप्रदर्शन, अनूठी उपमाएँ, अद्वितीय पात्र-परिकल्पना, पात्रों का चरित्रअंकन, कथाओं—किम्वदन्तियों का कुशलतापूर्वक समावेश आदि सब कुछ अनूठे हैं। आलोच्य कवियों ने मर्यादित शृंगार के साथ-साथ असीम शौर्य, अतुलित पराक्रम, अद्वितीय शील, उत्कृष्ट रूप-सौन्दर्य तथा आदर्श प्रेम का निरूपण अत्युत्तम रूप में किया है।

कम्ब-रामायण और रामचरितमानस दक्षिण-उत्तर भारत की ही नहीं, अपितु दो भिन्न-भिन्न भाषाओं एवं संस्कृतियों की श्रेष्ठ एवं प्रतिनिधि रचनाएँ हैं। कम्बन और तुलसीदास की नारी-विषयक व्यापक दृष्टि तथा उनकी चित्रण-शैली का तुलनात्मक अध्ययन इस शोध-प्रबन्ध में प्रस्तुत किया गया है। कम्ब-रामायण और रामचरितमानस के नारी पात्र तत्तत्कालीन संस्कृति एवं समाज के प्रतिनिधि हैं। तत्तत्कालीन धार्मिक, आर्थिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों में नारी की सामाजिक स्थिति, देशीय संस्कृति तथा परम्पराओं ने आलोच्य कवियों की नारी-विषयक दृष्टि, चरित्र-चित्रण, पात्र-संकलपना आदि को किस भाँति तथा कहाँ तक प्रभावित किया है—इसका विस्तृत विश्लेषण पूर्वाध्यायों में किया जा चुका है।

प्रस्तुत अध्ययन की उपलब्धियाँ

निष्कर्ष रूप में प्रस्तुत तुलनात्मक अध्ययन की उपलब्धियाँ तथा सम्भावनाएँ अग्रांकित हैं—

१. कम्बन एवं तुलसीदास की लीला-दृष्टि समान है। दोनों का लक्ष्य आध्यात्मिक रूप में अपने आराध्यदेव के मर्यादापूर्ण चरित्र का अंकन करते हुए भक्त रूप में भावांजलि अर्पित करना भी है।

२. कम्बन और तुलसीदास—दोनों की दृष्टि सूक्ष्म से विराट् तक परि-व्याप्त है। उन्होंने भक्ति को एक अभिनव जीवन-दर्शन के रूप में ग्रहण किया है, जिसमें युगीन समस्याओं का समाधान भी सन्निहित है, किन्तु जिसकी भूमिका अपने युग तक ही सीमित नहीं है।

३. कम्बन और तुलसीदास ने समान रूप से शैव-वैष्णव मतों के प्रति सम्मान तथा श्रद्धा-भाव रखते हुए भी वैष्णव मत को वरीयता प्रदान की है आलोच्य-कविद्वय ने अखण्ड वैदिक-पौराणिक विचारधारा का समर्थन एवं उपबृंहण किया है तथा अवैदिक, नास्तिक एवं अपदेवता-उपासना विषयक विचारों का खण्डन किया है।

४. गुरु-महिमा, तीर्थाटन, देशव्यापी उन्मेष की कामना दोनों में मिलती है।

५. मानवीय दुर्बलताओं से परित्राण और मानव मात्र के कल्याण भावना का कम्ब-रामायण और रामचरितमानस में समान रूप से प्राबल्य पाया जाता है।

६. कम्ब-रामायण और रामचरितमानस तमिल और हिन्दी साहित्य के श्रेष्ठ महाकाव्य हैं, किन्तु धर्मग्रन्थ के भी रूप में इनकी जनमानस में सुप्रतिष्ठा है, क्योंकि आज भी आलोच्यग्रन्थद्वय के अनुष्ठान, परायण तथा प्रवचन हो रहे हैं, जैसे कभी पहले होते थे अथवा अब भी हो रहे हैं।

७. कम्ब-रामायण में रामचरितमानस सदृश दास्य-भाव नहीं पाया जाता है।

८ दशरथ की भाँति राम को बहु-पत्नीव्रती न चित्रित कर, एक पत्नीव्रती के रूप में दोनों कवियों ने प्रस्तुत किया है। इसके मूल में राम को आदर्श रूप में चित्रित करना ही नहीं है, अपितु समाज में नारी की महनीयता, गरिमा तथा उसकी मर्यादा को प्रतिष्ठापित करने की भावना का प्राबल्य भी प्रतीत होता है।

९. कश्मीर से अण्डमान निकोबार द्वीप समूह और अरब सागर से चीन एवं वर्मा की सीमाओं तक सम्पूर्ण भारतभूमि की संस्कृति एक है। 'अनेकता में एकता, इस 'संस्कृति की अपनी अद्वितीय विशेषता है, तथापि कम्ब-रामायण और रामचरितमानस तत्तत्कालीन देशीय संस्कृति एवं परम्परा से प्रभूतरूपेण प्रभावित हैं। कम्बन और तुलसीदास भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता के पोषक, रक्षक एवं उन्नायक हैं।

इस प्रकार के अध्ययन से उत्तर-दक्षिण तथा पूर्व-पश्चिम में भावनात्मक, रागात्मक एवं पार्थिव सम्बन्धों में सुदृढ़ता आयेगी, साथ ही साथ हम आदि शंकराचार्य द्वारा प्रस्थापित धामचातुष्टय की पुनीत परम्परा को साहित्य में भी ला सकेंगे, जो भारत की एकता, अखण्डता, भाषायी-सौहार्द्र को अक्षुण्ण तथा प्रबलतर बनाये रखने में परमोपयोगी सिद्ध होगा। यदि समुचित प्रोत्साहन मिला, तो भविष्य में मैं इतोऽडधिक अध्ययन करूँगा, ऐंसी कामना करता हूँ।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि भारतीय संस्कृति और साहित्य की सुदीर्घ परम्परा में कम्बन और तुलसीदास तथा उनके महाकाव्य-कम्ब-रामायण रामचरित

मानस का स्थान अद्वितीय है। अनूठे काव्य-सौन्दर्य से परिपूर्ण कम्ब-रामायण तथा रामचरितमानस विशाल रत्नाकर हैं, जिनमें कथाभिलाषी को कथा, साहित्यानुरागी को साहित्य और दर्शनेच्छु को दर्शन प्राप्त होता है। इनके काव्यरचना की दृश्यावली शोभन वस्तुओं की मनोरम स्वर्गस्थली है। कम्ब-रायायण और रामचरितमानस भारतीय संस्कृति की अमूल्यनिधि हैं। कम्बन तथा तुलसीदास की वाणी में इस देश की अपूर्व मनीषा और महान् जीवन-आदर्शों को रूप मिला है। आज तमिळ् और हिन्दी जगत् के ही नहीं, अपितु विश्व के मनीषी इन दोनों की महनीयता मुक्त कंठ से स्वीकार करते हैं। भारतीय संस्कृति, धर्म, साधना, भाषा आदि में जो कुछ उदान्त है, जो कुछ ललित है, जो कुछ मोहक और महनीय है, उसका प्रयत्नपूर्वक सँजाया, सलोना रूप कम्बन और तुलसीदास के महाकाव्य-कम्ब-रामायण और रामचरितमानस हैं। जिनमें भारतीय आदर्श और संस्कृति में जो कुछ सर्वोत्तम है, उसी की ध्वनि निनादित हो रही है।

ग्रन्थ-सूची

संस्कृत

१. अध्यात्मरामायण : प्र०-गीताप्रेस गोरखपुर, प्र०सं०—१९८२

२. अध्यात्मरामायण (मलयालम-राम-काव्य) : हिन्दी अनु० डॉ० एन०पी० कुट्टन पिल्ले, प्रका० भुवन वाणी ट्रस्ट—लखनऊ, प्र० सं०—१९७८

३. काव्य प्रकाशः : मम्मटाचार्य, सम्पादक—डॉ० नरेन्द्र ज्ञान-मण्डल लि० वाराणसी, प्र० सं०—१९७४

४. कौटिलीय-अर्थशास्त्रम् : व्याख्याकार वाचस्पति गैरोला, प्रका० चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी प्र० सं० —१९६२

५. निक्षेपरक्षा : हिन्दी अनुवाद एवं व्याख्याकार, प्रो० वि० एस० रंगनाथन, प्रका० श्री०—वेदान्तदेशिक सेवा संस्थान, त्रिदण्डिमठ, दारागंज, प्रयाग-६, प्र० सं०—१९८२

६. मनुस्मृति : प्रका०-गीताप्रेस, गोरखपुर

७. महाभारत : प्रका०-गीताप्रेस, गोरखपुर

८. वाल्मीकि-रामायण : प्रका०-गीताप्रेस, गोरखपुर प्र०सं०—१९८५

९. साहित्यदर्पण : आचार्य विश्वनाथ, चौखम्भा सीरिज वाराणसी, प्र०सं० १९८१

१०. शृंगार प्रकाश : भोजराज, सं०-चि० राघवन कृष्णनापुरम् स्ट्रीट मद्रास, प्र०सं०— ९७८

११. श्रीमद्वाल्मीकिरामायणम् : 'द्वितीय भाग' पर तनिश्लोषिटीका, प्रका० लक्ष्मी वेङ्गटेश्वर मुद्रणालय, कल्याण बम्बई प्र०सं०—१९३५

१२. श्रीमद्भगवद्गीता : प्र०-गीताप्रेस, गोरखपुर,

१३. श्रीवचनभूषणम् : श्रीमद् वरवरमुनिप्रणीत व्याख्यांसवलितम्, श्री-रघुनंदनमुद्रणालये, पुरी प्र० सं—१९२४

१४. हंससन्देशः : हिन्दी व्याख्याकार, प्रो० वि०एस०—रंङ्नाथन प्र०-त्रिदण्डिम०—दारागंज प्रयाग, प्र०सं०—१९७६

तमिल

१५. कम्बरामायणम् : प्रका० एस० राजम्, मरे एण्ड कम्पनी, ५, तम्बूचेट्टी स्ट्रीट मद्रास—६०००० १ प्र०सं०—१९५८

१६. कम्बरामायणम् : व्या० वैमूगोपालकृष्णाचार्य तमिळ व्याख्या सहित, प्रका०—तिरुवल्लिक्केणि, मद्रास, प्र०सं०— ९५५

१७. कम्बनकाव्यम् : एस० वैथ्यापुरिपिल्ले, प्र०का० तमिलपुस्तकालयम्, मद्रास ५, प्र० सं०—१९५५

१८. काप्पियक्क रूत्तोट्टंगल : के० मुत्तुराजन, प्रका० तेनतमिलपतिप्पकम्, शेलम् (तमिलनाडु) प्र०सं० १९८०

१९. कम्बर : डॉ० शुभ मानिक्कम्, प्रका० बेकनपतिप्पकम्, कारैकुड़ी, (तमिलनाडु), प्र०सं० १९७८

२०. कम्बनुम् मिल्टनुम् : डॉ० एस० रामकृष्णन्, प्रका० मीनाक्षी पुस्तकनिलयम् मदुरै, प्रथम संस्करण ।

२१. इलंगो अडिगल : मु० वरदराजन, साहित्य अकादेमी, द्वितीय संस्करण १९८३

22. A History of South India (Part 1) : K. A. Nilakantha Sastri, Translated by M. R. Perumal Maudaliar. 1st edition July, 1973, Nanbargal Achagam Madras-18.

28. Padinaravadu Karuttharangu : Aaivukovai Editors, 1st edition May, 1984, Shri Velan Press Chidambaram.

24. Pan Malar Poigai : T. A. Srinivasa Chari, October, 1953, Alliance Press Mylapore, Madras.

25. Tamil Nilavu : Dr. Kaj. Tha. Thirunaukarasu 1st Edition October, 1981, Narchaidi Achagam Madras-60.

26. Tamilum Tenum : Ve, Varadarajan M.A. III edition, 1974, Babu Printing Works-3 Anthoni Street Madras. 600014.

27. Vulaga Perum Kavinjar Kambar : R. V. Kamala Kaman, 1st edition December, 1984, Karpagam Achagam Madras-600002.

हिन्दी

२८. ओड़िया बैदेहिश-विलास (उड़िया भाषा का राम-काव्य) : अनु० सुरेशचन्द्र नंद, प्रका० भुवनवाणी ट्रस्ट लखनऊ, प्र० सं० १९८० ।

२९. आधुनिक खड़ी बोली काव्य में ऐतिहासिक सन्दर्भ (शोध-प्रबन्ध) : डॉ० निर्मला अग्रवाल

३०. कम्ब-रामायण (प्रथम-द्वितीय भाग) : अनु० श्री न० वी० राजगोपालन, प्रका० बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना प्रथम सं०

३१. कम्ब-रामायण (सभी भाग) : अनु० ति० शेषाद्रि, प्रका० भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ, प्र० सं० १९८०-८१ ।

३२. कम्ब-रामायण : अनु० (सारांश) सरस्वती रामनाथ, प्रका० कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर, प्र० सं० १९७७ ।

३३. कम्ब-रामायण और रामचरितमानस : डॉ० रामेश्वरदयालु अग्रवाल, प्रका० कल्पना प्रकाशन मेर०, प्र० सं० १९७३ ।

३४. कम्बन : एस० महाजन, प्रका०-साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, प्र० सं० १९७६ ।

३५. कम्बन और तुलसी : श्री शंकरराजु नायडू, प्रथम संस्करण १९५६

३६. कन्नड़ भारती (चौथी पुस्तक) : कर्नाटक सरकार के पाठ्यपुस्तक विभाग से प्रकाशित; (कन्नड़ डिप्लोमा की पुस्तक) प्र० सं० १९७८ ।

३७. कृत्तिवास रामायण (बंगला-राम-काव्य) : सम्पा० कविशेखर कालीदास राय, प्रका० शिशिर पब्लिशिंग हाउस, कलकत्ता-६ ।

३८. कालिदास की लालित्य योजना : हजारी प्रसाद द्विवेदी, प्रका० राजकमल प्रकाशन, प्र० सं० १९७० ।

३९. कवितावली : प्रका० गीताप्रेस, गोरखपुर, प्र०सं० १९८५

४०. कृष्णगीतावली : प्रका० गीताप्रेस, गोरखपुर, प्र०सं० १९८४

४१. गिरधर रामायण (गुजराती-राम-काव्य) : हिन्दी अनु० डॉ० गजानन नरसिंह सो० और डॉ० दीनेश हीरालाल भट्ट, प्रका० भुवन वाणी ट्रस्ट–लखनऊ, प्र०सं० १९७८

४२. गीतावली : प्रका० गीताप्रेस, गोरखपुर, प्र०सं० १९८४

४३. चोलवंश : के० ए० नीलकंठ शास्त्री, दि मैकमिलन, कंपनी आफ इंडिया लि० नई दिल्ली २, (प्रथम संस्करण १९७९) ।

४४. तमिळ् और उसका साहित्य : पूर्ण सोमसुन्दरम्, प्रका० राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, प्र० संस्करण ।

४५. तमिळ् साहित्य : दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा प्रकाशन, मद्रास, प्र० सं० १९६५ ।

४६. तुलसी की साधना : आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, प्रका० लोकभारती, इलाहाबाद, प्र० सं० १९०८ ।

४७. तुलसी : सम्पा०, डॉ० उदयभानु सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली, प्र० सं० १९६५ ।

४८. तुलसीदास : प्रकाशन विभाग, भारत सरकार प्र० सं० १९८३ ।

४९. तुलसी संदर्भ-मीमांसा : डॉ० रमासूद, प्रका० ग्रन्थम् कानपुर, प्र० सं० १९८० ।

५०. तुलसी काव्य मीमांसा : डॉ० उदयभानु सिंह, प्रका० राधाकृष्ण प्रकाशन, प्र० सं० १९६६ ।

५१. तुलसीदास की दृष्टि में नारी और मानव जीवन में उसका महत्व : डॉ० ज्ञानवती त्रिवेदी, प्रका० काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, प्र० सं० १९६७ ।

५२. तुलसीदासोत्तर हिन्दी राम-साहित्य : डॉ० रामलखन पाण्डेय, प्रका० अभिनव भारती, इलाहाबाद, प्र० सं० १९७२.

५३. तुलसीदास : डॉ० माताप्रसाद गुप्त, प्रका० हिन्दी परिषद्, हिन्दी विभाग. प्रयाग विश्वविद्यालय, प्र० सं० १९५३।

५४. तमिळ् स्वयं शिक्षक : एस० महालिंगम, प्रका० दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास, प्र० सं० १९७१

५५. तुलसी और उनका युग : डॉ० राजपति दीक्षित, प्रका० ज्ञान मण्डल लि० बनारस, प्र० सं० १९५२।

५६. तमिळ् और हिन्दी का भक्ति साहित्य : डॉ० एन० चन्द्रकान्त, हिन्दी प्रचार सभा मद्रास–१७, प्र० सं० १९७१।

५७. तुलनात्मक साहित्य : सम्पा० डॉ० नगेन्द्र, प्रका० नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली–२, प्र० सं० १९८५।

५८. तिरुवल्लूर एवं कबीर का तुलनात्मक अध्ययन : डॉ० रवीन्द्र कुमार सेठ, प्रका० नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली–६, प्र० सं० १९७२।

५९. दाशरथि शतकम् : रचयिता—रामदास, प्रका०, वि० रामस्वामी शास्त्री एण्ड सन्स, मद्रास, प्र० सं० १९५४।

६०. दोहावली : प्रका० गीताप्रेस, गोरखपुर, प्र० सं० १९८४।

६१. धर्म और समाज : डॉ० राधाकृष्ण, प्रका०—राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली प्र० सं०।

६२. नई नारी : रामवृक्ष बेनीपुरी, प्रका० न्यू लिटरेचर इलाहाबाद, प्रथम संस्करण।

६३. प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास : डॉ० जयशंकर मिश्र, प्रका० बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, प्रथम संस्करण-१९८०।

६४. प्राचीन भारतीय संस्कृति : बी० एन० लुनिया, प्रका० लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा–३ प्र० सं० १९७९।

६५. भक्तिकालीन राम कथा तथा कृष्ण-काव्य की नारी भावना : एक तुलनात्मक अध्ययन : डॉ० श्यामबाला गोयल, प्रका० विभू प्रकाशन, साहिबाबाद, प्र० सं० १९७६।

६६. भारती : अनुवादिका सुमति अय्यर, साहित्य अकादमी, प्र० सं० १९८४।

६७. भारतीय दर्शन (दोनों भाग) : डॉ० राधाकृष्णन्, हिन्दी अनुवादक—नन्द-किशोर, गोभिल, प्रका० राजपाल एण्ड सन्स, प्र० सं० १९८६।

६८. भानु भक्त रामायण : हिन्दी अनु० नन्दकुमार आमात्य, सुश्री तपेश्वरी आमात्य, प्रका० भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ, प्र० सं० १९७६।

६९. भुशुण्डि रामायण : डॉ० भगवती प्रसाद सिंह, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।

७०. माधव कन्दली रामायण : हिन्दी अनुवाद—नवारुण वर्मा, प्रका० भुवन वाणी ट्रस्ट लखनऊ, प्र० सं० १९७४ ई०।

७१. मानस की महिलाएँ : रामानन्द शर्मा, कन्या कुमारी प्रकाशन, २८ नन्दनमः मद्रास-१८, प्र० सं० १९६२।

७२. मानस-चरित्रावली (सभी भाग) : रामकिंकर उपाध्याय, प्रका० बिरला अकादमी आफ आर्ट एण्ड कल्चर, कलकत्ता-२६, प्र० सं० १९७१।

७३. मानस-मुक्तावली : रामकिंकर उपाध्याय, प्रका० बिरला अकादमी आफ आर्ट एण्ड कल्चर कलकत्ता, प्र० सं० १९७३।

७४. मानस-मंथन : रामकिंकर उपाध्याय, प्रथम संस्करण।

७५. मानस-पीयूष (सभी भाग) : सम्पा०—श्री अंजनी नन्दन शरण, प्रका०—गीताप्रेस, गोरखपुर, प्र० सं० १९७४।

७६. मोल्ल रामायण (तेलुगु-राम-काव्य) : हिन्दी अनु० डॉ० सी० एच० रामुलु, प्रका० भुवन वाणी ट्रस्ट लखनऊ, प्र० सं० १९७७।

७७. राम-कथा (उत्पत्ति और विकास) : कामिल बुल्के, प्रका० हिन्दी परिषद् प्रकाशन, हिन्दी विभाग, प्रयाग विश्व-विद्यालय, प्रयाग, प्र० सं० १९७१।

७८. रामकथा के पात्र : डॉ० भ० ह० राजूरकर, प्रका० ग्रन्थम, रामबाग कानपुर—१२, प्र० सं० १९७२।

७९. रामायण मीमांसा : स्वामी करपात्री जी, प्रका० धर्मसंघ शिक्षा मण्डल, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी, प्र० सं० १९७७।

८०. रामकाव्य के प्रगतिशील आयाम : डॉ० लक्ष्मीनारायण दुबे, प्रका०, सत्येन्द्र प्रकाशन, अल्लापुर, इलाहाबाद, प्र० सं० १९८२।

८१. राम-काव्य धारा: अनुसन्धान एवं चिन्तन : डॉ० भगवती प्रसाद सिंह।

८२. रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय : डॉ० भगवती प्रसाद सिंह, प्रका०, अवध-साहित्य-मन्दिर, बलरामपुर, प्र० सं०-१९५७।

८३. रामचरितमानस पर विजया टीका : टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी, सम्पादक-श्रीनाथ मिश्र, प्रका०-इन्डियन डवलपमेन्ट ट्रस्ट, कलकत्ता-१ प्र० सं०-१९८०।

८४. रामस्वयंवर : महाराजाधिराज रघुराज सिंह, प्रका०-खेमराज श्रीकृष्णदास श्रीवेंङ्कटेश्वर स्ट्रीम) प्रेस बम्बई प्र० सं०-१९०१।

८५. रामरसायन : कविवर रसिकबिहारी, प्रका० श्रीवेङ्क-टेश्वर स्टीम यंत्रालय बम्बई प्र० सं०-१९२१।

८६. राधेश्याम 'रामायण' : पं० राधेश्याम कथावचक, प्रका० राधेश्याम-पुस्तकालय, बरेली प्र० सं०-१९७०।

८७. रामचरितमानस (मूल मझला साइज पद्य-संख्या इसी से दी गयी है।) : तुलसीदास, प्र० गीता प्रेस, गोरखपुर प्रथम सं०-१९८४।

८८. विनयपत्रिका : तुलसीदास, प्रका० गीताप्रेस, गोरखपुर प्र० सं०-१९८४।

८९. वाल्मीकि युगीन भारत : डॉ० मंजुला जायसवाल, प्रका० महामति प्रकाशन-इलाहाबाद प्र० सं०-१९८३।

९०. वाल्मीकि रामायण एवं रामचरितमानस का तुलनात्मक अध्ययन : डॉ० विधा मिश्र, विश्वविद्यालय हिन्दी प्रकाशन, लखनऊ विश्वविद्यालय।

९१. विवाह की मुसीबतें : रामधारी सिंह दिनकर, प्रका० स्टार पब्लिकेशन, नई दिल्ली-१-प्र० सं०-१९७५।

९२. विश्व साहित्य में रामचरितमानस : राजबहादुर लमगोड़ा, प्रका० नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, प्र० सं०-१९४३।

९३. शबरी : आचार्य सीताराम चतुर्वेदी-प्रका०, अखिल भारतीय विक्रम-परिषद, काशी, प्र० सं०-१९५२।

९४. शबरी : धनंजय अवस्थी, संगम प्रकाशन, शहरारा बाग, इलाहाबाद-३ प्र० सं० १९८१।

९५. शबरी : नरेश मेहता, प्रका० लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद-३-प्र० सं० १९८३।

९६. शबरी : मायादेवी शर्मा, प्र० सं०-१९६३।

९७. शबरी : वचनेश जी, प्रका०, हनुमत प्रेस, कालाकांकर (अवध) प्र० सं०-१९३६।

९८. शबरी : आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, प्रका०, अखिल भारतीय विक्रम-परिषद काशी, प्र० सं०-१९५२।

९९. सूरसागर : सम्पा० नन्ददुलारे बाजपेयी, प्रका० नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी, प्र०सं० १९६४।

१००. श्रीमद्भागवत और तुलसी-साहित्य तुलनात्मक अनुशीलन : डॉ० हरिशंकर मिश्र, प्रका० सरस्वती प्रकाशन, इलाहाबाद प्र० सं०-१९८५।

१०१. श्रीराम विजय (मराठी-रामकाव्य) : हिन्दी अनु० डॉ० भजाननर सिंह साठे, प्रका० भुवनवाणी ट्रस्ट लखनऊ प्र० सं०-१९७६।

१०२. श्रीरामायणदर्शनम्: एक मूल्यांकन : डॉ० पी० एम० वामदेव, प्रका० संजय बुक सेन्टर वाराणसी प्र० सं०-१९८० ।
१०३. हिन्दी-तमिळ प्रवेशिका : डॉ० विश्वनाथ मिश्र, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद—१. प्र० सं०—१९६७ ।
१०४. हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास : आचार्य चतुरसेन शास्त्री प्रका० मेहरचन्द्र लक्ष्मणदास, जैन स्ट्रीट, सैदमिट्ठा बाजार, लाहौर प्र०सं०—१९४६ ।
१०५. हिन्दी साहित्य का इतिहास : सम्पा० डॉ० नगेन्द्र, प्रका०—नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली-२; प्र० सं०१९८०
१०६. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास : डॉ० रामकुमार वर्मा, प्रका० रामनारायण लाल. कटरा, इलाहाबाद प्र०सं-१९६४ ।
१०७. हिन्दी भाषा और साहित्य : डॉ० श्यामसुन्दर दास, प्रका० इण्डियन प्रेस प्रयाग, प्रथम संस्करण ।
१०८. हिन्दी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, प्रका० नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ,
१०९. हिन्दी साहित्य की भूमिका : आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, प्रका० हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर, कार्यालय बम्बई-४, प्र०सं० १९६३ ।
११०. हिन्दू विवाह में कन्यादान का स्थान : सम्पूर्णानन्द, प्रका० भारती ज्ञानपीठ, काशी, प्र०सं०—१९५४ ।
१११. त्रिवेणी : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, सम्पा० कृष्णानन्द प्रका०-नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, प्र०सं०—१९७५ ।
११२. डॉ० शिवमंगल सिंह 'सुमन' के काव्य में राष्ट्रीयता : डॉ० वि० के० बालसुब्रह्मण्यन्, पीताम्बर प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण ।

पत्रिकाएँ तथा शब्दकोश

१३ कल्याण (मासिक) : प्रकाशक-गीता प्रेस गोरखपुर ।
१४. कल्याण (भक्त-चरितांक) : सम्पादक-हनुमान प्रसाद पोद्दार गीता प्रेस, गोरखपुर, प्र०सं०—१९५३ ।

११५. कल्याण (नारी अंक : भाग १-२) : सम्पा० हनुमान प्रसाद पोद्दार गीता प्रेस, गोरखपुर, प्र०सं०—१९४८ ।

११६. कल्याण (वाल्मीकिय रामायणांक) : उपर्युक्त, प्र०सं०—१९४३ ।

११७. कल्याण (हिन्दू संस्कृतिः अंक एक) : सम्पा०-हनुमान प्रसाद पोद्दार गीताप्रेस, गोरखपुर, प्र०सं०—१९५० ।

११८. कल्याण (मासिक) : प्रका०—गीताप्रेस, गोरखपुर ।

११९. दक्षिण भारत (साहित्यिकः त्रैमासिक) : प्रका०दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास— ७ ।

१२०. सम्मेलन पत्रिका (त्रैमासिक) : प्रका०-हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ।

१२१. हिन्दुस्तानी (त्रैमासिक शोध पत्रिका) : प्रधान सम्पा०-डॉ० रामकुमार वर्मा, प्रका० हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद ।

१२२. श्री वैष्णव सम्मेलन(मासिक) : प्रका०-श्री वैष्णव सम्मेलन, त्रिदण्डीमठ, दारागंज, प्रयाग-६ ।

१२३. अंग्रेजी-हिन्दी कोश : फ़ादर कामिल बुल्के प्रका०-एस० चन्द गण्ड कम्पनी नई दिल्ली, प्र०सं०—१९८४ ।

१२४. अंग्रेजी-हिन्दी कोश : प्रो० आर० सी० पाठक, वितरक, गंगा पुस्तकालय, त्रिलोचन, वाराणसी ।

१२५. हिन्दी साहित्य कोश (भाग-दो) : प्रधान सम्पा० डॉ० धीरेन्द्र वर्मा प्रका०-ज्ञान मण्डल लि० वाराणसी, प्र०सं०—१९६३ ।

१२६. मानस चरित्र कोश : डॉ० भ० ह० राजूरकर, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, प्र० सं०—१९८० ।

१२७. संक्षिप्त हिन्दी शब्दसागर : प्रका०-नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, प्र० सं—१९८१ ।

१२८. ज्ञान शब्द कोश : प्रका० ज्ञान मण्डल लि० वाराणसी, प्र० सं० १९५१ ।
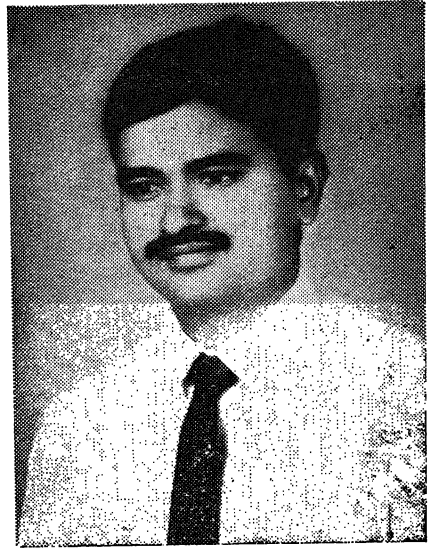
लेखक-परिचय

जन्म-स्थान : ८ जुलाई, १९५९ ई०
ग्राम तथा डाकघर-रानीपुर, जनपद—गाजीपुर, उत्तर प्रदेश।

शिक्षा : प्रारम्भिक शिक्षा : गृह-ग्राम—रानीपुर तथा जनपद—गाजीपुर। उच्च शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम० ए० (हिन्दी) तथा डी० फिल्०।

अध्यापन : दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास के उच्च शिक्षा और शोध संस्थान के स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग में प्रवक्ता के रूप में कार्यरत।

सम्प्रति : मद्रास क्रिश्चियन कालेज ताम्बरम, मद्रास, के हिन्दी विभाग में सहायक प्रोफेसर के पद पर कार्यरत।

प्रकाशन : शोध तथा साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में विविध लेख।

विशेष-अभिरुचि : दक्षिण भारतीय संस्कृति तथा साहित्य का विशेष अध्ययन। "दाक्षिणात्य हिन्दीतर सर्जनात्मक साहित्यकार और उनका साहित्य" विषय पर लखनऊ विश्वविद्यालय में डी० लिट्० हेतु कार्यरत।